श्रीः

श्री टीलाद्वारपीठनामक महागुजरात श्रीरामानन्दमहापीठ

संस्थापक श्री ११०८

जगद्गुरु श्रीमङ्गलदासजीमहामुनीन्द्र विरचित

श्रीमङ्गलशिक्षाम्बुधि



प्रकाशक—महन्त श्री भगवानदासजी

संशोधक—स्वामी श्रीवैष्णवाचार्य वेदान्ततीर्थ

प्रति १००० | श्रीरामानन्द जयन्ती ता १२-१ ५८ ई | मूल्य २)

प्रकाशक—महन्तश्री भगवान्दासजी
गुरुश्रीरामदयालदासजी
मु धनसूरा.
वाया तलोद (गुजरात)

मुद्रक
जीवणलाल पुरुषोत्तमदास पटेल
रिचीरोड पुल नीचे
ढीकवानी वाडी-अमदावाद.

श्री सीतारामाभ्यां नम ।

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम' ।

भूमिका

ब्रह्मसूत्रविधातार महर्षिं राममन्त्रदम् ।
पाराशर्यमह वन्दे वेदव्यास जगद्गुरुम् ॥१॥

पुरुषोत्तमनामान महर्षिं ज्ञानवारिधिम् ।
श्रीमद्बोधायन वन्दे वृत्तिकार जगद्गुरुम् ॥२॥

आनन्दभाष्यकर्तारमानन्दपथदर्शकम् ।
आनन्दनिलय वन्दे रामानन्द जगद्गुरुम् ॥३॥

यतीन्द्र ब्रह्मतत्वज्ञं भक्तिद धर्मरक्षकम् ।
भाष्यमर्मविदं वन्दे टीलाचार्यं जगद्गुरुम् ॥४॥

जगन्मङ्गलकर्त्तार मङ्गलाम्बुनिधि तथा ।
वन्दे महामुनीन्द्र श्रीमङ्गलार्यं जगद्गुरुम् ॥५॥

आज भारतदेश तथा हिन्दूधर्मके प्रधान सरक्षक श्रीसम्प्रदायके प्रधानाचार्य आचार्यसम्राट् आनन्दभाष्यकार श्री ११०८ भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज यतिराजकी जयन्तीका दिवस है ।

भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीके पूजन एव कथाकीर्त्तनके व्यापक महोत्सवसे आज समस्त भारत व्याप्त हो रहा है। सर्वदिशा मगलवाद्यध्वनि तथा जयध्वनिसे गूज उठी है। इसका कारण है कि विशाल भारत देशके प्रत्येक पवित्र तीर्थ प्रत्येक प्रान्त प्रत्येक मण्डल (जिला) तथा प्रत्येक नगर (शहर)मे जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजीके अनुयायी श्रीवैष्णवमहानुभाव एव मठमन्दिर विशालसख्यामे विद्यमान हैं। वसुन्धराके प्रत्येक खण्डोमे श्रीरामानन्दसम्प्रदायके ग्रन्थोका प्रचार है। विश्वमान्य ग्रन्थ श्रीरामचरितमानस (तुलसीकृत रामायण) के रचयिता कविसम्राट आचार्य कुलशिरोमणि श्री ११०८ गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराज तथा भक्तमालके कर्त्ता श्री ११०८ जगद्गुरु श्री नाभाचार्यजी महाराज श्रीरामनन्दसम्प्रदाय के ही देदीप्यमान रत्न हैं।

जन्मभूमि

आनन्दभाष्यकार भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज निखिल ब्रह्माण्डनायक परिपूर्णब्रह्म भगवान् श्रीरामजीके अवतार हैं। श्री नारदपञ्चरात्रकी वैश्वानरसहिता अगस्त्यसहिता तथा श्री वाल्मीकि सहिता इत्यादि ग्रन्थ उक्त कथनमें प्रमाण हैं। जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजीका जन्म स १३५६ वि के माघकृष्ण ७ (गुजराती हिसाब से पौष कृष्ण ७)को तीर्थराज श्रीप्रयागराजमे कान्यकुब्ज ब्राह्मण वशमे हुआ था। उनके पिताका नाम श्रीमान् पुण्यसदनशर्मा तथा माताका नाम श्रीमती सुशीलादेवी था। मातापिता बहुत धनाढ्य थे।

उपनिषद्भाष्यकार स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी महाराज

वेदान्ततीर्थ

गुरु श्रीमहन्त श्रीरामप्रतापदासजी महाराज



ऋणदेवडी-श्री राममन्दिर

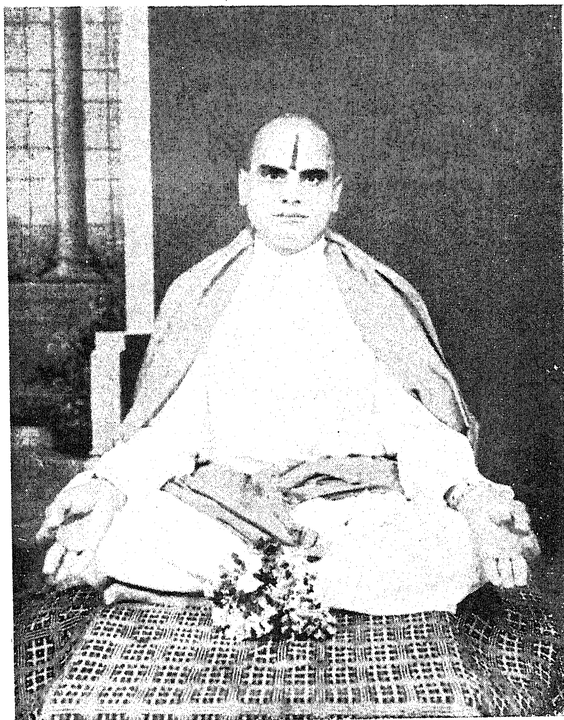
शारंगपुर दर्वाजा बाहर (पुलनीचे)

अहमदाबाद.

श्री वैष्णवभूषण महन्त श्रीभगवानदासजी महाराज

गुरु महन्त श्रीरामदयालदासजी महाराज

स्थान श्रीरामजी मन्दिर-धनसूरा



बाबा पुरुषोत्तमदास की टेकरी

जम्बूसर (गुजरात) (जिला भडौंच)

अत. श्री रामानन्दजन्मोत्सव बड़ी धूमधामसे मनाया गया। अद्‌भुत प्रतिभाशाली भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीकी वाल्यावस्था भी बहुत चमत्कारपूर्ण है।

अध्ययन तथा दीक्षाग्रहण

बाराणसी (काशी=बनारस)में पुण्यसलिला भगवती भागीरथीके रमणीय पञ्चगगाघाट पर श्रीमठनामक एक श्रीवैष्णवमठ था। वह पीछे से श्री रामानन्दमठके नामसे प्रसिद्ध हुआ। वर्त्तमान समयमें भी वह पुण्यभूमि श्रीरामानन्दपादुका (पचगगाघाट)के नामसे प्रसिद्ध है। उसके अध्यक्ष आचार्यशिरोमणि महाविद्वान् स्वामी श्रीराघवानन्दजी महाराज थे। प पुण्यसदनजी यज्ञोपवीत होनेके अनन्तर इन्हीं त्रिदण्डी स्वामीश्री राघवानन्दजी महाराजके समीप श्रीरामानन्दजीको अध्ययनके लिये विनयपूर्वक छोड गये। अद्वितीय स्मरणशक्ति और प्रतिभा होनेके कारण थोडेही दिनोंमें श्रीरामानन्दजी वेदवेदान्तादि सम्पूर्ण शास्त्रोंमे निष्णात हो गये। शास्त्रार्थमे काशीविजयाकाक्षासे समागत विद्वान् उनसे परास्त होने लगे। पुत्रको देखनेकी इच्छासे पिता श्री पुण्यसदनजी काशी आये। तब जगद्‌गुरु श्री राघवानन्दजीने श्रीरामानन्दजीसे कहा कि "अब तुम बडे विद्वान् होगये। अब पिताजीके साथ घर जाओ और गृहस्थाश्रम स्वीकार करो।" परन्तु परमवैराग्यवान् श्रीरामानन्दजीने मानवता भारतदेश हिन्दूजाति और वैदिक श्रीवैष्णव धर्मकी रक्षाके लिये जीवनपर्यन्त विरक्त रहना ही स्वीकार किया।

जगद्‌गुरु श्री राघवानन्दजीने वैदिक वैष्णवविधिसे श्रीरामानन्दजीको तारकमन्त्रराज षडक्षर श्रीराममन्त्रकी दीक्षाके साथ त्रिदण्ड सन्यास दिया। आकाशसे देवदुन्दुभि ध्वनिके साथ पुष्पवृष्टि हुई और काशीमें दिगन्तव्यापी जयजयकार हुआ।

महादिग्विजय

श्री ११०८ जगद्‌गुरु श्रीराघवानन्दाचार्यजीने श्रीरामानन्दजी की विद्वत्ता सम्प्रदायनिष्ठा वैराग्य लोकोपकार और वैदिकधर्मरक्षणके अद्वितीय उत्साह और शक्तिको देखकर उन्हें विधिपूर्वक आचार्य सिंहासनारूढ किया और मठ तथा सम्प्रदायका सम्पूर्ण अधिकार सौंप दिया।

आचार्य सिंहासनासीन भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीने देश और धर्मके रक्षणकी बहुत सुन्दर व्यवस्था बनाई। श्रीवैष्णवधर्मकी वैदिकता पवित्रता और सार्वभौमताके व्यापक प्रचारके लिये सैकड़ों विरक्त शिष्य बनाये। आचार्य सम्राट श्रीरामानन्दाचार्यजीने महादिग्विजय यात्राके क्रमसे समस्त भारत बर्षमें पर्यटन किया। जिसमें स्वभिन्नमतानुयायी अभिमानी अनेक विद्वानो और दुष्टसिद्धोको परास्त कर प्रेमसे हृदय लगाया। गृहस्थ विरक्त राव रङ्क ऊच नीच विद्वान् अविद्वान् योगी तपस्वी कर्मकाण्डी ज्ञानी सिद्ध और अनाथ करोडोकी सख्यामें नतमस्तक होकर भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यके चरणकमलोके आश्रित बने तथा पवित्र श्रीवैष्णवधर्मकी दीक्षा ग्रहणकर अपने जन्मको सफल बनाये। सभी सच्चे अहिसा और शान्तिके पुजारी तथा जीवमात्रके

प्रेमी बने एव लौकिक तथा पारलौकिक सुखके अधिकारी बने। विश्वमें पवित्र वैष्णवधर्मकी विजयवैजयन्ती लहराई। भगवान् श्री रामानन्दाचायजी नाममात्रके नही किन्तु वास्तविक जगद्गुरु बने। आचार्यपादकी महादिग्विजययात्रा बडी चमत्कारपूर्ण है। आपके विशाल प्रचारसे धर्मकी सनातनमर्यादाका पूर्णतया सरक्षण हुआ। प्राणीमात्र के लिये मोक्षका द्वार खुल गया। आपका यह महान् उपदेश दिगन्त व्यापी बना कि– "केवल यागादिकर्म और केवल ज्ञान मोक्ष नही दे सकते। किन्तु भगवान्‌की भक्ति और शरणागतिही मोक्षके लिये सरल और रामबाण उपाय है।" श्री ११०८ जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महामुनीन्द्रने श्रीरामानन्दावतारकी आवश्यकताका श्रीमगलकवितावलीमे और श्री रामानन्दमहादिग्विजयका श्रीमङ्गलगीतावलीमे सक्षेपसे बहुत सुन्दर उल्लेख किया है।

सम्प्रदाय

भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीके सम्प्रदायका नाम **श्रीसम्प्रदाय** है। श्रीरामानन्दाचार्यजीने यह नया सम्प्रदाय नहीं चलाया। किन्तु सृष्टिसे भी पूर्वमे जीवोंके कल्याणार्थ अनन्त करुणासिन्धु भगवान् श्रीरामजीने षडक्षर श्रीराममन्त्रराजका उपदेश प्रथम श्रीजीकी भी श्री श्रीजानकीजीको दिया। श्रीसीताजीने श्रीहनुमान्‌जीको उन्होने ब्रह्मा-जीको ब्रह्माजीने वशिष्टजीको श्रीराममन्त्रका उपदेश दिया। इस प्रकार यह श्रीसम्प्रदाय सृष्टिसे भी प्रथमका है अत· सर्वसे प्राचीन सम्प्रदाय

है । इस सम्प्रदायका नाम श्रीसम्प्रदाय इस लिये है कि जीवको (नित्य-जीव श्रीहनुमानजीको) सर्वप्रथम श्रीराममन्त्रका उपदेश श्रीपदवाच्य जगज्जननी श्री जानकीजीने (श्रीजीने) दिया है । इस सम्प्रदायका दूसरा नाम **श्रीरामानन्दसम्प्रदाय** है । जिसका कारण यह है कि आनन्दभाष्यकार श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी यतीन्द्र इस सम्प्रदायके प्रधान आचार्य हुए हैं । इसलिये यह सम्प्रदाय उनके नामसे विख्यात हुआ ।

सम्प्रदाय-परम्परा

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजीने स्वनिर्मित गीताके आनन्दभाष्यके मङ्गलाचरणमें अपने श्री सम्प्रदायकी परम्परा लिखी है । वह इस प्रकार है—

श्रीरामं जनकात्मजामनिलजं वेधोवशिष्ठावृषी
योगीशं च पराशरं श्रुतिविदं व्यासं जिताक्षं शुकम् ।
श्रीमन्तं पुरुषोत्तमं गुणनिधिं गंगाधराद्यान् यतीन्-
श्रीमद्राघवदेशिकं च वरदं स्वाचार्यवर्यं श्रये ॥२॥

अर्थ-श्रीरामजी श्रीजानकीजी श्रीहनुमान्जी ब्रह्मा वशिष्ट ऋषि योगीश्वर पराशर वेदवित् श्रीव्यासजी जितेन्द्रिय शुकदेवजी गुणनिधि श्रीमान् पुरुषोत्तमाचार्य तथा गगाधराचार्य इत्यादि यतिराजो और अपने आचार्यवर्य श्रीमद् राघवानन्दजीका मैं आश्रय (अवलम्बन) करता हूं ।

जगद्गुरु श्रीमङ्गलार्य महामुनीन्द्रने भी स्वनिर्मित मङ्गलकविता-वलीमें अपने श्रीरामानन्दसम्प्रदायकी परम्पराको प्रणाम किया हैं। वह इस प्रकार—

करुणानिधान राम जानकी औ हनूमान्
ब्रह्मा औ वशिष्ट पराशर व्यासाचार्यको
शुक पुरुषोत्तम बोधायन औ गगाधर
सदानन्दाचार्य आदि परम्पराचार्यको।
श्रीराघवानन्द तथा भाष्यकार जगद्गुरु
रामानन्दाचार्य औ अनन्तानन्दाचार्यको
मगल नमत कृष्णदास टीलाचार्य आदि
सहजरामाचार्य तक सर्व निजाचार्यको ॥१॥

श्रीअग्रद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठके सस्थापक श्री १ १ ० ८ जगद्गुरु श्री अग्रदेवाचार्यजी महाराजने भी श्री रामानन्द सम्प्रदायकी यही परम्परा लिखी है। वह सस्कृतमें है।

श्रीमद्वाल्मीकिसंहितामें भी श्रीराममन्त्रदानकी पराम्परा उक्त प्रकारके आचार्य वचनानुसार ही है। अत. नीचे लिखी हुई परम्परा ही रामनन्दसम्प्रदायकी प्रामाणिक परम्परा है–१ सर्वेश्वर श्री रामजी २ सर्वेश्वरी श्री जानकीजी ३ श्री हनुमान्जी ४ ब्रह्माजी ५ वशिष्ठजी ६ पराशरजी ७ ब्रह्मसूत्रकार श्री व्यासजी ८ शुकदेवजी ९ बोधायन-

वृत्तिकार श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी बोधायन १० गंगाधराचार्य ११ सदानन्दाचार्य १२ रामेश्वरानन्द १३ द्वारानन्द १४ देवानन्द १५ श्यामानन्द १६ श्रुतानन्द १७ चिदानन्द १८ पूर्णानन्द १९ श्रियानन्द २० हर्यानन्द २१ श्रीराघवानन्द २२ आनन्दभाष्यकार अनन्तश्री जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज यतिराज ।

कुछ लोग कहते हैं कि—"श्रीरामानन्दाचार्यजी श्रीरामानुजाचार्यजीकी परम्परामें हुए हैं ।" परन्तु उन लोगोका कथन नितान्त मिथ्याही है । क्योकि ऊपरमे दिखाया जा चुका है कि गीताके आनन्दभाष्यमे भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीने अपनी आचार्यपरम्परा लिखी है जो श्रीरामानुजाचार्यकी परम्परासे भिन्न है । जगद्गुरु श्री अग्रदेवाचार्यजी तथा जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी और वाल्मीकिसहिताके वचनोसे भी रामानन्दपरम्परा और रामानुजपराम्परा दोनो पृथक् पृथक ही सिद्ध होती हैं एक नही ।

श्रीरामानुज सम्प्रदायमे परात्पर ब्रह्म नारायण है । मुख्य उपासना श्री लक्ष्मीनारायणजी की है । भोजन स्नान तथा शयनके समय तुलसीकी कण्ठी उतार देते है तथा मोक्षके लिवे मुख्य दीक्षा अष्टाक्षर श्रीनारायणमन्त्रकी दीजाती है। परन्तु श्रीरामानन्दसम्प्रदायमे परात्परब्रह्म भगवान् श्रीरामजीको ही मानते है । मुख्य उपासना श्रीसीतारामजीकी है । तुलसीकण्ठी अथवा तुलसीमणि (हीरा) कण्ठमे सर्वदा धारण किया जाता है । भोजनादि समयमें उतार नही देते । तथा मोक्षके लिये

प्रधानदीक्षा मन्त्रराज षडक्षर श्रीराममन्त्रकी दी जाती है। इन व्यवहारोसे भी सिद्ध होता है कि श्रीरामानन्दसम्प्रदाय और श्रीरामानुज सम्प्रदाय दोनो भिन्न भिन्न सम्प्रदाय हैं एक नही ।

विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त

विशिष्टाद्वैतही सबसे प्राचीन तथा सर्वोत्तम वेदान्तका सिद्धान्त है । इस परम वैदिक सिद्धान्तमे भेद तथा अभेद प्रतिपादक श्रुतियोका तथा सभी स्मृति इतिहास पुराणादि शास्त्रोका सुन्दर समन्वय हो जाता है । कोई भी तर्क इस सिद्धान्तको काट नही सकता है। श्रीवाल्मीकि सहितामे महर्षियोने श्रीवाल्मीकीजीसे पूछा है कि—"मुमुक्षुओके उपादेय विशिष्टाद्वैत सिद्धान्ताभिमत तीन तत्त्वोको हम लोग सुनना चाहते है। कृपा कर आप कहें ।" इस लिये महर्षियोका अभिमतभी विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त ही है ।

भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी प्रखर वेदान्ती थे । उन्होने प्रस्थान त्रयपर तीन भाष्य रचे है । एक उपनिषदो पर आनन्दभाष्य दूसरा ब्रह्मसूत्रोपर आनन्दभाष्य और तीसरा गीता पर आनन्दभाष्य । श्री वैष्णवमताब्जभास्करनामक ग्रन्थ भी स्वानुयायियोको सक्षेपमे स्वसिद्धान्त बतलानेके लिये लिखा है। जिसके प्रथम प्रकरणको **श्रीरामानन्द कृत वेदान्तसार** भी कहते है ।

भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीने अपने पूर्वाचार्य बोधायन वृत्तिकार जगद्गुरु श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी बोधायनके विशिष्टाद्वैत सिद्धान्तको ही

माना है। उन्होने आनन्दभाष्यमें कहा है कि–"इस प्रकार तिस्मृति इतिहास और पुराणोके सामञ्जस्य होने और उपपत्तिके बलसे इस ब्रह्ममीमासाशास्त्रका विशिष्टाद्वैतही विषय है केवलाद्वैत नही।" (आनन्दभाष्य १।१।१)

इसलिये यह कहना उचित नही है कि–"श्रीरामानन्दाचार्यजी श्रीरामानुजाचार्यके विशिष्टाद्वैत सिद्धान्तको मानते थे। इसलिये वे श्री रामानुज सम्प्रदायके थे।" क्योकि श्रीरामानन्दाचार्यजीने अपने पूर्वाचार्य महर्षि बोधायनजीके विशिष्टाद्वैत सिद्धान्तको ही माना है। उन्होने श्री रामानुजाचार्यका अनुसरण नही किया।

प्रधानाचार्यका अनुसरण करते हुए जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजीने भी कहा है कि–**वैदिकमत विशिष्टाद्वैत**। इन्होने विशिष्टाद्वैत मतानुकूल तत्त्वज्ञान "जीवन सफल तबही होय।" इस पदद्वारा बहुत सुन्दर रीतिसे सक्षेपमे कहा है।

विशिष्टाद्वैत शब्दार्थ

विशिष्टाद्वैतशब्दका अर्थ है कार्य और कारण ब्रह्मकी एकता। नाम और रूप विभागके अयोग्य सूक्ष्मचित् और अचित्से विशिष्ट ब्रह्मको कारण ब्रह्म कहते है। तथा नाम और रूपके विभागके योग्य चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्मको कार्य ब्रह्म कहते हैं। इन दोनो कार्य और कारण ब्रह्मके अभेदको विशिष्टाद्वैत कहते हैं। तात्पर्य यह है कि सृष्टिपर्वमे स्थित

कारण ब्रह्मही कार्यब्रह्म (स्थूल जगत्) रूप होता है। यह ध्यानमे रखना चाहिये कि ब्रह्म सदैव निर्विकारही रहता है। स्थूलावस्थामे विकार तो चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्मके विशेषणाशमे ही होता है।

श्री टीलाद्वारपीठनामक महागुजरात श्री रामानन्दमहापीठके संस्थापक श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीमगलदासजी महाराज महामुनीन्द्रके इस **श्रीमंगलशिक्षाम्बुधि** नामके दिव्य ग्रन्थके मुद्रापणका आरम्भ श्रीमगलाचार्य जयन्ती आश्विन शुक्ल १० विजया दशमीको हुआ है। और आज श्रीरामानन्दाचार्यजयन्तीको इसका प्रकाशन हो रहा है। यह बडे हर्षकी बात है। क्योकि राष्ट्रभाषा हिन्दीमें श्रीरामानन्दसम्प्रदायके सिद्धान्तोका प्रकाश करनेवाला यह अद्वितीय ग्रन्थ है।

जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्यकृत इस **श्रीमगलशिक्षाम्बुधि** ग्रन्थमे सात तरग है।

१—प्रथम मगलाचरण तरग हैं। जिसमें विघ्ननिवारणार्थ श्रीरामजी श्रीजानकीजी श्रीहनुमान्जी श्रीरामानन्दाचार्यजी श्रीटीलाचार्यजी गुरुपरम्परा श्रीगुरुदेव तथा सन्तोकी वन्दना पूर्वक ग्रन्थारम्भ की प्रतिज्ञा है।

२—द्वितीय श्रीवैष्णव सिद्धान्तसारनामक शिक्षाचालीसा तरग है। इसमें हिन्दीके ४० रोला छन्दोमें विरक्त तथा गृहस्थ वैष्णवोको सक्षेपमे श्रीरामानन्दसम्प्रदायकी उत्तम शिक्षा दी गई है।

३—तृतीय शिक्षाचिन्तामणिनामक श्रीमंगलपचाशिका तरग है। इसमे ५० सवैया छन्दोमे भक्ति ज्ञान और वैराग्यकी उत्तमशिक्षा है।

४—चतुर्थ शिक्षामणिशतकनामक श्रीमगल दोहावली तरंग है। इसमें १०० दोहोमे वैराग्य नीति और सन्त महिमा आदि उत्तम विषय वर्णित हैं।

५—पञ्चम शिक्षामुक्तावलीनामक श्रीमगलवत्तीसी तरग है। इसमे ३२ कुडलिया छन्दोमें उक्त विषय वर्णित है ।

६—षष्ठ शिक्षारत्नमालानामक श्रीमंगलकवितावली तरग है। इसमें १०८ कवित्तोमे उक्त विषय वर्णित है । इसमे विशिष्टाद्वैतसिद्धान्तानुकूल जीवईश्वरका भेद तथा जगत्का सत्यत्व बहुत सुन्दर रीतिसे समझाया गया है। अन्तमे अर्थपचकका भी निरूपण किया गया है। सन्तमहिमा सत्य अहिसा श्रीरामनाममहिमा तथा श्रीरामानन्दाचार्यावतारकी आवश्यकताका बडा सुन्दरवर्णन है ।

७—सप्तम विनयशिक्षानिधिनामक श्रीमगलगीतावली तरग है। इसमे उक्त विषय ७५ गीतोमे वर्णित हैं ।

श्रीमगलाचार्यजी महाराजका यह ग्रन्थ वास्तवमे शिक्षाका समुद्र ही है। कठिन विषयोका मैंने हिन्दीमे अनुवाद कर दिया है। जिससे वे सरलतासे समझमे आजावे।

मैंने इस ग्रन्थमें प्रारम्भमे कुछ स्तोत्रोका सग्रह तथा अन्तमे कुछ आवश्यक श्रीरामानन्दसाम्प्रदायिक निबन्धोका सग्रह जोड दिया है। जो आवश्य पठनीय तथा मननीय है। कठिन प्रबन्धोका हिन्दी अनुवाद भी किया गया है।

शास्तापुर तथा भडेरी पोल (कालूपुर–अहमदाबाद) नरसिंह मन्दिरके महान्त स्वामीश्री पुरुषोत्तमदासजी श्रीवैष्णवभूषण महाराजने मुझे इस ग्रन्थके संशोधन तथा धनसूरा और जबूसरके महान्त श्री भगवान्‌दासजीको इस ग्रन्थ के प्रकाशित करनेके लिये उत्साहित किया। महन्तश्री भगवान्‌दासजी बडे उत्साही और उदार नवयुवक महन्त है और श्री मगलदासजी महाराजके खालसा (डाकोर) के कुशल कार्यकर्त्ता हैं। वे डाकोर खालसेके श्रीमहन्त श्री १ १ ० ८ जगद्‌गुरु श्री सरयूदासजी महाराज श्रीमगलमहापीठाधीश (डाकोर)के शिष्यवर्य महन्तरत्न श्री रामदयालदासजी महाराज (धनसुरा तथा जबूसर–गुजरात)के योग्य शिष्य है। महन्त श्रीभगवान्‌दासजीने श्री टीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति श्री १ १ ० ८ जगद्‌गुरु श्रीरामनारायणदासजी महाराज वर्त्तमानश्रीमगलमहापीठाधीशसे अनुमति लेकर इस दुर्लभ और परमावश्यक ग्रन्थरत्नका प्रकाशन किया है। तदर्थ उक्त सर्वमहानुभावोको सहस्रश. धन्यवाद है।

श्रीरामानन्दजयन्ती
ता. १२-१-५८ई०
रविवार

निवेदक–
स्वामीश्री वैष्णवाचार्य वेदान्ततीर्थ
त्रणदेवडी-श्रीराममन्दिर
शारंगपुर दर्वाजा बाहर
अहमदाबाद–२

सूचीपत्रम्



विषय	पृष्ठ

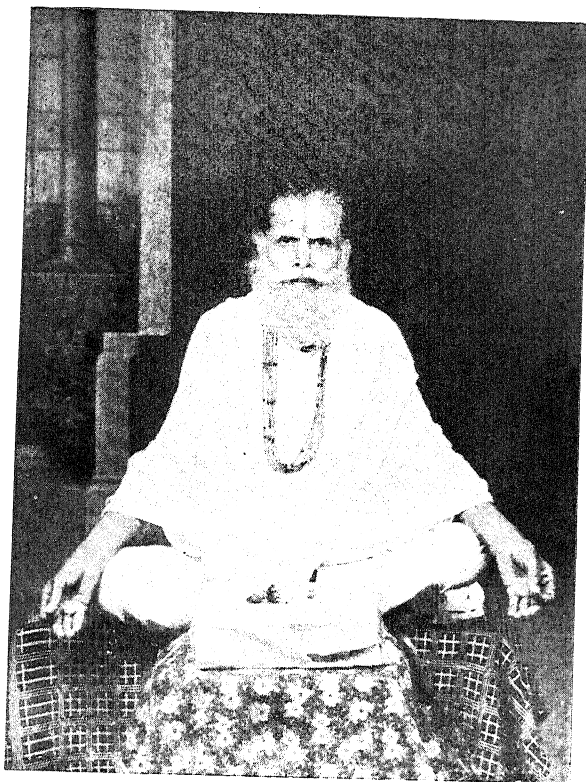
श्रीटीलाद्वारपीठ नामक महागुजरात श्रीरामानन्दपीठाचार्य
श्री मङ्गलमहापीठाधीश श्री मङ्गलदासजी खालसा (डाकोर)
के श्रीमहन्त आचार्य शिरोमणि श्री ११०८ श्रीमहन्त

श्रीरामनारायणदासजी महाराज



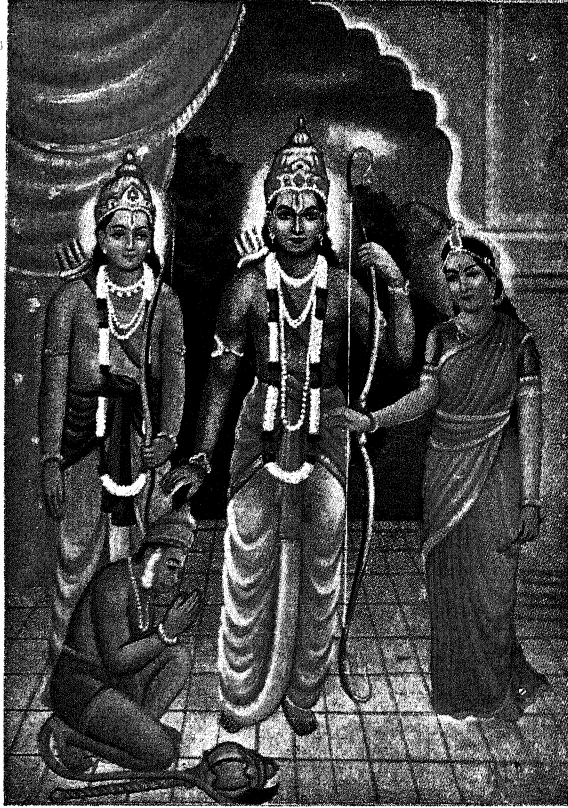
महागुजरात श्री रामान्दमहापीठ
श्री दाऊजी का मन्दिर
डाकोर-जिला खेडा.

श्री वैष्णवभूषण महन्त श्रीपुरुषोत्तमदासजी महाराज
गुरु महन्त श्रीसेवादासजी महाराज ।
स्थान शास्तापुर



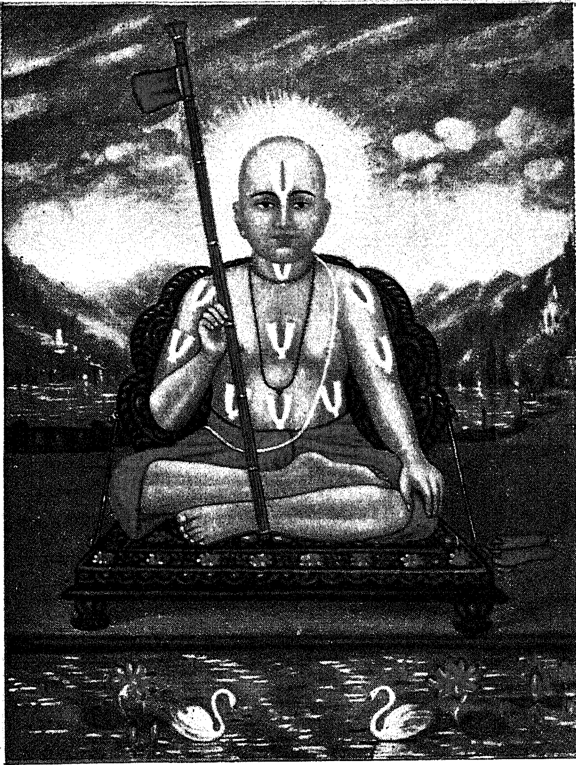
श्री नरसिंहजीका मन्दिर-भण्डेरी पोल,
कालूपूर—अहमदाबाद.

सर्वेश्वर श्रीसीतारामजी



दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे तु जनकात्मजा ।
पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम् ॥

आचार्यसम्राट - भारतोद्धारक - आनन्दभाष्यकार
श्री ११०८ श्री रामानन्दाचार्यजी यतिराज



आनन्दभाष्यकर्त्तारमानन्दपथदर्शकम् ।
आनन्दनिलयं वन्दे रामानन्दं जगद्गुरुम् ॥

बोधायनवृत्तिकारजगद्गुरुश्रीपुरुषोत्तमाचार्यनामक

महर्षिश्रीबोधायनप्रणीतं

प्रपत्तिषट्कम्

रामिति बीजवान् नाथ! मन्त्रराजो हि तारकः ।
तं जपामि तव प्रीत्यै पाहि मां पुरुषोत्तम ! ॥१॥

राम ! दीनोऽनुकूलोऽहं विश्वस्तोऽप्रातिकूल्यवान् ।
त्वयि न्यस्यामि चात्मानं पाहि मां पुरुषोत्तम ! ॥२॥

मामनाथं स्वशेषं च त्वदर्थं न्यासितं त्वया ।
निर्भरं स्वभरत्वेन पाहि मां पुरुषोत्तम ! ॥३॥

यस्मिन् देहेऽहमानीतः कर्मणा स्वेन राघव ! ।
तदन्ते देहि सायुज्यं पाहि मां पुरुषोत्तम ! ॥४॥

न गतिर्जानकीनाथ ! त्वां विना परमेश्वर ! ।
परां गतिं प्रपन्नं त्वां पाहि मां पुरुषोत्तम ! ॥५॥

मोहितो मायया तेऽहं दैव्या गुणविशिष्टया ।
शरण्यं त्वां प्रपन्नोऽस्मि पाहि मां पुरुषोत्तम ! ॥६॥

बोधायनमहर्षिश्रीपुरुषोत्तमनिर्मितम् ।
प्रपत्तिषट्कमेतच्छ्रीभक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।



श्री सीतारामाभ्यां नम ।

श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीदेवानन्दाचार्यप्रणीतं

श्रीराघवाष्टकम्

भवाब्धिं प्रभो दुस्तरं दुःखपूर्णं
श्रितास्त्वां परेशं सुखेनोत्तरन्ति ।
इदं सुप्रसिद्धं ततस्तारकं त्वां
अये राघव सच्चिदानन्दरूपम् ॥१॥

सहायो जराजन्मनाशे न यज्ञो
निधानं न विद्या बलं चापि नाथ ! ।
न दारा न वा दारको मे ततस्त्वां
अये राघवं सच्चिदानन्दरूपम् ॥२॥

त्वमेवासि वित्तं च विद्या त्वमेव
त्वमेवासि माता पिताऽपि त्वमेव ।
त्वमेवासि हे नाथ मर्वं मम त्वां
अये राघवं मच्चिदानन्दरूपम् ॥३॥

नभश्चानिलस्त्वं त मेवानलोऽपि
त्वमम्भः क्षमाम्भोनिधिः क्ष्मा त्वमेव ।
त्वमन्तर्वहिर्नाथ ! विश्वात्मकं त्वां
अये राघवं मच्चिदानन्दरूपम् ॥४॥

समुत्पादकं पालकं नाशकं च
त्वमेवास्य विश्वस्य हेतुस्त्रिधापि ।
न भक्त्या विना ते च मुक्तिस्ततस्त्वां
श्रये राघवं सच्चिदानन्दरूपम् ॥५॥

अदोषो गुणाब्धिः परिच्छेदशून्यो
वतारी परः सर्वविद् वेदवेद्यः ।
त्वमेवासि लोकैकनाथस्ततस्त्वां
श्रये राघवं सच्चिदानन्दरूपम् ॥६॥

त्वदीया स्मृतिस्तारिका मृत्युसिन्धो-
स्तथा विस्मृतिः पातिका तत्र चैव ।
परं योगिनां हार्दमालम्बनं त्वां
श्रये राघवं सच्चिदानन्दरूपम् ॥७॥

सकृत् त्वां प्रपन्नाञ्जनान् शार्ङ्गधारि-
न्नभीतान् सदा सर्वतस्त्वं करोषि ।
अतस्त्वामभीतिप्रदं सत्यसन्धं
श्रये राघवं सच्चिदानन्दरूपम् ॥८॥

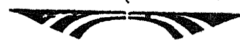
द्वारानन्दार्यशिष्यश्रीदेवानन्दार्यनिर्मितम् ।
अष्टकं राघवप्रीत्या सर्वश्रेयो विधायकम् ॥९॥



डाकोरस्थ श्रीटीलाद्वारपीठनामकश्रीरामानन्दमहापीठसंस्थापक
श्री ११०८ जगद्‌गुरुश्रीमङ्गलाचार्यप्रणीतं

श्रीसीतारामाष्टकम्

अनुरूपौ मिथः प्रेममयौ प्राणमयौ निधी ।
प्रीतिप्रदौ च सर्वज्ञौ सीतारामौ गतिर्मम ॥१॥
मिथश्चित्तस्थितौ शश्वन्मिथश्चाभिन्नरूपिणौ ।
कार्यकारणरूपौ च सीतारामौ गतिर्मम ॥२॥
विशिष्टौ चिदचिद्भयाञ्च शिष्टौ श्रुतिकदम्बकैः ।
मिथोऽनपायिनौ नित्यौ सीतारामौ गतिर्मम ॥३॥
आधारौ सर्वलोकानां सर्वलोकनियामकौ ।
भजतां मुक्तिकर्त्तारौ सीतारामौ गतिर्मम ॥४॥
अनुकूलौ श्रितानाञ्च प्रतिकूलौ श्रितद्विषाम् ।
नीलपीतदुकूलौ च सीतारामौ गतिर्मम ॥५॥
महानिधी दरिद्राणामनाथानां महाश्रयौ ।
योगिनाञ्च महाध्येयौ सीतारामौ गतिर्मम ॥६॥
सितासितविधातॄणां सितासितफलप्रदौ ।
सत्यौ सितासितौ रम्यौ सीतारामौ गतिर्मम ॥७॥
विभू परतरावर्च्यौ गुणाब्धी दोषवर्जितौ ।
जगद्धेतू शरण्यौ च सीतारामौ गतिर्मम ॥८॥
सदाचार्यसुरेन्द्रश्रीमङ्गलाचार्यनिर्मितम् ।
सीतारामाष्टकञ्चैतत् सर्वमङ्गलकारकम् ॥९॥



श्रीरामानन्दमहापीठनामक श्रीमङ्गलमहापीठाधीश श्री ११०८
जगद्गुरुश्रीभरतदासमहामुनीन्द्रप्रणीतं

श्रीभरताग्रजाष्टकम्

हे जानकीश वरसायकचापधारिन्
हे विश्वनाथ रघुनायक देवदेव ।
हे राजराज जनपालक धर्मपाल
त्रायस्व नाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥१॥

हे सर्ववित् सकलशक्तिनिधे दयाब्धे
हे सर्वजित् परशुरामनुत प्रवीर ।
हे पूर्णचन्द्रविमलानन वारिजाक्ष
त्रायस्व नाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥२॥

हे राम बद्धवरुणालय हे खरारे
हे रावणान्तकविभीषण कल्पवृक्ष ।
हे पद्मजेन्द्रशिववन्दितपादपद्म
त्रायस्व नाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥३॥

हे दोषशून्य सुगुणार्णव दिव्यदेहिन्
हे सर्वकृत् सकलहृच्चिदचिद्विशिष्ट ।
हे सर्वलोकपरिपालक सर्वमूल
त्रायस्व नाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥४॥

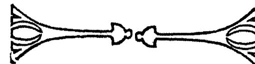
हे सर्वसेव्य सकलाश्रय शीलसिन्धो
हे मुक्तिद प्रपदनाद् भजनात्तथा च ।
हे पापहृत् पतितपावन राघवेन्द्र
त्रायस्व नाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥५॥

हे भक्तवत्सल सुखप्रद शान्तमूर्त्ते
हे सर्वकर्मफलदायक सर्वपूज्य ।
हे न्यूनकर्मपरिपूरक वेदवेद्य
त्रायस्वनाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥६॥

हे जानकीरमण हे सकलान्तरात्मन्
हे योगिवृन्दरमणास्पदपादपद्म ।
हे कुम्भजादिमुनिपूजित हे परेश
त्रायस्व नाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥७॥

हे वायुपुत्रपरितोषित तापहारिन्
हे भक्तिलभ्य वरदायक सत्यसन्ध ।
हे रामचन्द्र सनकादिमुनीन्द्रवन्द्य
त्रायस्व नाथ भरताग्रज दीनबन्धो ॥८॥

श्रीमद्भरतदासेन मुनिराजेन निर्मितम् ।
अष्टक भवतादेतत् पठतां श्रेयसे सताम् ॥



७

सर्वेश्वरपञ्चकम्

हे साकेतपते चराचरपते लोकेश सीतापते
ब्रह्मन् ब्रह्मशिवेन्द्रवन्दितपद ब्रह्माण्डभृद् ब्रह्मकृत् ।
हे निर्दोष गुणाम्बुधेऽखिलसुहृद् हे बद्धपाथोनिधे
हे श्रीराम जनाभिराम भगवन् सर्वेश्वर त्राहि माम् ॥१॥

हे मार्तण्डकुलारविन्दतरणे मारीचसंमृत्युकृद्
लङ्केशान्तक हेविभीषणसुहृद् हे सिन्धुना संस्तुत ।
हे गोब्राह्मणसाधुरक्षक विभो हे जानकीहर्षकृद्
हे श्रीराम जनाभिराम भगवन् सर्वेश्वर त्राहि माम् ॥२॥

स त्वं यः स्वपदाब्जदिव्यरजसाऽहिल्याविपन्मोचकः
पादाम्भोजजलेन सर्वजगतां पापौघविध्वंसकः ।
तद्वद् यो निजरामनामजपतां संसारसन्तारको
हे श्रीराम जनाभिराम भगवन् सर्वेश्वर त्राहि माम् ॥३॥

त्वं दूरे मनसस्तथा च तमसः पारे परे संस्थितः
पीयूषादिमती च वासवपुरी त्वां गच्छतो दुर्गतिः ।
त्वत्तश्चास्य सुजन्मजीवनलया विश्वस्य सिद्धान्तिता
हे श्रीराम जनाभिराम भगवन् सर्वेश्वर त्राहि माम् ॥४॥

त्वं सन्तोषमुपैषि राघव परं स्वल्पेन सत्कर्मणा
दत्से मोक्षमथो सकृत्प्रपदनाद् धर्माद्यपेताय च ।
भक्तानामघसंहतिं स्मरसि नो स्वामिन् कदाचित् पुन-
र्हे श्रीराम जनाभिराम भगवन् सर्वेश्वर त्राहि माम् ॥५॥

वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मितम् ।
एतच्च पञ्चकं भूयात् सर्वकल्याणकारकम् ॥

श्रियः श्रियै नम ।

श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीश्रियानन्दाचार्यप्रणीतं

श्रियः श्रियः प्रपत्तिषट्कम्

समस्तलोकप्रभवामदोषां महाम्बुधिश्चामितसद्गुणानाम् ।
अजादिदेवार्चितपादपद्मां श्रियः श्रियं भूमिसुतां प्रपद्ये ॥१॥

मुखप्रभानिर्जितशारदेन्दुं विशालनीलाम्बुजतुल्यनेत्राम् ।
तडिल्लतामञ्जुलदिव्यदेहां श्रियः श्रियं भूमिसुतां प्रपद्ये ॥२॥

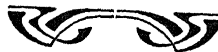
जनान् प्रपत्तिं परिशिक्षयन्तीं पत्ये प्रपन्नांश्च निवेदयन्तीम् ।
श्रिताय कल्याणततिं सृजन्तीं श्रियः श्रियं भूमिसुतां प्रपद्ये ॥३॥

हिमाहिमांशुप्रभतीन् पदानां विभासयन्तीं नखरप्रभाभिः ।
स्वयम्प्रकाशां निगमावगम्यां श्रियः श्रियं भूमिसुतां प्रपद्ये ॥४॥

विभुप्रियामाश्रितदुःखहन्त्रीं विभुस्वरूपां जगतो नियन्त्रीम् ।
विभूषितां सद्विभवैश्च दिव्यैः श्रियः श्रियं भूमिसुतां प्रपद्ये ॥५॥

परात्पराश्चातिपवित्रभावां सुमुक्तिदामाश्रितकल्पवल्लीम् ।
दयामयीं निग्रहवृत्तिशून्यां श्रियः श्रियं भूमिसुतां प्रपद्य ॥६॥

प्रपत्तिषट्कमेतच्छ्रीश्रियानन्दार्यनिर्मितम् ।
भूतानां भूतये भूयाद् भूमिजायाः प्रसादतः ॥



उपनिषद्भाष्यकारस्वामिश्रीवैष्णवाचार्य
वेदान्ततीर्थप्रणीतं

श्रीजनकजाशरणाष्टकम्

या सर्वलोकजनिपालननाशकर्त्तुः
प्राणप्रिया रघुवरस्य दयैकसिन्धोः ।
विभ्वी तथा च विभु वैभवशालिनी सा
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥१॥

या सर्वदानिषु मणिर्भवदुःखहर्त्री
या सर्वदा जनहितेऽभिरता गुणाब्धिः ।
सा सर्वदा हि निगमागमवेद्यरूपा
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥२॥

दुष्कर्मधर्ममपसार्य दधाति धर्मं
या चात्र वत्सलतया स्वजने सदा सा ।
माता समस्तजगतां च रमादिहेतुः
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥३॥

याऽनुग्रहैकजलधिश्च सुखप्रसूतिः
सृष्टिस्थिती च विलयो हि यदीक्षणेन ।
पारुष्यहीनपुरुषोत्तम वल्लभा सा
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥४॥

बन्धो यदीयपदपद्मविमोचनाद्वै
मोक्षो यदीयपदपद्मसमाश्रयेण ।
सा मोक्षदा भगवती सुषुमैकसिन्धुः
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥५॥

तृष्णां परामुपगतस्य निषिद्धकर्त्तुः
संसारसिन्धुपतितस्य पथश्च्युतस्य ।
आर्त्तस्य भक्तिमतिशून्यजनस्य शोकैः
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥६॥

आपद्गतार्त्तिशमनी दमनी त्वघानां
सर्वर्द्धिसिद्धिकरणी धरणीसुता या ।
दिव्यैश्च देहगुणधामजनैर्युता सा
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥७॥

यत्कीर्त्तनात् परमकीर्त्तनमत्र नो वै
यत्पूजनात् परमपूजनकश्च नास्ति ।
सा पद्मजादिसुरवन्दितपादपद्मा
सर्वेश्वरी जनकजा शरणं ममास्तु ॥८॥

वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मिता ।
पठतां श्रेयसे भूयादेतद्धि शरणाष्टकम् ॥



श्रीहनुमते नम ।

डाकोरस्थ श्रीरामानन्दमहापीठसंस्थापक श्री ११०८ जगद्गुरु
श्रीमङ्गलाचार्यमहामुनीन्द्रनिर्मितं

श्रीप्राभञ्जनाष्टकम्

यश्चण्डदीधितिसहस्रसुकर्कमर्कं
सन्तर्क्य दिव्यतरुमिष्टफलं मनस्वी
जग्राह जन्मसमये कृपया मुमोच
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥१॥

यस्याप्रमेयबलबुद्धिनिधेः प्रसादा-
दासाद्यसख्यमरिदर्पहरः कपीन्द्रः ।
सायुज्यमाप यशसा सह राघवस्य
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥२॥

येनेत्यभाणि खलुदम्भविजृम्भमाण-
कुम्भं च मेघमहमादिश नाथ सीताम् ।
तूर्णं विचूर्ण्य दशमौलिमिहानयामि
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥३॥

मेरुः किमेष? नहि पक्षभृदस्ति सोऽपि
सूर्यो न तस्य गमनं दिशि दक्षिणस्याम्
तिर्यग्गतिर्न तु शिखी च य इत्यतर्कि
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥४॥

ज्ञात्वाप्यहो सपदि मित्रजितं बलेन
सौमित्रिरप्रतिभटं समरेषु धीरम् ।
मित्रं चकार यममित्रजयाय धीमान्
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥५॥

रे वानराऽयि विमते ? न हि हैहयोऽस्मि
मन्दोसि भो स तु गिरिन्नु रामदूतम् ।
नो वेत्सि मामिति वचो य उवाच चित्रं
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥६॥

हस्तैर्निजैरपि शिरांसि निकृत्य योसा-
वुद्धृत्य शङ्करनगं न च मोहमाप ।
मुष्ट्या मुमूर्छ स तु यस्य शशंस वीर्यं
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥७॥

यश्चाश्रयो हि सुधियां निधिरार्जवस्य
संसारिणां करुणयाऽखिलदुःखहारी ।
यस्मै ददौ जनकजा शुभराममन्त्रं
स श्रीप्रभञ्जनजनुर्जनतां समव्यात् ॥८॥

सदाचार्यसुरेन्द्रश्रीमङ्गलाचार्यनिर्मितम् ।
प्राभञ्जनाष्टकं भूयात् प्राभञ्जनस्य तुष्टये ॥९॥



उपनिषद्भाष्यकारस्वामिश्रीवैष्णवाचार्य

वेदान्ततीर्थविरचितं

श्रीवानरेन्द्राष्टकम्

नमस्तेऽञ्जनानन्दसंवर्धकाय
प्रपन्नार्त्तिनाशे गृहीतव्रताय ।
हरामङ्गलं मङ्गलं संविधाय
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥१॥

कुमन्त्रग्रहप्रेतबाधां निरस्य
श्रियं देहि देहं त्वरोगं विधेहि ।
नमामि त्वदीयं मुदा पादपद्मं
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥२॥

कपीशं च कप्यासनेत्रं व्रतीन्द्रं
मतौ त्वाञ्च वेगेऽद्वितीयं नमामि ।
यथाऽऽरीप्सयेयं तथा संविधेयं
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥३॥

महावीर मे वीरतां त्वञ्च दत्त्वा
महाधीर सद्धीरतां सम्प्रदेहि ।
अभीष्टञ्च मे देह्यनिष्टं निवार्य
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥४॥

सहस्रांशुतुल्यप्रभ श्रीहनूमन्
गदाभृत् सदा रामकैङ्कर्यनिष्ठ ।
स्वदासस्य मे सर्वपीडां हर त्वं
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥५॥

बलस्याम्बुधे लक्ष्मणप्राणदातः
सुधीः शक्तिमज्जानकीशोकहर्त्तः ।
गुणानां निधे राघवप्रीतिपात्र
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥६॥

महामोहकोपादिकं नाशयित्वा
सुविद्यां बलं रामभक्तिश्च देहि ।
खलप्राणहृद् दीनलोकैकबन्धो
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥७॥

सदा कीर्त्तने रामनाम्नः प्रवृत्तं
भवात् तारकं तारकं सम्प्रदाय ।
नतोऽहं च सीतापतिप्रेमदं त्वां
प्रसीद प्रभो मारुते वानरेन्द्र ॥८॥

वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मितम् ।
वानरेन्द्राष्टकं भूयात् सर्वाभीष्टार्थपूर्त्तये ॥



श्रीसीतारामाभ्या नम ।

आनन्दभाष्यकारजगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्याय नमः ।

उपनिषद्भाष्यकारस्वामिश्रीवैष्णवाचार्यवेदान्ततीर्थप्रणीतं

श्रीरामानन्दाष्टकम्



न योगो नो यागः प्रभवति महामोहहनने
न वा ज्ञानं दानं बलमपि न वा बन्धुनिवहः ।
समर्थस्तत्रापि प्रथित इह यद्वाक्यनिचयः
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥१॥

सुरम्ये यद्भाष्ये नयनपथगे दोषरहिते
विवर्त्ते दुर्गर्त्ते पतनभयलेशो न विदुषाम् ।
मतिः सांख्यैस्तर्कैर्भवति न कदाचिद्विचलिता
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥२॥

यदीया सद्वाचो विविधविषयैर्मूढमनुजं
विधातुं देवानामपि गुरुमिहात्यन्तचतुराः ।
शलाका वा सिद्धा निगमनिहितार्थप्रकटने
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥३॥

यदीयाः सद्दण्डाः शरणरहितानां शरणदा
यदीये पादाब्जे विनतजनवाञ्छासुरतरू ।
यदीयश्चालम्बः सकलभवबन्धप्रशमनं
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥४॥

यदीयश्चोद्देश्यं जनविसरदुःखापहरणं
यदीयश्चादेशो जनकतनयानाथशरणम् ।
विशुद्धं यत्कृत्यं सततमिह लोकोपकरणं
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥५॥

मनोज्ञा यत्कान्ती रतिपतिमहादर्पदमनी
कृपादृष्टिर्यस्य प्रणतजनतापप्रशमनी ।
सुधावद् यद्वाणी निखिलजगदामोदजननी
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥६॥

यदीयः सिद्धान्तो विमलधिषणानां सुखकरः
श्रुतीनां युक्तीनां विविधविधबाधेन रहितः ।
विशिष्टाद्वैताख्यः कुमतिमतपक्षप्रविजयी
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥७॥

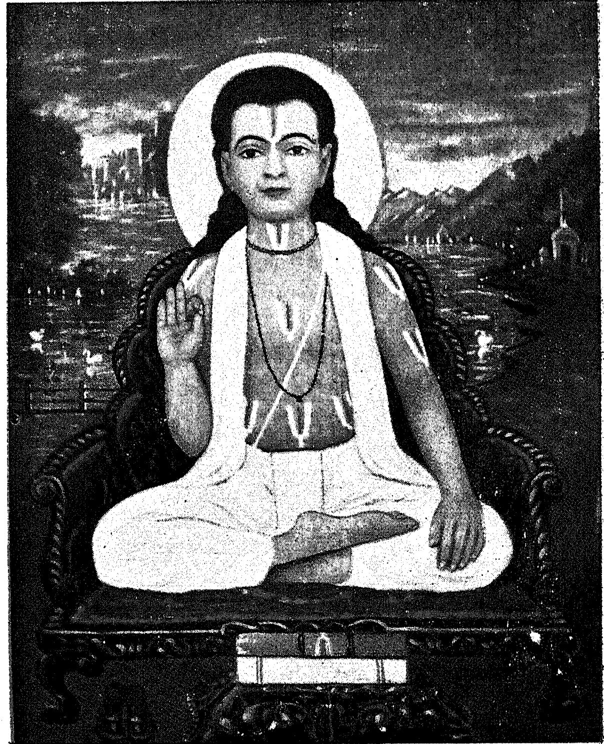
विचित्रा यद्गाथा श्रवणसुखदाऽभीष्टफलदा
सुहृद्या चाविद्यामलहृदनवद्या त्रिपथगा ।
यशस्वी योगीशः शमिदमियतीनां क्षितिपतिः
प्रभू रामानन्दः स मम हृदयाब्जे विलसतु ॥८॥

वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मितम् ।
रामानन्दाष्टकञ्चेदं भूयादाचार्यतुष्टये ॥९॥



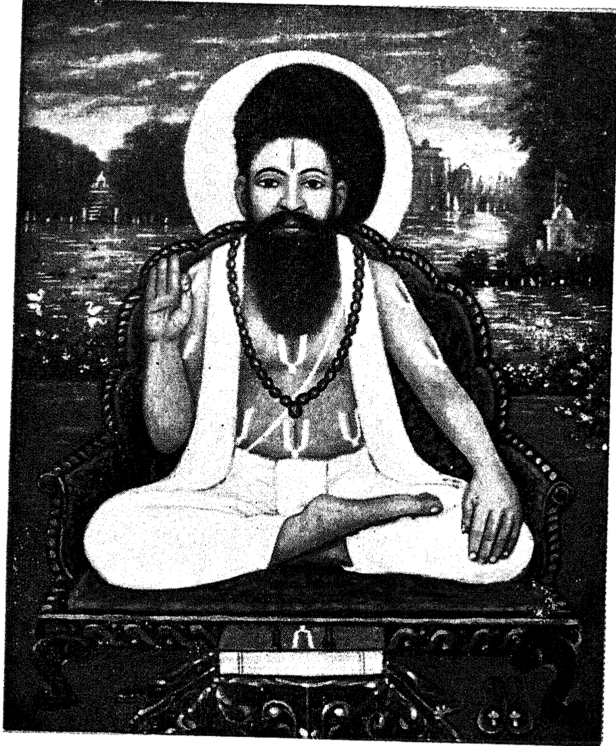
श्री टीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाचार्य

श्री ११०८ श्री टीलाचार्यजी यतिराज



यतीन्द्रं ब्रह्मतत्त्वज्ञं भक्तिदं धर्मरक्षकम् ।
भाष्यमर्मविदं वन्दे टीलाचार्यं जगद्गुरुम् ॥

श्री टीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाचार्य
श्री १००८ श्री मङ्गलाचार्यजी महामुनीन्द्र



जगन्मङ्गलकर्त्तारं मङ्गलाम्बुनिधिं तथा ।
वन्दे महामुनीन्द्रं श्रीमङ्गलार्यं जगद्गुरुम् ॥

श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीमदनन्तानन्दाचार्यप्रणीतं

श्रीयतीन्द्राष्टकम्

नमो भगवते श्रीमत्सुशीलानन्ददायिने ।
राघवानन्दशिष्याय यतीन्द्राय नमो नमः ॥१॥

नमो भगवते श्रीमत्सूनवे पुण्यसद्मनः ।
आचार्यसार्वभौमाय यतीन्द्राय नमो नमः ॥२॥

नमो भगवते श्रीमद्रामानन्दाय धीमते ।
आनन्दभाष्यकाराय यतीन्द्राय नमो नमः ॥३॥

नमो भगवते श्रीमद्वैष्णवधर्मरक्षिणे ।
विजेत्रेऽनन्तसिद्धानां यतीन्द्राय नमो नमः ॥४॥

नमो भगवते श्रीमद्रामभक्तिप्रचारिणे ।
सम्प्रदायाब्धिचन्द्राय यतीन्द्राय नमो नमः ॥५॥

नमो भगवते श्रीमद्विशिष्टाद्वैतवादिने ।
वादिवारणसिंहाय यतीन्द्राय नमो नमः ॥६॥

नमो भगवते श्रीमद्रामाय गुणसिन्धवे ।
तीर्थराजेऽवतीर्णाय यतीन्द्राय नमो नमः ॥७॥

नमो भगवते श्रीमद्वेदतत्त्वार्थभाषिणे ।
निगमागमरक्षित्रे यतीन्द्राय नमो नमः ॥८॥



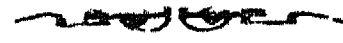
श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीनरहर्यानन्द (श्रीनरहरिदास) प्रणीतं

श्रीअनन्तानन्दाष्टकम्

सम्प्रदायाधिपं मुख्यं स्वाचार्यं श्रीमठेश्वरम् ।
अनन्तानन्दनामान भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥१॥
रामानन्दयतीशस्य ज्येष्ठं शिष्य यतीश्वरम् ।
अनन्तानन्दनामानं भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥२॥
आनन्दभाष्यवेत्तारं विजेतारञ्च वादिनाम् ।
अनन्तानन्दनामानं भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥३॥
विशिष्टाद्वैततत्त्वज्ञं योगिनं राममन्त्रदम् ।
अनन्तानन्दनामानं भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥४॥
शिक्षया श्रेष्ठया श्रीमद्वैष्णवधर्मरक्षकम् ।
अनन्तानन्दनामानं भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥५॥
दिव्यभक्तेः प्रदातारं जानकीजानकीशयोः ।
अनन्तानन्दनामान भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥६॥
लोकपञ्चाशिषा सर्वलोकनाथस्य दर्शकम् ।
अनन्तानन्दनामानं भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥७॥
प्राज्ञसिद्धनृपालेशैः सेवितं परश्रद्धया ।
अनन्तानन्दनामानं भक्त्या वन्दे जगद्गुरुम् ॥८॥
श्रीनरहरिदासेन देशिकेन्द्रेण निर्मितम् ।
पठतामष्टकं भूयादनन्तानन्ददायकम् ॥

पण्डितराजस्वामिश्रीमाधवाचार्यकाव्यतीर्थप्रणीतं

श्रीटीलाचार्याष्टकम्



भवाम्भोधेः पोतं विमलमतिभाजां सुमनसां
सुभाष्यञ्चानन्दं श्रुतिवचनयुक्तर्कलसितम् ।
सनाथं यश्चक्रे ललितसुरवृक्षेण महता
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥१॥

अतर्क्ये तर्केणाऽलममलगुणेशे रघुपतौ
यतश्चैकं शास्त्रं भवति किल मानं भगवति ।
इति श्रौतोद्घोषो जयति जयिनो यस्य भुवने
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥२॥

सुखासीनं प्रस्थे स्फटिकमिव शुभ्रं स्वमहसा
तृतीयं सच्छास्त्रं नयनमतिदीप्तं च दधतम् ।
तपोनिष्ठं भेजे गिरिशमिव यं सिद्धिनिचयो
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥३॥

विधाता धातेव व्रतिजनभुवः श्लाघ्यचरणो
धुरीणः सद्धर्मस्य मनुरिव मार्गं जनयताम् ।
मदस्योद्भेत्ता यो हरिरिव विपक्षस्थकरिणां
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥४॥

तमो विध्वस्तं सज्जनहृदयपद्मैश्च हसितं
तिरोभूता भूताः कुमतिरजनीदक्षगतयः ।
विशिष्टाद्वैते सत्युदयति दिनेशे खलु यतो
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥५॥

हरन् क्षोण्या भारं मुनिवरमनोभिः सह च यो
नयन्नन्ते कीर्तिं विवदिषुकदम्बैः सह दिशाम् ।
उदाश्वद्राद्धान्तं सुजनपुलकैः सार्धमनिशं
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥६॥

सुधांशौ निर्दोषे स्फुटयति च सत्कैरवगणान्
ककुब्भागान् सर्वान् धवलयति कीर्त्यंशुपटलैः।
प्रजाते यस्मिन् वैष्णवकुलपयोधिश्च ववृधे
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥७॥

पयोहारी श्रीमान् सुरगुरुसमो यस्य च गुरुः
कृती कृष्णाचार्यः किमिति व पयःपानमकरोत् ।
प्रभावी मे शिष्यो धवलगुणसिन्धुर्भवतु वै
वशी टीलाचार्यः स मतिमतिसूक्ष्मां वितरतु ॥८॥

श्रीरामनारायणपादपद्माश्रितेन डाकोरनिवासिनेदम् ।
कृतं यथाबुद्धि हि माधवेन स तुष्यताम्प्रीतमना अनेन ॥



उपनिषद्भाष्यकारस्वामिश्रीवैष्णवाचार्यवेदान्ततीर्थविरचिता

श्रीटीलाचार्यपञ्चस्तवी

श्रेयःप्राप्तिकरी यशःसुखकरी चेतःसमुत्कर्षिणी
संसारादमनी यमार्त्तिशमनी व्यामोहविध्वंसिनी ।
दत्ता येन विदा हि सशयभिदा श्रीरामदिव्यौषधि-
ष्टीलाचार्यवरः स देवतरुकृज्जीयात् समाः शाश्वतीः ॥१॥

जयतु जयतु वादे वादिमत्तेभसिंहो
जयतु जयतु रामानन्दवंशाब्धिचन्द्रः ।
जयतु जयतु टीलाऽऽचार्यवर्यो यशस्वी
जयतु जयतु टीलाद्वारपीठाधिराजः ॥२॥

जीवाञ्छुष्यत्सस्यवत् सन्निरीक्ष्य
व्याख्याय श्रीभाष्यमानन्दसंज्ञम् ।
मुक्त्यानन्दावर्षिणं वारिदं श्री-
टीलाचार्यं वर्णिनं नित्यमीडे ॥३॥

अज्ञानकोकोदरदष्टलोकाः संरक्ष्य शिक्षासुधया हि येन।
संस्थापिता निर्भयरामपादे टीलाऽऽर्यवर्यः सततं स जीयात् ॥

जानकीजानकीकान्तकान्तपादाब्जषट्पदम् ।
सुरद्रुमकृतं वन्दे टीलाचार्यं जगद्गुरुम् ॥५॥
वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मिता ।
एषा पञ्चस्तवी भूयाद्विश्वभूतविभूतये ॥६॥

श्रीरामो विजयतेतराम् ।

उपनिषद्भाष्यकारस्वामिश्रीवैष्णवाचार्यवेदान्ततीर्थप्रणीतं

जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्यमहामुनीन्द्राष्टकम्

सद्विद्यातटिनीसुजन्मशिखरी चन्द्रश्च वेदाम्बुधे-
स्तत्तद्वादिकुतर्कघोररजनीनाशे तु यो भास्करः ।
संसाराध्वविधावनश्रमजुषां विश्रामदायिद्रुमः
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवरः कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥१॥

शश्वच्चेह यदीयपद्धतिजुषां शुद्धा मतिर्जायते
यत्पादाब्जसमाश्रितस्य यमुनाभ्रातुर्भयं नो भवेत् ।
श्रीसीतारघुनाथपादजलजप्रीतिः समुत्पद्यते
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवरः कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥२॥

मुक्तानाञ्जननी यदीयकरुणागङ्गाऽघविध्वंसिनी
यद्ग्रन्थाः परिशीलिताः सुकुशलाश्चेतोभ्रमच्छेदने ।
सिद्धान्तः खलु यस्य वैदिकविशिष्टाद्वैतनामा जयी
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवरः कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥३॥

आनन्दाभिधभाष्यदेवतरुटीका मञ्जरीनामिका
येनाचार्यवरेण संविरचिता सत्यार्थसंलब्धये ।
व्याख्याकेलिकरेण येन हृदये धीचित्रमुच्चित्रितं
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवरः कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥४॥

संसारोरगसाध्वसं समवलोक्यात्राखिलप्राणिनां
मृत्योर्भीतिहरं सुखाकरवरं मुक्तिप्रदश्चाक्षयम् ।
श्रीमद्रामरसायनं करुणया योऽलौकिकं दत्तवान्
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवर कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥५॥

रामानन्दयतीन्द्रवंशजलधेः संवर्द्धकश्चन्द्रमा-
ष्टीलापीठपतिर्य उज्ज्वलमतिर्मौञ्जीधरो भूतिमान् ।
यन्मूर्धा सुजटोर्ध्वपुण्ड्रललितः कण्ठे च वृन्दामणिः
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवरः कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥६॥

गोमत्याश्च तटे महाद्युतिकरः सद्वैष्णवैः सेवितो
डाकोरे खलु खाकचौकसुमठो येन प्रतिष्ठापितः ।
सद्ग्रन्थस्तपसां निधिश्च भगवद्ध्याने रतः सिद्धिमान्
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवरः कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥७॥

सीताराघवपादपद्ममधुलिड्भावं सुखञ्चापय-
न्नार्त्तत्राणपरायणो जगति यो योगीन्द्रचूडामणिः।
भक्तिज्ञानविरागसिन्धुरनिशं वेदान्तचिन्तापरः
स श्रीमङ्गलदासदेशिकवरः कुर्यात् सदा मङ्गलम् ॥८॥

वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मितम् ।
मङ्गलाष्टकमेतद्धि मङ्गलाय सतां भवेत् ॥



पण्डितराज स्वामिश्रीवेङ्कटेश्वराचार्यवेदान्ताचार्यप्रणीतं

श्रीमङ्गलाचार्याष्टकम्

अस्मद्वन्द्यः प्रवरसहितः श्रीमदाचार्यवर्य्यो
भ्रान्तभ्रान्तेः सकलशकलध्वंसको मङ्गलेशः ।
रामानन्दप्रभुपथगतो मौञ्जधारी व्रती यो
योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्य्यवर्य्यः ॥१॥

अद्वैतं यच्चिदचिदयुतं नोदितं तन्न वेदे
ब्रह्मास्मीति श्रुतिपदमिदं जीवदेहात्मबोधे ।
मायावादभ्रमपदतमोभ्रान्तदिग्भास्करो यो
योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्य्यवर्य्यः ॥२॥

सत्प्रामाण्यैरतिरतिगिरा स्वीयसिद्धान्तवादं
रामादन्यत् परतरमिति व्यापकं ब्रह्म नास्ति ।
विस्तार्यैवं जगति महसा यो रराजात्मदर्शी
योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्यवर्यः ॥३॥

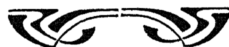
श्रीडाकोरेऽतिसुभगमठं साधुसेवापरश्च
नानाशिष्याननतिनतियुतानागमेषु प्रवीणान् ।
संस्थाप्यैवञ्च धरणितले दीप्यमानो मुनीन्द्रो
योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्य्यवर्य्यः ॥४॥

नान्यः पन्थाः प्रभुसुमिलने प्रेमरूपैव भक्तिः
पूर्वाचार्य्यश्रुतिमुनिमतं दर्शयन् योगभक्त्या ।
एवं वाग्मी सुमतिततिराड् राजराजेश्वरो यो
योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्य्यवर्यः ॥५॥

दुर्धर्षाणामघघनघटासङ्घटोद्घाटकेऽसौ
धर्मारूढो यवनवनजोत्सादने कर्मशीलः
पीठाधिष्ठः स्तवननमनैः सेव्यमानो मुनीन्द्रै-
र्योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्य्यवर्य्यः ॥६॥

सीताकान्तस्मरणरसिको रामपादाब्जभृङ्गो
लोकालोको रविरविजयी मुक्तिमार्गप्रकाशे ।
मन्यन्ते यं धवलयशसा भास्करश्चाऽपरं वा
योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्य्यवर्य्यः ॥७॥

मन्ये मेऽत्रारुचिदरचनां कीर्त्तनाद् यस्य पूतां
पुण्यात् स्तोत्रान्मलकलुषितं मानसं मे पुनीतम् ।
लीलावीजं जयति विजयी मायिनां वादयुद्धे
योगेशो मामवतु स सदा मङ्गलाचार्य्यवर्य्यः ॥८॥



उपनिषद्भाष्यकार स्वामिश्रीवैष्णवाचार्य वेदान्ततीर्थप्रणीतं

श्रीगुरुदेवप्रपत्त्यष्टकम्

विज्ञानदानकरणाय गृहीतदीक्षं
ज्ञानाम्बुधिं जगति देहभृतां शरण्यम् ।
शान्तिप्रद सकलविघ्नविनाशहेतुं
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥१॥

बोधांशुपक्षपरिशोभितनुश्च हेया-
हेयाम्बुदुग्धसुविभागविधौ विदग्धम् ।
प्रज्ञावताममलमानसराजहंसं
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥२॥

प्रारब्धवृष्टिसुविनाशितबोधसम्पत्-
प्रज्ञानवह्निकणलिप्सुचकोरचन्द्रम् ।
बोधामृतक्षरणशीलमयूखकान्तं
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥३॥

दुष्कर्मदस्युपरिलुण्ठितमानवानां
कल्पद्रुमं निखिलमोदनिधानहेतुम् ।
निस्सीमसद्गुणनिधिं निरवद्यरूपं
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥४॥

श्रीजानकीरमणपादसरोजभृङ्गं
घोरे विपत्तिजलधौ वरकर्णधारम् ।

शेषत्वरत्नपरिदर्शकदीनबन्धुं
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥५॥

यः श्रोत्रियो वरविरागिवरः सुशीलः
शिष्याय येन परतत्त्वमुदीरितं तम् ।
ब्रह्माख्यरामभुवनाधिपदिव्यनिष्ठ
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥६॥

अज्ञानघोरतिमिराहतलोचनानां
तेजःप्रदं सुधिषणाञ्जनसुप्रदानैः ।
संसाररोगहरणक्षमचारुवैद्यं
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥७॥

आयुर्विभूतिसुखसिद्धिसुबुद्धिवंशा
यत्पादपद्मनिरतस्य भवन्ति शश्वत् ।
कैङ्कर्यलक्षणविलक्षणमोक्षदं तं
कारुण्यसिन्धुगुरुदेवमहं प्रपद्ये ॥८॥

वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मितम् ।
प्रपत्तेरष्टकं भूयाद्विश्वभूतविभूतये ॥



आनन्दभाष्यकार श्री १९०८ जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य यतीन्द्रप्रणीत

श्रीसीतारामस्तवः

श्रीमन्तं श्रुतिवेद्यमद्भुत गुणग्रामाग्र्यरत्नाकरं
प्रेयः स्वेक्षणससुलज्जितमहीजाताक्षिकोणेक्षितम् ।
भक्ताशेषमनोभिवाञ्छितचतुर्वर्गप्रदस्वर्द्रुमं
रामं स्मेरमुखाम्बुजं शुचिमहानीलाश्मकान्ति भजे ॥१॥
ऐश्वर्यं यदपाङ्गसंश्रयमिदं भोग्यं दिगीशैर्जग-
च्चित्रं चाखिलमद्भुतं शुभगुणा वात्सल्यसीमा च या
विद्युत्पुञ्जसमानकान्तिरमितक्षान्तिः सुपद्मेक्षणा
दद्यान्नोऽखिलसम्पदो जनकजा रामप्रिया साऽनिशम् ॥२॥

स्वामिश्रीवैष्णवाचार्यवेदान्ततीर्थप्रणीतम्

आचार्यवन्दनम्

श्रीरामं वसुधात्मजामनिलजं वेधोवशिष्ठौ तथा
तातं व्यासमुनेः शुकेन सहितं व्यासं च बोधायनम् ।
श्रीगंगाधरदेशिकं वरसदाचार्यं च रामेश्वरं
द्वारं देवयुतं श्रुतार्यसहितं श्यामं चिदानन्दकम् ॥१॥
पूर्णानन्दयुतं श्रियार्यसहितं हर्यार्यवेदान्तिनं
त्रय्यन्तार्थविदं त्रिदण्डिषु मणिं श्रीराघवानन्दकम् ।
आनन्दाख्यसुभाष्यरत्नरचकं रामं महायोगिनं

उपनिषद्भाष्यकार स्वामिश्रीवैष्णवाचार्य वेदान्ततीर्थप्रणीता

श्रीरामनाममाला

परब्रह्म रघुनायक राम
दिव्यदेह गुणसागर राम।
विश्वमूल भवतारक राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥१॥

दशरथसुत सर्वेश्वर राम
गोहित साधुसुरक्षक राम।
सर्वाराध्य फलप्रद राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥२॥

मुनिमखरक्षक कर्ता राम
शिलोद्धारकृत् त्राता राम।
चापविभंजक हर्ता राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥३॥

भगवन् सीतावल्लभ राम
परशुरामजिद् राघव राम।
धीवरमित्र परेश्वर राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥४॥

भक्तिलभ्य मुनिपूजित राम
सर्वनिवास सर्वविद् राम।

लोकाधीश फलाशन राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥५॥
भरतस्तुत सुखदाता राम
सत्पालक खलघातक राम ।
धर्मपाल जनपावन राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥६॥
हतमारीच धनुर्धर राम
सुरदुर्लभ कपितोषित राम ।
व्यापक सेतुविधायक राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥७॥
अशरणशरण दयार्णव राम
दशमुखनाशक मुक्तिद राम ।
आश्रितपाल सुरस्तुत राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥८॥
अवतारिन् श्रुतिवन्दित राम
मङ्गलकर्त्ता राजन् राम ।
रामानन्द यतीश्वर राम
श्रीराम जय राम जय जय राम ॥९॥
वैष्णवभाष्यकारश्रीवैष्णवाचार्यनिर्मिता ।
श्रीरामनाममालेयं श्रेयोमालाप्रदायिका ॥

शुद्धिपत्रम्

०	पृ०	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	रामान्दा	रामानन्दा
८	६	घन	धन
९	५	चचल	चचल
०	१६	घामो	धामो
२	४	विविघ	विविध
३	७	शास्त्र	शास्त्र
३	१९	सियावर	सियवर
८	१२	घीर	धरि
०	१३	बाघत	बाधत
१	९	बन्घु	बन्धु
४	३	राख	राखै
०	१५	घन	धन
८	२१	निनाचार्य	निजाचार्य
५	१०	घूर	धूर
७	३	मार	भार
८	७	वाद	पाद
८	७	करेंगे	कहेंगे
२	१७	घोत्तम	षोत्तम

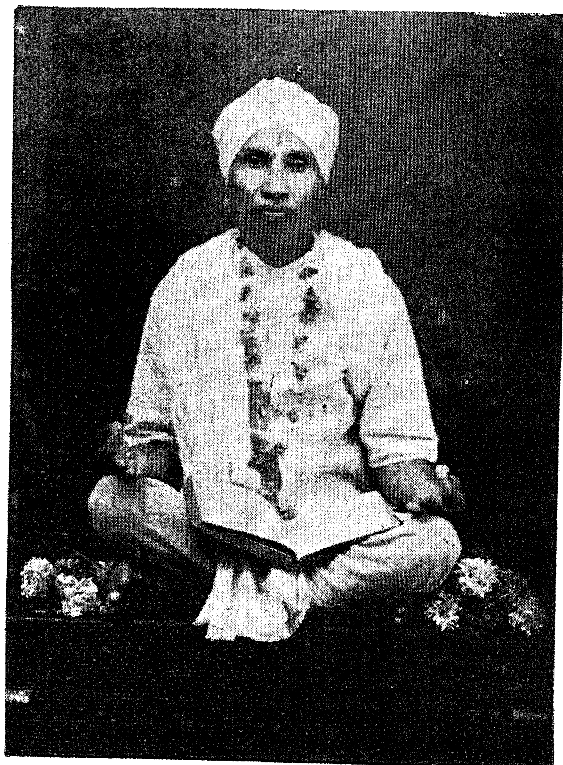
पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०८	११	अथना	अथवा
१२१	५	मय	भय
१५६	२०	नकाम	न काम
१८४	४	बिबुध	विबुध
१८३	१०	अषिय	अविषय
२००	७	बती	वती
२०१	२	बिषया	विषया
२०१	५	र्थ्यं	र्थ्य
२०७	१२	यैाँ	यैाँ
२१८	९	जज्ञ	यज्ञ
२२१	१०	चाय	चार्य
२२७	७	लख	लखै



दिगम्बरतड (अहमदाबाद) के श्री महन्त श्रीवैष्णवभूषण

महन्त श्री रामप्रतापदासजी महाराज

गुरु महन्त श्री हनुमानदासजी महाराज



त्रगदंवडी — श्री राममन्दिर

शारंगपुर दर्वाजा बाहर, पुल के नीचे,

अहमदाबाद.

श्रीवैष्णवभूषण महन्त

श्रीरामदयालदासजी महाराज

गुरु महन्त श्रीसरयूदासजी महाराज (दाउजी मन्दिर डाकोर)

स्थान- श्रीरामजीमन्दिर धनसूरा (वाया तलोद-गुजरात)



स्थान— बाबा पुरुषोत्तमदासकी टेकरी

जम्बूसर (जिला भडौंच)

श्री सीतारामाभ्यां नमः ।



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामान्दाचार्याय नमः ।
जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नमः। जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नमः।

श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति

श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र विरचित

मङ्गलशिक्षाम्बुधिः



प्रपत्तिपञ्चकम् ।

मूलं स्थावरजङ्गमस्य जगतो जन्मादिसम्पादकः
पूर्णं ब्रह्म गुणाम्बुधिर्भवहरः सर्वावतारी स्वराट् ।
मुक्तामुक्तसुरेश्वरैः श्रुतिगणैर्ब्रह्मर्षिभिः संस्तुतः
श्रीरामः सकलेश्वरः सकलवित् पायादपायात् सदा ॥१॥

स्थावर जङ्गमात्मक समस्त जगत्के मूल (उपादानकारण) और सृष्टि पालन तथा लय करनेवाले पूर्णब्रह्म गुणसागर जन्म मृत्यु हरण करनेवाले (मुक्तिदाता) सर्व अवतारोंके अवतारी (कारण) स्वराट् मुक्त तथा अमुक्त सुरेश्वरों श्रुतिगणों और ब्रह्मर्षियोंसे स्तुति किये गये सर्वज्ञ तथा सर्वेश्वर भगवान् श्रीरामजी सदा आपत्तिसे रक्षा करें ॥१॥

या विश्वार्तिहरी च विश्वजननी ब्रह्मादिदेवैः स्तुता
या विम्वी विभुवैभवा च विभुदा सौन्दर्यवारांनिधिः।
या रामस्य परात्मनो भगवतः प्राणप्रिया मुक्तिदा
सा सीता सकलेश्वरी भगवती पायादपायात् सदा ॥२॥

जो समस्त विश्वके दुखोंकी हरण करनेवाली विश्वजननी और ब्रह्मादि देवोंसे स्तुत हैं, जो विभु परिमाणवाली विपुल ऐश्वर्यवाली बहुतदेनेवाली और सौन्दर्य जलनिधि है तथा जो परमात्मा भगवान् श्री रामजीकी प्राणप्रिया और मुक्ति देनेवाली हैं वे सर्वेश्वरी भगवती श्री सीताजी सदा आपत्तिसे रक्षा करें ॥ २ ॥

भक्तिज्ञानबलाम्बुधिः करणजिद् भक्तिप्रदो विघ्नहा
वीराणां सुशिरोमणिः सुरनुतः श्रीराममन्त्रप्रदः ।
वज्राङ्गश्च मनोजवः पवनजः श्रीजानकीशोकहृद्
दासः श्रीरघुनायकस्य हनुमान् पायदपायात् सदा ॥३॥

भक्ति ज्ञान और बलके समुद्र इन्द्रियजित् भक्तिदाता विघ्नविनाशक

हृशदेहवाले मनके समान वेगवाले श्रीजानकीजीके शोकको हरनेवाले श्री रघुनाथजीके दास पवनपुत्र श्री हनुमान्जी सदा आपत्तिसे रक्षा करे ॥ ३ ॥

प्रस्थानत्रयभाष्यकृच्छुभविशिष्टाद्वैतसंरक्षकः
सिद्धप्राज्ञनृपालदेवनिचयैः संसेवितो योगिराट् ।
श्रीमद्वैष्णवधर्मपा गुणनिधिः श्रीरामभक्तिप्रदो
रामानन्दजगद्गुरुर्यतिपतिः पायादपायात् सदा ॥४॥

प्रस्थानत्रय अर्थात् उपनिषद् गीता और ब्रह्मसूत्र पर आनन्द भाष्य रचनेवाले सुन्दर विशिष्टाद्वैतसिद्धान्तके सरक्षक सिद्ध विद्वान् राजा और देववृन्दोसे सेवित योगिराज श्रीमद् वैष्णव धर्मके रक्षक गुणोंके भण्डार श्रीरामजीकी भक्ति देनेवाले यतिराज श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज सदा आपत्तिसे रक्षा करें ॥४॥

योगीन्द्रः श्रुतिधर्मरक्षकमणिः कारुण्यपाथोनिधिः
सीताराघवभक्तिदः सुरतरुः सिद्धैः समासेवितः ।
रामानन्दमताम्बुधेश्च परितः संवर्द्धकश्चन्द्रमाः
टीलाचार्यजगद्गुरुर्व्रतिपतिः पायादपायात् सदा ॥५॥

योगीन्द्र वैदिकधर्मरक्षकमणि करुणासागर श्रीसीतारामजीकी भक्ति देनेवाले कल्पवृक्ष सिद्धजनसेवित श्रीरामानन्दसिद्धान्तसागरके सवर्धक चन्द्रमा व्रतिराज श्री ११०८ जगद्गुरु श्री टीलाचार्यजी महाराज सदा आपत्तिसे रक्षा करें ॥५॥

श्रीमद्रामसमारम्भां रामानन्दार्यमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥ ६ ॥

जो भगवान् श्री रामजीसे प्रारम्भ हुई है और जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्यजी जिसके मध्यमे है तथा मेरे आचार्य (गुरुदेव) जिसके अन्तमें हैं उस गुरु परम्पराको मै प्रणाम करता हूँ ॥६॥

नत्वा सहजरामार्यं मुनिराज जगद्गुरुम् ।
शिक्षाम्बुधिमहं कुर्वे सर्वलोकहितावहम् ॥ ७ ॥

मै (जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र) श्री ११०८ जगद्गुरु श्री सहजरामाचार्यजी मुनिराजको नमस्कार करके सर्वलोगोके हितकर "मङ्गलशिक्षाम्बुधि" ग्रन्थको बनाता हूँ ॥ ७ ॥

वन्दौ श्री सियराम सुजननी जनक जगत्के ।
पद वन्दौं श्रीपवनतनय हनुमान् वरदके ॥
रामानन्दाचार्य जगदगुरु वन्दौं यतिपति ।
रचे भाष्य आनन्द करी जिन आनन्दित श्रुति ॥ १ ॥

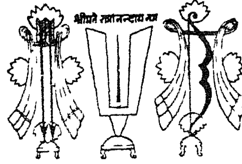
नमौ पुनः व्रतिराजराज टीलार्य जगद्गुरु ।
सहजरामदासार्य मुनीन्द्रहिं प्रणमौ निजगुरु ॥
भवजलनिधि वरतरनि सन्त पदपङ्कहिं उरधरि ।
शिक्षाम्बुधि शुभ रचौ विनयशिक्षा मणिनिधि भरि ॥२॥

इति मङ्गलाचरणम् ।

इति प्रथमः तरङ्गः ।



श्री सीतारामाभ्यां नम ।



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।

महागुजरात श्रीरामानन्द महापीठ संस्थापक श्री ११०८

जगद्गुरुश्री मङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र विरचित

श्रीवैष्णवसिद्धान्तसार:

अथवा

शिक्षाचालीसा

वेदवेद्य परिपूर्ण ब्रह्म श्रीसीतापतिको ।
सर्वजननि श्रीसीता औ मारुति कपिपतिको ॥
रामानन्दाचार्य जगद्गुरु यति सुरपतिको ।
तथा नमौं टीलार्य जगद्गुरु व्रतिनरपतिको ॥ १ ॥

सकल दुर्व्यसन त्यागि त्रिविध हिंसाको छोड़ै ।
दया दान उपकार करनसे मुँह नहिं मोड़ै ॥
क्षीर क्षरनि शुचि करनि धेनु पालहु हरि भावन ।
यज्ञ दान तप करहु करत जो जनको पावन ॥ ७ ॥

सुख दुख निजकृत भोग कोउ पर करिय न रोषहिं ।
जिमि करनी तिमि भोग सदा राखिय सन्तोषहिं ॥
क्षमाशील ह्वै सदा न्याय मारगसे चलिये ।
अन्यायी–अन्याय न कायर होकर सहिये ॥ ८ ॥

बनो गुणी बलवान् बनो मतिमानहु जगमें ।
कभी न कंटक बनो जगत्–जनके सुखमगमें ॥
कंटक जगके चुनत बिछावत सब जग फूलहिं ।
फूल सर्व थल मिलैं कंटकी लहैं त्रिशूलहिं ॥ ९ ॥

मायादामन संग जरत मदममतानलमें ।
सन्तसंग पीयूष मिलत हो शीतल पलमें ॥
माया छुवति न सन्त राम जिनके बल केवल ।
स्पर्श करत नहिं लेश यथा जल जलरुहके दल ॥१०॥

घटते मन–व्यापार करत संग साधु जननके ।
ईर्षा मद ममतादि दुरत सब दुर्गुण जनके ॥
तनु अभिमान न जात बिना मद ममता छूटे ।
ज्ञान उदित नहिं होत बिना तनु–अहमिति टूटे ॥११॥

बिन ज्ञानोदय भये विषयवैराग्य न आवै ।
तेहि बिन सिय सियनाथ चरण अनुराग न पावै ॥
सिय सियपति पद कमल अमल अनुराग बिना तिमि ।
जनहिं मिलति नहिं मुक्ति न घृत वर वारि मथे जिमि ॥१२॥

धनद सदृश धन जोरि राज सब भूपर थाप्यो ।
लहि विद्या सन्मान हृदय अभिमान न व्याप्यो ॥
चन्द्र चन्द्रिका सदृश कीर्तिसे जगमें राज्यो ।
अरि दल तम सम नाशि तेजसे रवि सम भ्राज्यो ॥१३॥

किये विविधविध यज्ञ दान विधि विधिके दीने ।
आशा पाशहिं तोरि दमित इन्द्रियगण कीने ॥
सुदृढ लगाइ समाधि समाहित चित बनाया ।
भस्माहुति सम सकल जन्मि यदि राम न गाया ॥१४॥

अणु चेतन नित जीव शरीरादिकसे न्यारा ।
विभु चेतन सर्वेश राम सबके आधारा ॥
जीव प्रकृति हरि–देह सत्य जग सिरजन साधन ।
कर्त्ता हर्त्ता राम सुखद तिनका आराधन ॥ १५ ॥

जीवहिं सब सुख हेतु रामका अनुचर जानै ।
सर्वात्मा सर्वज्ञ रामको स्वामी मानै ॥
ज्ञानी ज्ञानस्वरूप जीव सुखरूप सभी हैं ।
कर्मबन्दि भवसागरमें जो पडे दुखी हैं ॥ १६ ॥

कर्मयोग औ ज्ञान भक्ति उत्तम सुख साधन ।
अशुचि चित्त शुचि करै नित्य सन्ध्या–आराधन ॥
अति चंचल चित होत भोगते जगके भोगहिं ।
चचल चित थिर करन योगि गण साधत योगहिं ॥१७॥

सुनत विशिष्टाद्वैत सुगुरु करि अर्जत ज्ञानहिं ॥
चित्त द्रवै तव मुक्ति–हेतु बुध भक्तिहिं जानहिं ॥
प्रेमरूपता प्राप्त हुआ है ज्ञानहि भक्ति ।
भक्ति–मध्य ही भरी हुई भवतारन शक्ति ॥१८॥

भक्ति–भेद पुनि उभय साध्य औ साधन गुनिये ।
उभय भक्तिके रूप कहूँ चित देकर सुनिये ॥
"राम प्राप्तिमें रामहि साधन हैं" यह थिर मति ।
साध्य भक्ति है सोई रघुपतिकी शरणागति ॥१९॥

"राम प्राप्तिमें भक्तिहि साधन है" इमि जो मति ।
साधन भक्ति कहावति, तहँ उत्तम शरणागति ॥
कर्मयोग औ ज्ञान योगमें नर पा क्षमता ।
कर सकते नहिं कौनिउ विधि शरणागत समता ॥२०॥

रामहिं आत्मनिवेदन शरणागत जन करहीं ।
सदा रहैं अनुकूल कबहुँ प्रतिकूल न बनहीं ॥
'रक्षेंगे श्रीराम' हृदय विश्वासहु राखहिं ।
'पाहि माम' कहि सदा रामसे रक्षण मांगहिं ॥२१॥

सकल भाँति मैं दीन आप दीननके बन्धु ।
तारहु करुणा करहु राम करुणाके सिन्धु ।
साध्य भक्तिके उक्त पांच अंगनको गुनिये ।
सावधान हो साधन-अंगनको अब सुनिये ॥२२॥

शुचि विरक्त गुरुपादपद्मका आश्रय कीजै ।
मन्त्रराज श्रीराममन्त्रकी दीक्षा लीजै ॥
मन्त्ररत्न औ चरममन्त्र को लेहु अवश्यहि ।
गुनहु अर्थ सुनि तीन उक्त गुरुदत्त रहस्यहिं ॥२३॥

सकल भाँति श्रद्धासे गुरुसेवाको करिये ।
सुन्दर करि विश्वास दण्डवत् नित नित नमिये ॥
हरिभक्तनके भक्तिमार्गका आश्रित बनिये ।
पूछि भागवत धर्म हृदयसे संशय तजिये ॥२४॥

छोडहु राघवहेत भरतसम सब भोगोंको ।
दुखदायक सहमूल विनाशो भवरोगोंको ॥
वसहु चित्रकूटादि दिव्य तीरथ धामोंमें ।
रहो न अति अनुरक्त सदा लौकिक कामोंमें ॥२५॥

उपयोगी पुनि वस्तु लेहु यदि चलै नहीं तो ।
नाशैं नही विरक्ति करैं आसक्ति नहीं तो ॥
एकादशि व्रत करहु मानपूर्वक मनसे पुनि ।
सकल नियमको पालि कथा शुभ प्रेमसहित सुनि ॥२६॥

श्रद्धासे अश्वत्थ आदि वृक्षनको नमिये ।
भक्तिहरनि श्रीरामविमुख जन संगति तजिये ॥
अनधिकारयुत नरनारिनको मंत्र न दीजै ।
भक्ति विरोधी ग्रन्थवृन्द पर दृष्टि न कीजै ॥२७॥

भक्ति वाधकर दुष्कर्मौमें मन नहिं रखिये ।
योग्य जगत् व्यवहार मध्य कार्पण्य न करिये ॥
काम क्रोध मद शोक आदिके वश नहिं बनिये ।
निज-उपास्य अतिरिक्ति देव अपमान न करिये ॥२८॥

कबहुं न कोई जीव चित्त उद्वेगहिं करिये ।
नाम सन्त सेवाके अपराधनसे बचिये ॥
कबहुं न हरि हरिभक्तनकी निन्दाको सुनिये ।
तनुमे वैष्णव चिन्ह तिलक तुलसीमणि लसिये ॥२९॥

भुज मूलन में धनुर्बाण-मुद्राको लीजै ।
राम नाम शुभ वर्णौंसे तनु रंजित कीजै ॥
तनमें श्रीसिय राम निवेदित वस्तु पहिरिये ।
मनमें श्रीसिय राम भावते भावहि रखिये ॥३०॥

दण्ड सदृश पडि सियारामको नितही नमिये ।
प्रभुहिं देखि उत्थान करिय नहिं बैठा रहिये ॥
सियारामकी दिव्य सवारीमें पुनि जावो ।
नित्य प्रेमसे मन्दिरमें दर्शन करि आवो ॥३१॥

सियारामकी दिव्यमूर्तिका पूजन करिये ।
सुमिरत सीताराम प्रदक्षिण नितही फिरिये ॥
सियारामकी विविध भांति परिचर्या कीजै ।
गावत वाद्य बजावत प्रभुहिं हाजिरी दीजै ॥ ३२ ॥

निशिदिन गाइय रामनाम लीला यश गुणहू ।
करिये तारक राममंत्र षट्अक्षर जपहू ॥
गदगद ह्वै नित प्रेम भावसे विनती करिये ।
निगमागम आचार्य स्वनिर्मित स्तोत्रहु पढ़िये ॥३३॥

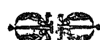
खाय पियै शुचि अन्न वस्तु सियराम निवेदित ।
हरिचरणामृत पान करै नित अमर होनहित ॥
चन्दन तुलसी लेय प्रभुहिं अर्पित पुनि गुनिके ।
प्रभु–विग्रह शुचि छुवै स्वयं अति पावन बनिके ॥३४॥

प्रभु–प्रतिमा नित देखि रेख विधिकी खोदेवै ।
आरति हरकी आरति लखि आरति को लेवै ॥
श्रवण करै सियराम नाम लीला यश गुणको ।
लखै कृपाकी वाट सुदृढ अवलम्बै उनको ॥३५॥

निखिल लोकपति सीतापति को नित्य सुमिरिये ।
कोटिकामजित् राम–गुणादिक ध्यानहु धरिये ॥
प्रभुहिं समर्पै अपने सबही शुभ कर्मनको ।
प्रभुका करि विश्वास सुदृढ राखै निजमनको ॥३६॥

सियरामहि को आत्म तथा आत्मीय समर्पै ।
निज निजीयजन भार सिया रघुवरको अर्पै ॥
सुख दुख सबही समय रहै सियराम चरणमें ।
सफल करै निज जन्म उभय सन्तोष करन में ॥३७॥
तुलसी तरुहिं लगाय सकल विधि करिये अर्चा ।
राम कीर्ति गुण धाम शास्त्रकी करिये चर्चा ॥
प्रीति परात्पर रामधाममें अतिही रखिये ।
पूजन करि श्रीवैष्णव जनकी सेवा करिये ॥३८॥
यथाशक्ति सियराम–महोत्सव सुन्दर कीजै ।
कार्त्तिक आदिक दिव्य मासमें आदर दीजै ॥
भगवत् औ आचार्य जयन्ती–उत्सव करिये ।
परम प्रेम सियराम मूर्त्ति–सेवामें रखिये ॥३९॥
मनन करिय श्रीसम्प्रदायके सद्ग्रन्थोंका ।
करिये सुन्दर संग साधु जन हरि भक्तोंका ॥
श्रद्धा पूर्वक रहै अवध मिथिला मण्डलमें ।
राखै नित अभ्यास सिया रघुवर कीर्त्तनमें ॥४०॥
शिक्षा चालीसा रचे मुनिवर मंगलदास ।
पढि सुनि सिय सियावर भजे पूर्ण होत सब आस ॥

इति द्वितीय तरंग. ।



श्री सीतारामाभ्या नम ।



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामान्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।

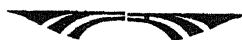
श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति

श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र विरचित

शिक्षाचिन्तामणिः

अथवा

श्रीमंगलपंचाशिका



हम जाने उदास भये अबतो कोउसे विगडै न औ ना बनिहै ।
पर लोभ मदादिक आइ अडैं अव जानि परै उनसे ठनिहै ॥
जगनातनको हम तोडि चुके हमको जगमें अब को गनिहै ।
परि पाँवमें मंगल मांगत है रघुनाथ ! निभायेहि से बनिहै ॥१॥

अति चंचल शीघ्र विकारकरै विसवास नहीं धनका मनका ।
जगके जनकी पुनि वात कहा विसवास नहीं अपने तनका ॥

बल बुद्धि विहाइके पाँव पडा अब नाथ! गहे मुखमें तिनका।
कर जोडिके मंगल मांगत है रघुनाथ ! निभाव करो जनका ॥२॥

न रमेश दिनेश गणेश महेश औ काली कराली मनावत हूं।
तुमरोही रहा रहिहौं तुमरो अबहूं तुमरोहि कहावत हूं ॥
करुणा करिके अपनाओ प्रभो ! तव पादमें माथ नमावत हूं।
मुख मंगल फेरे ठिकान नहीं मम राघव बात बतावत हूं ॥३॥

नहिं मोर औ तोरकी बुद्धि तजी अभिमान किये अकडाहि रहा।
नित कांचन कामिनि ध्यान किया तनिकौ हरिचिन्तनमें न रहा।
रसनासे कुशब्द कहे सबही नहिं राम कहा रस धाम महा।
कहु मंगल पूछत तोहिं मिला मन मानव देहका लाभ कहा? ॥४॥

हियमें परद्रोह औ मोह बसैं शिरपै अभिमान सवार रहै।
पर सम्पति औ परनारि की संगति ही निशिवासर चित्त चहै॥
परित्यागि परेश परार्थ तथा नितही निज स्वार्थ विचार रहै।
कहु मंगल मानव देह धरे कर लाभ इहै? पुरुषार्थ इहै? ॥५॥

रघुनायकके गुण गाये न जो नरनायकके गुण गाये कहा?
हियमें सियनायक जो न बसे तब ध्यान समाधि लगाये कहा?
उपकार औ रामकी भक्ति न की तब शक्ति औ ज्ञानके पाये कहा?
अब चेतहु मंगल चूकिके पीछेसे हाथ मले पछिताये कहा? ॥६॥

नहिं मानत सन्तनके वरजे नित आपु कुपन्थहि धावत है।
'हरि भक्ति विना नर बैल बनै' तेहिके सब साज सजावत है।

पुनि लादे औ जोते औ मारि परे पछितायके आँसु बहावत है ।
भजु रे मन रामहिं काहेको मंगल जीवन व्यर्थ गँवावत है ॥७॥

लरिकाई गई औ जवानी गई अब बूढ हुआ सित केश हुए ।
नहिं नैन औ कानसे देखै सुनै कर औ पद सत्त्वविहीन हुए ॥
अबहू नहिं चेतत है चित तू नित खोजत रूप रसादि नये ।
भज मंगल रामहिं चेति सदा दुख जात सियावर के चितये ॥८॥

तनमें शुभ तेल लगाइके शीतल नीर नहाइ लिये मलिके ।
पट चन्दन केशर केशरचे प्रतिविम्ब लखे अकडे चलि के ॥
विन राम भजे करि भोजन औ अतिसोयेसदा झुलना हलिके।
पर मंगल रोवत पार नही यमदूत चले जब लै दलिके ॥९॥

दुख पायके रोवत पै सुधि नाहिं करै पिछली करतूतनकी ।
अजहुँ नहिं चेतत है चित तू मति राखत है नित लूटनकी ॥
कितने इमि भोगत जन्म गये नहिं बुद्धि करै भव छूटनकी ।
फिर मंगल सोचिहै मारि जबै परि है तनपै यमदूतनकी ॥१०॥

सुखकारि मनोहर गान कहूं करुणा चित्कार सुनाय कहूं ।
सतसंग कथा सुप्रसंग कहूं मदिरा मदमत्त दिखांय कहूं ॥
धन सन्मति दान औ मान कहूं दिनमें घर बार लुटांय कहूं ।
मन मंगल राम भजो जेहिते नहिं कर्मके जाल गुंथांय कहूं ॥११॥

नहिं शीतल छाँह समेटि लिए नहिं पादप भूलि गये फरना ।
नहिं वल्कल कन्दर कन्द घटे वर वारि वहैं सरिता झरनो ॥

धन हेत धनी अपमान सहौ पुनि काल कलै तनिकौ धन ना।
कत मंगल भोगत दीन–दशा यहि जीवनसे भल है मरना ॥१२॥

धन लाख करोडहु जोडि सबै धनपालक छोडि गये इतही।
क्षितिपाल गये क्षिति छोडि पिता सुत छोडि गये न पता कितही॥
वसु औ वसुधा कुल नश्वर हैं जित देखत नाहिं रहैं तितही।
चतुराई सबै तजि चेत करो चित मंगल राम भजो नितही॥१३॥

नहिं मानत हो गुरु सन्त कहा निगमागम वर्जित कर्म करो।
नहिं तात औ मातकी बात सुनो यमराजहुके डर नाहिं डरो॥
क्षिति कांचन कामिनि पेटहिके हित औरहि मारिके आपु मरो।
चित चेतहु मंगल राम भजो केहि जीवनको उतपात करो ॥१४॥

नित काम औ क्रोध औ लोभ तजो जेहिसे यमकी नहिं मार मिलैं।
नित दान दया उपकार करो जेहिसे हरिके उपहार मिलैं॥
नित सन्त समागम चारु करो जेहिसे सुखकारि विचार मिलैं॥
नित मंगल राम भजो जेहिसे जगजीवनके फलचार मिलैं ॥१५॥

चितसे परनारि तथा परसम्पति औ परद्वेष सदा तजिये।
परमेश्वर चेतन और अचेतन तीनहु को नितही गुनिये॥
मुखमें सियराम दया मनमें तनमें जनसेवनको रखिये।
नित मंगल सन्त तथा भगवन्त तथा गुरुपाद नमा करिये ॥१६॥

सरिता गति नीच भये सम्हरीं परकाज प्रवाह बहैं सबही।
उडि वायुसे नीरदहू सम्हरे निजनीर प्रदान करैं तबही॥

अकडे पुनि पादपहू सम्हरे फल दान करैं सुपकैं जबही ।
तुमहू मन मगल राम भजो उपकार करो सम्हरो अबही ॥१७॥

अपकीर्त्ति समान न मृत्यु कहीं रिपु और न कोप समान कहीं ।
परनिन्दन तुल्य न पाप कही मदिरा नहिं मोह समान कहीं॥
विष है विषयोंके न तुल्य कही नहिं बन्धन रागसमान कहीं ।
दव मंगल काम समान कही नहिं रोग न शोकसमान कहीं ॥१८॥

हिय मगल रामनिवास चहो तव रामके दाससे प्रेम करो ।
पर नारिहिं मात समान लखो नित तारक जापका नेम करो॥
पर दुःखमें नित्य दुखी बनिके मनमें सम कंकर हेम करो ।
रघुनन्दनसे कर जोडि कहो 'सबका प्रभु योग औ क्षेम करो'॥१९॥

उरमें धीर धीरज वर्ण तथा निज आश्रम कर्म करा करिये ।
जग सर्जक पालक नाशक राम रखैं जेहि भाँति तथा रहिये॥
परमात्म औ आत्म न एक उभय दोउ भेद स्वतः हियमें गुनिये।
मन मंगल चातक तुल्य सदा तजि कौतुक राम रटा करिये॥२०॥

श्रुतिवर्जित कर्महिं वर्जि सदा फलवर्जित वेदविधान करो ।
निज औ निज सर्वस रामहिं दै मनमें लव ना अभिमान करो॥
अपराश्रय कोप मृषादि तजो हरिभुक्तसे तोषित प्रान करो ।
नहिं मंगल व्यर्थ करो क्षणहू हरिसद्गुरु भक्ति समान करो ॥२१॥

सुख रूपहु ना सुख पाइ सकैं गृहक्लेशरुजा सब जीव घुलैं ।
विषयी सुत ग्यारह इन्द्रिय औ तिय एक कुबुद्धि मिलैं न जुलैं ॥

नहिं मानहिं एकका एक कहा नित भोजनको झगडा पै तुलैं।
इनको वश राखिके भक्ति करै तव मंगल मुक्तिके द्वार खुलैं॥२२॥

तवही लगि सन्तन मार्ग वसैं गुरु तात औ मात कहा सुनते।
परकाज औ लाज करैं तवही लगि दान औ मान किया करते॥
तवही लगि हो विजयी विनयी नयशील दयालु तथा बनते।
कि जहां लगि मंगल कामिनि तीक्ष्ण विलोकनिबाण नहीं लगते॥२३॥

तनमें सुविशाल तथा तमहारि हजार मयूखकी माल धरै॥
दशहू दिशि में स्वप्रकाश भरै रथमें चढिके नभमें विहरै।
निजतेजसे तेजस्वरूप महा जगका सब कल्मष नष्ट करै।
तेहि सूर्यहिं मगल राहु ग्रसै कोउका नहिं भोग कुयोग टरै॥२४॥

वरवैद्य औ श्रीमतिमान् तथा बलवान् समूह सुयत्न करै।
जप योग औ याग विराग तथा परदेवनका अनुराग करै॥
तप तीरथ दान औ ज्ञान तथा सब तन्त्र औ मन्त्रमहान् करै।
मन मगल रामसियाकी दया विन दैव दिया दुखनाहिं टरै॥२५॥

बरु बारूके पेरेसे तेल मिलै मृगवारिसे प्यास बुझाय भले।
शसके पुनि शीसमें सीग उगैं कछुआपय पात्र भराय भले॥
नभके अरविन्दकी माल लसे वरु बाझिनि पुत्र दिखाय भले।
पर मंगल चेतत मूर्ख नहीं सिखवैं विधिहू यदि आय भले॥२६॥

तुलसी नित शोभति होय गले गुरुसे षट् अक्षर मन्त्र सुनै।
नित द्वादश ऊर्ध्व सुपुण्ड्र करै मृद्श्वेत औ श्रीविच लाल तनै॥

भुज मूलनमें शर चापकी छाप औ नामहु रामको दास बनै ।
इमि वैष्णव मंगल राम भजै हरि औ गुरु सन्त समान गनै ॥२७॥

निगुरा कत जन्म गँवावत है गुरुपादनकी अनुरक्ति बिना ।
भव सागर पार न जाइ सकै नर तारक मन्त्रकी शक्ति बिना ॥
जगमें भय शून्य न ठौर कहूँ सुखदायक राम प्रपत्ति बिना ।
गति मंगल मुक्ति प्रदायक ना रघुनायककी पदभक्ति विना॥२८॥

सुठि दारक दार औ दारूके मोहमें साधु समादर भूलि गया ।
दिन रात तथा उदरै के निमित्त प्रयास किया नहिं कीन दया॥
निगमागम रामकथा तजिके करता नित वाद विवाद नया ।
कबहू नहिं मंगल राम भजा लखि काल कराल बेहाल भया॥२९॥

नहिं भक्ति बिना कर्मादिक साधन मुक्ति पदारथ साधत हैं ।
पुनि तारक वृन्द न चन्द्र बिना कबहूं रजनी तम बांधत हैं ॥
तिमि मंगल राम बिना धन आदि न भक्तन चित्त आराधतहैं ।
नलिनी मृदु नालके तन्तु कहूं मदमत्त मतंगज बांधत हैं? ॥३०॥

अति बेगि मनोरथ नीर बहै सुविशाल तृषा लहरी लहरैं ।
मद मोह भयकर नक्र फिरैं ममता की कराल उठैं भँवरैं ॥
दुख चिन्तन तुंग करार खडे नित धारसे धीरज वृक्ष गिरैं ।
हरिदासहि आश नदी यह पैरि भवाम्बुधि मंगल पार करैं॥३१॥

पढिके पदवी श्रमशील लहैं विनयी धन धर्म औ कीर्ति लहैं ।
सुख पावत रोगिहु पथ्य करे मतिमान् सुसम्पति वृन्द लहैं ॥

विजयी बलवान् बनैं जगमें धनवानहु धर्मसे स्वर्ग लहैं।
नहिं मंगल मोक्ष मिलै यदि ना जन सन्तनका शुभ मार्ग गहैं॥३२॥

करते जगके सब कार्य यथा रघुनन्दन के मन भावत हैं।
नित साधत हैं परस्वार्थ तथा निज स्वार्थ न चित्तहु लावत हैं॥
यश गान करैं यश पान करैं रघुनाथहि के कहलावत हैं।
यह रीत पुनीत है सन्तनकी अति मंगलके चित भावत हैं॥३३॥

सुकृती नर राम स्वभाव सुने नहिं भूलि कभी जगजाल सुनैं।
नरराजनकी पुनि बात कहा सुरराजहुकी नहिं बात सुनैं॥
मतवारन का मत वारिके मंगल रामहिका मतवाद सुनैं।
नित राम कहैं नित राम लखैं नितराम गुनैं नितराम सुनै॥३४॥

लघुता लघु सेवककी लखिके सुमहान करैं निजलायकही।
पदके जलसे शुचि निर्भय औ करते रजसे जड चेतन ही॥
निजदासन भीर निवारनको धनु सायक धारत हैं नितही।
सुखदायक श्रीरघुनायक सों न सहायक मंगल और कहीं॥३५॥

रघुनायक होंय सहायक तो यमनायकहू नहिं मारि सकैं।
नरनायक वृन्दकी कौन कहै सुरनायकहू न निहारि सकैं॥
नहिं वारिधि वारि डुबाय सकैं अनिलानल सोखि न जारि सकैं।
नहिं मंगल रामपदाम्बुज छाँडिके अन्य भवाम्बुधि तारि सकैं॥३६॥

कपि केवट मीत किये रुचिसे हिय बन्ध बंधे दृढ हाथनके।
अति दीन विभीषण भूप किये अभिमान मथे दशमाथनके॥

गति गीधहिं दीन सुगोद लिये नद बाढे विलोचन–पाथनके ।
मन मंगल श्रीरघुनाथ भजो रघुनाथहि नाथ अनाथनके ॥३७॥

शुभ लक्षण लक्ष्मण और सिया विच राम सिंहासन राजत हैं ।
नवनीरदके दुइ ओर यथा दुइ विद्युत वेलि विराजत हैं ॥
नवनीरज तुल्य सुकान्ति विलोकि मनोज्ञ गुमानहु नाशत हैं ।
छबि दिव्य निहारिके मंगल भक्तनके गण सर्वस वारत हैं ॥३०॥

श्रुति कुण्डल लोल कपोल भरे मुख चन्द्रहिं नाहिं निहारइको ?।
पद कंजन औ करकंजन औ दृग कंजन देखि न हारइ को ?॥
धनुबाण लसे पटपीत कसे तनु देखि न सर्वस बारइ को ? ।
जग मोहन मंगल राम लखे निज पाप समूह न जारइको ? ॥३९॥

शिरपै रवि तुल्य किरीट तथा पदनूपुर सज्जित पद्म खिले ।
श्रुति कुण्डल दामिनि सों दमकैं मणिहार हिये जनु दीप जले ॥
भुज बन्दनसे भुज सोहत औ कर–कंकणसे करकंज भले ।
जनु राघवके तनु पादप में फल मंगल भूषण दिव्य फले ॥४०॥

इत मोहमदादिक शत्रु खडे उत मौत खडी डरपाय रही ।
इत मोहक दारक दार खडे उत काल घडी नियराय रही ॥
इत लौकिक मौज औ शौक खडे उत जीवन–ज्योति बुझाय रही ।
इत मंगल जी घबडाय रहा उत रामकृपा उमडाय रही ॥ ४१ ॥

सियरामके नामकी सम्पतिसे सब कर्मके बन्ध तुरन्त कटैं ।
खल राजन चोर महाजन और यमराजनकी सब भीति हटैं ॥

सुविमान चढे हरि दूतनकी मरते क्षण द्वारपै भीड डटैं ।
नित मंगल नाम रटो जेहिसे सब बाजी बनी पुनि ना पलटैं ॥४२॥

अंगडायके औ जमुहाय तथा अलसाय सियावर राम कहै ।
न बसाय चले बिलखायके औ अनखाय के राघव राम कहै ॥
यदि छीक औ ठोकर खाय तथा दुख पाय परेश्वर राम कहै ।
बिनमाय तबौ अघ मानव मंगल मुक्ति महा सुखधाम लहै ॥४३॥

जग जन्मिके कालसे कौन बचा? पुनि याचक गौरव कौन लहा ?।
धनपाय न गर्व भया केहिके? विषयी केहिके न विपत्ति महा?।
ठग वृन्दनके ठगजाल परे पर कौन है जो दुख नाहिं सहा ?।
मन मंगल राम कहो कलिमें हरिकीर्त्तन मुक्ति का हेतु कहा॥४४॥

मम कान सुकानन बासि सियारघुनायक कीर्त्ति सुना करिये ।
रसना रस जाननहारि सिया रघुनायक नाम रटा करिये ॥
चित औरन–चिन्तन छोडि सियारघुनायकको सुमिरा करिये।
प्रिय लोचन मगल नित्य सिया रघुनायक रूप लखा करिये॥४५॥

सियकान्तके भक्त हैं सन्त जहां तहॅ भक्ति–निवास सदा रहिहै।
धन दार औ दारूके भक्त जहां तहं ईश्वर–भक्ति कहा करिहै ॥
बिकते जहँ गाजर मूरि औ बेर तहाँ कसतूरि कहा मिलिहै।
नर मंगल भक्तिकी नाव बिना भवनीरधि–नीर कहा तरिहै॥४६॥

नहिं काम औ क्रोध औ लोभ तजे चितसे नहिं मान गुमानगये।
सियराम–पदाम्बुज–भक्ति न की तबका श्रुतिसागर पार भये ॥

करछी कहँ स्वादबिना जिमि पाक तथा तेहि बादि विवाद नये।
मुख मंगल नाहिं निहारत का फल दर्पण अन्धके हाथ भये ॥४७॥

धनमें नृप तस्कर भीति भरी बलमें पुनि वैरिकी भीति रहै ।
खल वृन्दकी भीति रहै गुणमें कुलमेंहु कलंककी भीति रहै ॥
तनरूप रुजायम भीति भरे पुनि शास्त्रमें वादकी भीति रहै ।
मन मंगल राम-प्रपत्ति बिना जगकी सबवस्तु में भीति रहै॥४८॥

सबही रघुनायक-दास बनो सबही शुभ एक विचार करो ।
सबही मनसे पर द्वेष तजो सबही मिलि धर्मप्रचार करो ॥
सबही नितही उपकार करो सबही न कभी कुविचार करो ।
सबही नित मंगल राम भजो सबही भवसागर पार करो ॥४९॥

मनमें न कभी अभिमान करो सबका नित सुन्दर मान करो ।
नित भोजन देहु क्षुधातुरको रघुनन्दनका यशगान करो ॥
धन लोभ औ क्रोध औ काम तजो उपकार दया शुभ दान करो।
नित मांगहु मंगल राघवसे 'सब जीव भला भगवान् करो' ॥५०॥

इति तृतीयः तरङ्ग ।



श्री सीतारामाभ्यां नमः ।

आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नमः ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नमः । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नमः ।

श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति

श्री १११०८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र विरचित

शिक्षामणिशतक

अथवा

श्रीमंगल दोहावली



सकल जगत् जननी जनक सकल जगत् अभिराम ।
मंगल मम हिय वसहु नित सियाराम सुख धाम ॥१॥

मोक्ष न काम न धर्म धन चहत न यश जगजीति ।
जन्म जन्म मङ्गल चहत सियाराम-पद प्रीति ॥२॥

सदा विराजहु राम मम हृदय जानकी संग ।
मंगल नित नित देहु मोहिं भक्ति भक्त-सत्संग ॥३॥

तुम सम नाहिं अनाथ-प्रभु मो सम नाहिं अनाथ ।
मंगल अस संयोग लखि अपनावहु रघुनाथ ॥४॥

नहिं मोसम दयनीय औ तुम सम दया निधान ।
मोहिं पर करि मंगल दया राम करहु कल्यान ॥५॥

राम नाम रसना बसै हिय तव गुण छवि नैन ।
मंगल मांगत देहु नित रघुपति करुणा-ऐन ॥६॥

कहे विशिष्टाद्वैत मत जगगुरु रामानन्द ।
होत समन्वित श्रुति तथा मंगल तर्क अमन्द ॥७॥

धर्म-मूल त्रय जानिये कबहुं न करिय अनीति ।
स्थिति मंगल सत्कार्य महँ सन्त मार्ग महँ प्रीति ॥८॥

मंगल जो मंगल चहहु छोडहु सब अभिमान ।
अवगुण तजि सद्गुण गहहु करहु रामका ध्यान ॥९॥

अवगुण औ गुण से भरा पक्का जगत्का खेत ।
बुध जन अवगुण त्याग करि मंगल गुण चिनि लेत ॥१०॥

गुण अवगुण दोउ एक थल यथा क्षीर औ नीर ।
मंगल बुध केवल गुणहिं गहत हंस जिमि क्षीर ॥११॥

राम नाम औ विनययुत कहत न हितकर बानि ।
पाये मंगल कौन फल रसना अवगुण-खानि ॥१२॥

जरत पराया सुख निरखि हंसत देखि दुख नैन ।
लखन न मगल रामनिधि व्यर्थ मिले दुख देन ॥१३॥

राम कथा मंगल तथा सुनत न दीन-पुकार ।
सज्जन निन्दा श्रवणरत श्रवणन कहं धिक्कार ॥१४॥

दीन जनहिं नहिं दीन कुछ कीन न पर-उपकार ।
मंगल हरि सेवा रहित व्यर्थहि हाथ गँवार ॥१५॥

मंगल तीर्थ न कीन औ लीन न हरिपद-छांव ।
नहिं धाये उपकार हित का फल पाये पाँव ॥१६॥

मनन करत नहिं ब्रह्मका जरत पराये डाह ।
विषय-कामना लीन मन पाये मंगल काह ॥१७॥

मंगल निन्दा सुनत नहिं वधिर करत नहिं मौन ।
कार्य अकार्य विचार नहिं बुद्धि मिले फल कौन ॥१८॥

खरचत दुख निज हेत औ परहिं देत दुख चित्त ।
सूम जनन कहं कौन फल मंगल पाये वित्त ॥१९॥

चित्त न चिन्तत राम कहं दया धर्म विन काय ।
मंगल पाया कौन फल मानव-जीवन पाय ॥२०॥

मंगल अरि दल विजयकी कीर्त्ति न कतहुं सुनाय ।
कीन न निबल-सहाय तो कीन कहा बल पाय ॥२१॥

सोमवार महँ सुमिरिये सीतानाथ कृपाल ।
मंगल मनका दमन करि छोडहु सब जंजाल ॥२२॥

मंगल मंगलवार महँ मंगलनिधि हनुमान् ।
करि प्रसन्न मंगल लहैं राम कृपा मतिमान् ॥२३॥

बुध जनगण बुधवार महँ सुस्थिर करि मनबुद्धि ।
राम-भक्ति करि लहत हैं मंगल सब विधि सिद्धि ॥२४॥

गुरु वासर गुरुदेवसे लै मंगल सद्बोध ।
सुजन राम-कीर्त्तन करहिं त्यागि काम मद क्रोध ॥२५॥

शुक्रवार शक्रादि सुर सेवित सीताराम ।
मंगल सेवहु प्रेमसे लहहु सतत आराम ॥२६॥

मन्दवार महँ मन्द कृति छोडि भजे सियराम ।
मंगल मारुति भक्तके पूरत सब विधि काम ॥ २७ ॥

रवि वासर रवि वंश-मणि मंगल रघुवर सेय ।
रवि सुत द्वयकी भीति कहँ सुजन तिलांजलि देंय ॥२८॥

प्रतिपद् प्रतिदिन सुमिरिये रामहिं चित्त लगाय ।
मंगल बन्धन कर्मका कटै कष्ट सब जाय ॥२९॥

द्वीज द्वैत राखो नहीं हरि गुरु सन्तन साथ ।
मंगल हरि गुरु सन्त लखि तुरत नमावहु माथ ॥३०॥

तीज तीन नहिं भूलिये दया दान उपकार ।
मंगल तीनहु जानिये सुख मन्दिर के द्वार ॥३१॥

चौथ चौथपन आइ है व्याधि-भवन कर चेत ।
मंगल सुमिरहु राम कहँ जब लगि केश न श्वेत ॥३२॥

पांचमि पांचहु विषय तजि करहु राम गुणगान ।
को जानै केहि क्षण तजैं मगल यह तनु प्रान ॥३३॥

छठ में छहो विकार से विरहित जीव-स्वरूप ।
चिन्तहु मंगल रामका अणु शरीर चिद्रूप ॥३४॥

सातमि सातहु स्वर्ग के सुखकी छोडहु आस ।
क्षीण पुण्य जन कहँ मिलत मंगल पुनि क्षितिवास ॥३५॥

आठमि आठहु अंगसे नमहु रामपद मांहि ।
मंगल भववारिधि तरन दूसर साधन नाहिं ॥३६॥

नवमी नवके अंकका यथा नवहि गुण योग ।
मंगल रहत विशिष्ट हरि नान्य दशाके योग ॥३७॥

दशमी दशदिग् व्याप्त हरि हृदय-मध्य प्रगटाय ।
मंगल सुरपथ राम-जन मुक्ति-धाम महँ जाँय ॥३८॥

एकादशि एकादशी-व्रत करि हरि आराधि ।
मंगल पावै जो, न सो सकल साधना साधि ॥३९॥

द्वादशि द्वादश राशि ग्रह मंगल सुख दुख देत ।
तिनहिं करन अनुकूल नित भजहु राम करि हेत ॥४०॥

तेरस तेरह वर्जि हरि मंगल निधि आराध ।
काम क्रोध औ लोभ औ दशहु नाम अपराध ॥४१॥

चौदस चौदह लोक महं मृत्यु पसारै हाथ ।
मंगल चहहु अमृत्यु यदि भजहु सियारघुनाथ ॥४२॥

आमावस मति शसि विना होत न वस्तु प्रकाश ।
मंगल गुरु पद-रज मिले सकल तत्त्व अवभास ॥४३॥

पूर्णमासि श्रीरामसे पूर्ण दशौ दिग्देश ।
मंगल करुणा किरणसे दीखत यथा दिनेश ॥४४॥

दया तुल्य जग नाहिं तप दया तुल्य नहिं दान ।
दया विना मंगल सकल धर्म अधर्म समान ॥४५॥

सब विधि वैरी-वैर तजि करै सर्व उपकार ।
सकल अमंगल नशत तब मंगल हो जयकार ॥४६॥

मंगल भूषण मनुज के ज्ञान विनय प्रिय बैन ।
दया अयाचन मन-दमन दान सकल सुख देन ॥४७॥

मंगल कत भटकत फिरत भजिलो सीतानाथ ।
पीछे फिर पछिताइहौ शिरधुनि मलिहौ हाथ ॥४८॥

जीवन की है प्रतिघडी भरी रतनकी हाट ।
लाभ लहै मंगल पुरुष पुरुषारथकी वाट ॥४९॥

मायिक मणिगण-चमक महं समिटा आतम-मोल ।
मंगल माटी महं मिलत मनुज-जन्म अनमोल ॥५०॥

जीवनके अनमोल क्षण जात यथा सरि-नीर ।
मंगल फेरे ना फिरैं छोडेहु प्राण शरीर ॥५१॥

आखिर असत् असत्य हो विकसत सत्य समूल ।
फलैं न सांचे फल कतहुं मंगल कागज-फूल ॥५२॥

मंगल मानहु डाह तजि परमेश्वर-उपकार ।
घटइ एक सन एक पुनि बढयो जगकर्त्तार ॥५३॥

यथा कर्म मगल वनत जीव बडा वा छोट ।
जाने बिन अनजान जन कहत ईशकी खोट ॥५४॥

सगे न तन मन धन तथा सगे न मंगल प्रान ।
केवल सीतापति सगे काहे फिरत भुलान ॥५५॥

मंगल चितवै और नहिं सिखवहु चित्त चकोर ।
लखै अहर्निशि एकचित रामचन्द्रविधु ओर ॥५६॥

उलटत जन जब नीच गति जन संगति महं जाहिं ।
काया-छाया उलटती मंगल जिमि जल माहिं ॥५७॥

मंगल दीनहिं ना लखैं लखैं नगर गिरि गाम ।
लखैं दीन तिन कहं लखैं दीन-बन्धु श्रीराम ॥५८॥

देखि सकत पर-दुःख नहिं निज-सुख इच्छत नाहिं ।
मंगल सुख तिन कहं मिलत दुखदयोग दुरि जाहिं ॥५९॥

मंगल मनसे सर्वदा त्यागि मान अपमान ।
विधि-कटुता भेषज सदृश सुखसे करिये पान ॥६०॥

सुखी रहै निज-भाग्य पर करै रामकी आस ।
मगल तेहि जनके सदृश गृह औ गृह-सन्यास ॥६१॥

मंगल रघुवर-दास ह्वै जगसे रहै उदास ।
कपट रहित तेहि मनुज हित निर्भय कलि जग-वास ॥६२॥

राम-भक्त तैसे रहैं जैसे राखैं राम ।
मंगल छाया कबहुं औ कबहुं कालसम घाम ॥६३॥

लाख बुलावहू चतुर नर करहू करोड उपाय ।
विगडत बीचहि कार्य विन मंगल राम-सहाय ॥६४॥

करिये किमि प्रारब्ध बिन करनीका विश्वास ।
करेहु सफल कोउ विफल कोउ देखत मंगलदास ॥६५॥

कृपाजलधि रघुनाथकी कृपा भक्तजन-वर्म ।
पाय न भोगत दुःख जन मंगल बिन सत्कर्म ॥६६॥

पाप सुर-सरित ताप शसि सुरतरु दैन्य अशेष ।
मंगल तीनहुं कहं हरत एक साधु-सन्देश ॥६७॥

लोक तथा परलोकके मनुज-मनोरथ सर्व ।
मंगल परिपूरण करत साधु-समागम पर्व ॥६८॥

नहिं पारस पारस करत स्वर्ण लोह बदरंग ।
मंगल साधु असाधु कहं करत साधु जन-संग ॥६९॥

चहत न निज-उपकार कुछ करत रहैं उपकार ।
साधु आचरण साधु जन मंगल तारन हार ॥७०॥

मंगल ममता तजि सुखी रहत जगत महं सन्त ।
खेवत नौका धर्मकी सेवत सीता-कन्त ॥७१॥

सरिता पियहिं न नीर निज तरु नहिं निज-फल खात ।
मंगल संचत साधु जन परहित सम्पति जात ॥७२॥

मंगल मन रघुवर भजहु क्यों बैठे सुख ऊलि ।
उपवन में मुरझे नहीं फूल कौन से फूलि ॥७३॥

मंगल कल उत्सव सकल सुनते प्रिय तिय-राग ।
देखहु पडे मसान अब जरत चिताकी आग ॥७४॥

जंगम जगकी रीत है जो आवै सो जाय।
मंगल रघुवर भजत जो पीछे ना पछिताय ॥७५॥

क्यों सोवत खोवत जनम मंगल सुमिरहु राम।
मौत खडी असि तानिके करिहै काम तमाम ॥७६॥

मंगल सोवत ठाटसे सियाराम विसराय।
चेतहु सोना है चिता-मध्य पांव फैलाय ॥७७॥

निज-प्रभुता हित प्रभु भजे मंगल प्रभुता होय।
प्रभुहिं भजत प्रभु हित मिलैं प्रभु औ प्रभुता दोय ॥७८॥

मंगल पृथिवी पर हुए कितने पृथिवी-नाथ।
मेरा मेरा करि मरे कौडी गई न साथ ॥७९॥

मन तो विषयन महं रमै कथै ब्रह्मका ज्ञान।
मंगल सो दम्भी कबहुं पावै ना कल्यान ॥८०॥

मंगल श्रुतिकी हाटमें सदा सुखद बिन दाम।
सिय सुन्दर मुदरी सुभग रतन राम अभिराम ॥८१॥

तन तरनी भव सिन्धु में श्री गुरुपद रज पाल।
केवट केवट-मीत हैं मंगल राम दयाल ॥८२॥

मंगल शर धनु धरत नित सुनतहि निज जन टेर।
रघुवर राक्षस-दल दलन रक्षत करत न बेर ॥८३॥

मंगल जल दल फूल फल भक्त भक्तिसे देत।
शवरी-बेर-रसज्ञ सो रघुवर रुचि करि लेत ॥८४॥

मंगल सुमिरहु प्रेमसे रघुवरको धरि धीर।
यम यम-किंकर का करैं जो राख रघुबीर ॥८५

सन्तत पर-उपकार करि भजिये सीताराम।
जनन मरण से पाइये तो मंगल विश्राम ॥८६

मुक्ति-मार्ग मंगल सुनहु रघुवर-कथा पुनीति।
रामहिसे गति मति लखहु करहु रामसे प्रीति ॥८७

रामभक्ति सुरधेनु औ सुरतरु रघुवर-नाम।
मंगल अवलम्बे सदा पूर्ण होत सब काम ॥८८

मंगल जेहिके राम औ राम-जनहि से मेल।
तिनके मन रघुवर वसहिं दुरहिं सकल मन-मैल ॥८९।

मंगल ज्ञान विराग बिन मिलति न रघुवर-भक्ति।
भक्ति बिना नहिं और महं मुक्ति दानकी शक्ति ॥९०।

सुर-पादप के चित्र सम मंगल साधन वृन्द।
राम भक्ति की शक्ति विन नाशैं किमि दुख-कन्द ॥९१

स्तुति अस्तुति जो लखत सम सब महं देखत राम।
मंगल मंगल गुण-भवन सो पावत विश्राम ॥९२।

कर्म-भार मंगल लिये बूडे कितनी बार।
राम उपासन अग्नि महँ जारि भार हो पार ॥९३।

राम-भक्त रामहिं भजत मंगल विना गुमान।
मान न चाहत सर्वदा करत सकल जन मान ॥९४।

सुमिरहु रामहिं मुक्ति हित मंगल नित उठि भोर ।
जब लगि दशदिशि ना लखहु दशरथ राज किशोर ॥९५॥

सुख हित मंगल कपट तजि शरण रामकी जाय ।
अन्य भांति सुख ना मिलै करहु करोड उपाय ॥९६॥

माया ममता-डोर से बांधति सब संसार ।
मंगल बंधत न वे जिनहिं राम-शरण आधार ॥९७॥

मुक्ति मार्ग मुखसे कहत चितसे चिन्तत भोग ।
मंगल कैसे मिट सकै जनन मरण का रोग ॥९८॥

निशि तरु वर-खग वास इव मङ्गल जग-जन वास ।
राग द्वेष तजि हरि भजे नित्य मिलनकी आस ॥९९॥

सबहि सुखी हों नहिं दुखी सबही होंय निरोग ।
मंगल सब मंगल लखैं भोगैं सुन्दर भोग ॥१००॥

इति चतुर्थ तरङ्ग ।



श्री सीतारामाभ्यां नम ।

आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरुश्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्याय नम ।

महागुजरात श्रीरामानन्दमहापीठ संस्थापक श्री ११०८

जगद्गुरुश्री मङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र विरचित

शिक्षामुक्तावली

अथवा

श्रीमंगलबत्तीसी

जगकर्त्ता जगईश औ जग–हर्त्ता जगपाल ।
जग व्यापक जग–आत्मा मंगल राम कृपाल ॥

मंगल राम कृपाल प्रणत भववारिधि–तारन ।
आदि मध्य अवसान विश्वके तीनहु कारन ॥

अवगुण बिन गुण–सिन्धु रूप सुर मुनि मन हर्ता ।
सुखाराध्य सुख रूप सर्व विध सुख जगकर्त्ता ॥ १ ॥

भ्राता पवनज फेंटवर मैथिलि बाण ललाम ।
वन्दौ रम्य पवर्गयुत अपवर्ग–प्रद राम ॥

अपवर्ग-प्रद राम ब्रह्म मंगल श्रुति-सम्पति।
प्रबल मोहतम-भानु मदन मातंगज-मृगपति ।।
भव-भंजन सर्वेश स्वजन-रंजन सुखदाता ।
बन्धु सखा मति वित्त जनक जननी सुठि भ्राता ।।२।।

रघुवर तन मनहरन अति यथा नील जलजात ।
मंगल सुषमा-सदन लखि मन महं मदन लजात ।।
मन मह मदन लजात वदन जनु शरद् सुधाकर ।
नवनीरज सम नयन भृकुटि सुन्दरता-आकर ।।
चितवनि पै बलि जात विबुध नारी नर मुनिवर ।
शसिकर-निकर लजात मधुर विहंसत जब रघुवर ।।३।।

योगेश्वर बडभागि सो सो ज्ञानिन शिर मौर ।
जो मंगल-निधि राम तजि लखत न मंगल और ।।
लखत न मंगल और रूप पर सर्वस वारत ।
कोटि काम जित राम नाम भव-जलनिधि तारत।
राम सर्व अभिराम सर्व-कारण सर्वेश्वर ।
यश वर्णत नित वेद ध्यान धरते योगेश्वर ।।४।।

लहि मंगल नर-देह तू यदि चाहत कल्यान।
राम-कृपाहित यतन कर तेहिबिन गति नहिं आन।।
तेहि बिन गति नहिं आन कोटि कोउ यतन करै किन।
योग याग श्रुति-ज्ञान वृथा सब राम कृपा बिन ।।

गुह शबरी प्रहलाद गीध गणिकादिक यहि महि।
तरे न तरने योग्य विविध जन राम कृपा लहि ॥५॥

साथी सांचे सबहि थल सर्वेश्वर रघुनाथ।
मंगल सुख–साथी सकल दुखमें देयं न साथ ॥
दुखमें देयं न साथ दूरसे विपदा देखहिं।
कृत अनेक उपकार तनिक नहिं मनमें लेखहिं ॥
दारक दारा बन्धु पिता पति सुखके साथी।
सुख दुख सबही ठौर एक रघुनाथहि साथी ॥६॥

वन्दिय वन्दन योग्य जग गुरुवरके पदपद्म।
भजिय गुरुहिं कल्याण हित छांडि सकल छल छद्म ॥
छांडि सकल छल छद्म गुरुहि की सेवा करिये।
भव रुज भेषज रूप सिखावन हियमें भरिये ॥
गुरुसे तारक पाय जगत्में नित आनन्दिय।
निगमागमका भेद खुलन मंगल गुरु वन्दिय ॥७॥

मगल जगमें शास्त्रका सागर भरा अपार।
अति गभीर गुरुदेव बिन कोउ न पावै पार ॥
कोउ न पावै पार बूडते पंडित मानी।
गुरुवर कृपा जहाज पाय तरते अज्ञानी ॥
कंटक कंकर आदि विघ्न नहिं भूपति मगमें।
तिमि गुरु शिक्षा मार्ग विघ्न विन मंगल जगमें ॥८॥

काटनहित भव-बन्धके जिन देखहु घर गाम।
मंगल साधन सकल तजि सेवहु सीताराम॥
सेवहु सीताराम सन्तगण संगति करिये।
अनहित कारी जनहु हेत हितही चित धरिये॥
निशिदिन सुमिरहु राम अन्त यम-गण डाटन हित।
शरण रामकी गहहु कर्मबन्धन काटन हित॥९॥

भजत मन्दमति जन नहीं जन्मि जन्म-हर राम।
काटै को बिन कर्म-हर कर्मनके दृढ दाम॥
कर्मनके दृढ दाम नचावहि सबहिं सबहि विधि।
मंगल नरकी कहा नचत सुर असुर शंभु विधि॥
जगत्-भजनसे भागि ब्रह्म परिपूरण सियपति।
भव वारिधि-वर सेतु राम नहिं भजत मन्दमति॥१०॥

मंगल प्रकटत भानु जिमि जगका तिमिर नशात।
भक्ति भावके जगत तिमि हिय-कुभाव दुरि जात॥
हिय-कुभाव दुरिजात मिलत परमारथ क्षमता।
समदर्शी हरि लखत करत सब जगमहं समता॥
कटत कर्मके बन्ध सकल विध संशय टूटत।
हृदय कमल महं भक्ति भाव जब मंगल प्रकटत॥११॥

विषय बडाई भंवर पडि बूडहु भवजल धार।
अथवा तारक राम भजि मंगल उतरहु पार॥

मंगल उतरहु पार न चूकहु अवसर आया।
पुनि पछितैहौ सुर दुर्लभ तनु पाय गंवाया॥
भजहु मुक्तिप्रद राम सकल तजि मन कदराई।
बडे बडे मुनि बूडे जग लहि मान बडाई ॥१२॥

सुख-इच्छुक नर शुक सदृश किंशुक सम संसार।
धन्धे मोहक रंग इव राम भजनमें सार॥
राम भजन में सार इतर सब मंगल तजिये।
त्रिविध ताप सन्ताप विनाशन रघुवर भजिये॥
भजन विना उद्योग बनावत जन कहं भिक्षुक।
उभय लोक सुख पावत रघुवर भजि सुख-इच्छुक ॥१३॥

जहां कालका वश नहीं जो सिय रामाधीन।
तेहि पद हित हरि भक्तिमें रहहु काल-आधीन॥
रहहु काल-आधीन न खोवहु जीवनके क्षण।
धन लोभी ज्यों धन हित जोडत एक एक कण॥
मंगल वचना फैला फन्दा मृत्यु जालका।
सियाराम पद गहहु न कुछ भय जहां कालका ॥१४॥

तितने पातक पातकी मंगल करि न सकाहिं।
समरथ जितने दहनकी राम नामके माहिं॥
राम नामके माहिं अपरिमित शक्ति विलक्षण।
पापी जनके पाप-पुञ्ज जारति जो तत् क्षण॥

दावानल के निकट तूल औ तिनके जितने ।
राम नामके निकट पातकी-पातक तितने ॥१५॥

बिनसत दुख रघुवर भजत बिनसा पै न लखात ।
बीती बीति न लखि परत जिमि पावसकी रात ॥
जिमि पावसकी रात घटिहु घटिकहि से सूझत ।
ज्ञानी तिमि सुख दुःख ज्ञान घटिका से बूझत ॥
रजनीहरके उदय न कहुं रजनी तम विलसत ।
राम भजनसे मंगल जनके दुख तिमि बिनसत ॥१६॥

निज हित जो पर हितहिं हनि मंगल करत उपाय ।
तेहिका हित नहिं सधत कहुं गृहसे दुगुना जाय ॥
गृहसे दुगुना जाय सबहिं निज हाथ हंसावत ।
दहत रहत दिन रैन चित्त महं चैन न पावत ॥
नर लोकहु नहिं सुलभ ताहि दुर्लभ सुरपुर कित ।
पुरुष परहितहिं नाशि चहत केवल जो निजहित ॥१७॥

हमही तप तपते तपे भुगे भोगते भोग ।
अचल काल तृष्णा अमृत हमहिं चलनमृति योग ॥
हमहिं चलन मृति योग मीत चित चेतहु अबहूं ।
अमित जगत् जञ्जाल न पूरे ह्वैहैं कबहूं ॥
मंगल जितना करै जगत् में तितना कमही ।
क्रीडा-सुख सब लहैं नरककी पीडा हमही ॥१८॥

कबहूं याचक-वृत्ति जनि गहहु मिलेहु सुख सोत।
वामन-याचकता गहे विभुहू वामन होत॥
विभुहू वामन होत जाय बलि द्वार रखावत।
जासु द्वार अधिकारी जनहू जान न पावत॥
सांसति लाख प्रकार परै शिर पै यदि तबहूं॥
मंगल याचक-वृत्ति चित्त धारेहु जनि कबहूं॥१९॥

परदूषणके खोजने सदृश न दूषण कोय।
खोजहु अन्तर आपका दूषण भरा न होय॥
दूषण भरा न होय सतत तुम चिन्ता राखहु।
निजगुण तुल्य न अवगुण परके मंगल भाषहु॥
निज दूषणको खोजि त्यागना नरका भूषण।
सब दूषण शिर मौर खोजना ही पर दूषण॥२०॥

उलटत दिन विषहर करत विष बनि जनकी मीच।
निशि शीतलहू तुहिन से जरत जलज जल बीच॥
जरत जलज जल बीच हंस-छवि हारहिं भक्षत।
हितहू अनहित होत रक्ष्य रक्षक नहिं रक्षत॥
सरस निरस ह्वै जात कुसुम कंटकसम कसकत।
मंगल उलटत सकल जबहि जनके दिन उलटत॥२१॥

अभिलाषा रघुनाथकी मंगल जानहु कर्म।
पाप पुण्य अनुसरति सो बुध जन जानहिं मर्म॥

बुध जन जानहिं मर्म रामकी इच्छा व्यापति ।
भोग-भूमि में भोग्य वस्तु भोगन हित थापति ॥
जिमि करनी तिमि भोग अधिककी व्यर्थहि आशा ।
तुला तौलिके देति सबहिं रघुवर-अभिलाषा ॥२२॥
चित नहिं चिन्तन करि सकै कवि नहिं सकै बखान ।
पुरुष-पराक्रम व्यर्थ जह सो विधि-लीला जान ॥
सो विधि-लीला जान असंभव-शंका नहिं जेहि ।
विज्ञानिनकी सकल कला कलि सकैं नाहिं तेहि ॥
नरकी विधिवश होत विपति संपतिहू परिचित ।
मंगल सोउ लखि परे कबहू नहिं चिन्त्यो जेहि चित ॥२३॥
जगमें बिन सत्संग तिमि मिलत न सद्गति लाहु ।
चन्द्र बिना जिमि चन्द्रिका मंगल लहत न काहु ॥
मंगल लहत न काहु लाहु सुठि जीवन बीतत ।
सन्त संग बिन हारत नर हरिमाया जीतत ॥
बरु बारूसे तेल लहैं माखन मथि जल कहं ।
सद्गति मिलै न तऊ बिना सत्संगति जग महँ ॥२४॥
उर विचार सम वचन अरु जस वाचा तस कर्म ।
दुर्जनसे उलटा लखहु मंगल सज्जन-धर्म ॥
मंगल सज्जन-धर्म वृक्ष सम परहित साधत ।
राम रामजन भक्ति-बाध अति चित कहं बाधत ॥
सत्त्व भाव शुचि रुचत न भावत मन कहं रज तम ।
सत्य मधुर हित कहत आचरत उर विचार सम ॥२५॥

रोवत शिर धुनि हाथ मोक्ष-सुख हाथ न आवत।
जनमि भजन विन मूढ रात अरु दिवस गँवावत ॥२९॥

निशिमें रजनी कर तथा दीपत दीप-प्रकाश।
दिनमें दिनकर करत है अन्धकारका नाश ॥
अन्धकारका नाश दिवस ज्यों करत दिवाकर।
करत उजागर वंश तथा सत्पुत्र गुणाकर ॥
मंगल दीपत जनहिं उपार्जित यश दशदिशि में।
सकल लोकमें धर्म प्रकाशत विधु ज्यों निशिमें ॥३०॥

सत् सुतसे कुल सोहता जवसे सोह तुरंग।
जलज वृन्दसे जल तथा मदसे सोह मतंग ॥
मदसे सोह मतग भूमि भूधरसे सोहति।
निशानाथ से निशा कन्तसे कान्ता सोहति ॥
मंगल सोहति सभा तथा पंडित वहुश्रुत से।
जगत् भक्त-गणसे सोहत ज्यों कुल सत्सुत से ॥३१॥

मंगल देना दान औ राम-भजन जिन भूल।
यदि होवे प्रतिकूल वा विधि होवे अनुकूल ॥
विधि होवे अनुकूल तवहुं क्यों देते डरते।
सब कुछ सबही भांति सदा हरि पूरण करते ॥
लै जैहै सब रूठि कौन जीतै विधि-दंगल।
राम भजो दो दान चहौ जो सुख यश मंगल ॥३२॥

इति पञ्चम तरंङ्ग।

श्री हनुमते नम ।



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।

श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति

श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र विरचित

शिक्षारत्नमाला

अथवा

श्रीमंगलकवितावली



सब विधि हीन और आरत अनाथ दीन
पाप पीनहू पै पाणि छांह जो करत हैं
दानी–दान ज्ञानी–ज्ञान योगी–योगसे न मिलैं
भक्तनके भक्ति भाव मात्रसे मिलत हैं ।
अपने निवाजेकी जो राखत हैं लाज सदा
पातकीके पातक जो नामसे हरत हैं
मंगल मंगल–निधि तिन निखिलेश राम
पाद पद्म वार वार नमन करत है ॥१॥

अगणित रमा रति रुद्राणी ब्रह्माणी शची
रिद्धि सिद्धि आदिनके जासु अंश मूल हैं
रूपनिधि ज्ञाननिधि दयानिधि शक्तिनिधि
सर्व जग सर्जक जो सर्व जग मूल है ।
फूल होत शूल जग जेहिकी दयाके विना
शूल पुनि जेहिकी दयासे होत फूल हैं
मंगल नमत राम प्राण प्रिया सोई सिया
जेहि भक्ति विन चतुराई सब धूल हैं ।२॥
धर्म अर्थ काम मोक्ष देत भक्ति दान द्वारा
शुभ गुणखानि जो नशावैं दुख घोरको
तेहि राममन्त्रदानी दास-भाव अभिमानी
सकल विबुध औ सुभट शिर मौर-को ।
रिपुगण गंजन सुजनमनरंजन
औ विपति विभंजन करम वन्दि छोर को
मंगल नमत सदा मंगलनिधान महा
ज्ञानवान् हनूमान्, केशरी किशोरको ॥३॥

विबुध=देव

ब्रह्मसूत्र गीता उपनिषद् आनन्द भाष्य
रचिके बताये ब्रह्म राम सुख-धाम हैं
भक्तिको बताये सियारामको पुजाये
शुद्ध जीवन बनाये औ रटाये सियाराम हैं ।

हिन्दुत्व बचाये सब कलह मिटाये
सत्य धर्मको बढाये दिये प्रेम अभिराम हैं
मंगल आनन्दकन्द तिन रामानन्दाचार्य
यतिपति पादपद्म करत प्रणाम हैं ॥४॥

सब जग कारन औ पालन करनहार
भजे कालकाल प्राणप्राण रघुराजको
धर्मको बढाय मत विशिष्टा द्वैत कहि
सदा अनुसरे रामानन्द यतिराजको ।
परात्पर ब्रह्म सीतानाथको बतायके जो
बताये हैं भक्ति भवाम्बुधिके जहाजको
मंगल नमत तिन मंगलजलधि महा
द्वारपीठाचार्य टीलाचार्य व्रतिराजको ॥५॥

करुणानिधान राम जानकी औ हनूमान्
ब्रह्मा औ वशिष्ट पराशर व्यासाचार्यको
शुक पुरुषोत्तम बोधायन औ गंगाधर
सदानन्दाचार्य आदि परम्पराचार्यको ।
श्रीराघवानन्द तथा भाष्यकार जगद्गुरु
रामानन्दाचार्य औ अनन्तानन्दाचार्यको
मंगल नमत कृष्णदास टीलाचार्य आदि
सहजरामाचार्य तक सर्व जिह्वाचार्यको ॥६॥

उरदृगतिमिर विभञ्जन अञ्जन शुभ
वन्दन किये नशावै दुष्ट ग्रह–योग को
श्रद्धा करि पान किये जागै राम–भक्ति हिये
पावै तब लोक परलोक सुख भोग को।
जेहि बिना व्यर्थ सब ज्ञान दान करतब
जप तप याग वृथा साधैं जन योगको
मंगल नमत गुरुदेव पादपद्म–रज
सञ्जीवनी–चूरण जो नाशै भव–रोग को ॥७॥

सिया रूप लखि हेमलता न सलोनी लागैं
रामरूप लखि नीलमणि न सुहात हैं
दोउन वदन देखि चन्द मन्द पडि जात
नयन विलोकि इन्दीवर कुम्हिलात हैं।
काले घुंघराले केशपाशको विलोकि पुनि
काली काली अलि–अवलिहु सकुचात हैं
मंगल कहत अभिराम सियाराम लखि
भक्त जन गण बारबार बलिजात हैं ॥८॥

हाथ हैं जलज मंजु अंगुरी पंखुरी सम
पादहू जलज आभा दिव्य नख जात हैं
मुसकात वदन जलज चढैं रदमोती
हृदय जलज कृपा मधु उमडात हैं।

मद्न-पताका-मीन युग सम लोल दोऊ
नयन जलज बडे कान लगि जात हैं
मंगल कहत अभिराम राम-तनु सर,
नीलरूप जल, अंगजात जलजात हैं ॥९॥
अंगजात=अंगसमूह । जलजात=कमल

रतनसिंहासन पै सियाराम लखि कवि
कविता बनाये तहां न्यारा न्यारा ढंग है
कोई कहै सीता संग राजा राम तथा राजैं
रति के सहित यथा राजत अनंग है
कोई कहैं सीता सह सोहैं अति राम तथा
सोहत पयोद यथा विद्युत के संग है
मंगल कहत सियाराम सुषमाके सिन्धु
उपमा कथन शोभा-कथन-पामग हैं ॥१०॥

कर पद कंजनकी नेत्रयुग खंजनकी
केश भृङ्गपुंजनकी मंजुता हरत हैं
दन्त कुन्द कलीमद वदन शसाङ्क मद
भौह काम चापमद चूरही करत है ।
पीतपट दामिनकी तनु नील मणिनकी
स्वेद-विन्दु मोतिनकी कान्ति निदरत हैं
मंगल मंगल-निधि राम रूप जलनिधि
तहां उपमान-विधि फीकीही परत हैं ॥११॥

शस्त्र–घाव लागे कोई कोई रोग लागे पुनि
जल बूडि कोई कोई आग जरि मरते
मरत बहुत जन ध्यान देके देखे हम
कोई न कोई निमित्त पायकेही मरते ।
धनी मानी राव रंक निबल सबल सब
आग जल शस्त्र रोग प्रलयमें मरते
मारकको मारि बचै मंगल बचावै सोई
भजो सियाराम अस सोई देख परते ॥१२॥

धन जन आयु तथा कर्म ज्ञान पायके ही
लोकनमें लोगनके मान बहु होत हैं
इन्हींके मिलन हित लोग दौडा दौडी करैं
इनही के हेत ही उपाय सब होत हैं ।
कोई न विचारै धन जन आयु आदिनके
जनन मरन कौन वस्तुमेंसे होत हैं
मंगल कहत निगमागम बजाइ कहैं
सियाराम छोडि और कोईसे न होत हैं ॥१३॥

मत्स्य और कच्छप तथा बराह रूप धरि
आधार बनैं औ वेद भूमिको बचावहीं
प्रहलाद तथा देव वृन्दनके रक्षणको
नृसिंह वामन रुप धरिके सिधावहीं ।

जामदग्नि राम कृष्ण बुद्ध कल्की रूपधरि
रावण कंसादि दुष्ट मारि धर्म थापही
मंगल कहत अवतारी रामचन्द्र बहु
अवतार धरि साधु रक्षणको आवहीं ॥१४॥

अवनति विनाकी उन्नति सियाराम देहिं
दुखसे रहित सुख देत सियाराम हैं
जनम बिनाकी मृत्यु होत सियाराम भजे
बुढाई विना जवानी लसे मुक्ति धाम हैं ।
मुक्तिकी सम्पति सदा विपति रहित होति
शोक बिना हर्षभरे मुक्तनके गाम हैं
सबपति सबहेतु सबहि सम्हारैं व्यापि
मंगल अगति गति एक सियाराम हैं ॥१५॥

योगिनके ध्येय ईश ज्ञानिन के ज्ञेयब्रह्म
भक्तनके भगवान् प्रेमसे द्रवत हैं
सर्व विश्व-मूल और सर्व विश्व-आत्मा हैं
जेहिका आधार पाय सर्वही रहत हैं ।
वन्दी सम वेद कहैं जेहिका महान् यश
कर्मनकी बन्दि जेहि नामसे कटत हैं
मंगल भजहु नित मंगलके हेतु राम
सर्व जग सिरजि जो पालन करत हैं ॥१६॥

सर्व–ईश दीन–बन्धु शुभ गुणगणसिन्धु
सर्व शक्तिमान् राम दयाके निधान हो
अद्वितीय विश्व–हेतु रम्य रघुवंश–केतु
सर्जत सुरक्षत संहारत जहान हो ।
सर्वविश्व आप माहिं आप सर्वविश्व माहिं
अणुसे अणु हो औ महान् से महान् हो
मंगल मंगल–निधि भजैं ईश इन्द्र विधि
रक्षा करो नाथ आप आपही समान हो ॥१७॥

पतितपावन नाथ आप सम और नहीं
सुमेरु पतितमालाका मैं सरनाम हूं
सन्त गुरु देवकी कृपासे अब नाथ ! तव
दास बना, निपट अबोध औ निकाम हूं ।
कृत पाप कर्मनके गञ्जका गञ्जन हार
चेति जपि तारक रटत राम नाम हूं
मंगल दयाके सिन्धु राम दया करि तारो
तव पादपद्मनका नाथ मैं गुलाम हूं ॥१८॥

बल नाहिं मोरे धन जन नाहिं मोरे पुनि
बल धन और जन मोरे एक राम हैं
मोरे भूमि घर नाहिं सिद्धि औ समृद्धि नाहिं
भूमि घर सिद्धि औ समृद्धि मोरे राम हैं ।

गांवमें इज्जति नाहीं मति नाहीं गति नाहीं
इज्जति औ मति गति मोरे एक राम हैं
मंगल कहत दीनवन्धु अखिलेश राम
तुम बिन मोरे कोईसे न कोई काम हैं ॥१९॥
अखिलेश=सर्वके ईश्वर । अखिल=सर्व

मनका मलीन मम पातक हैं अति पीन
नाहीं गाम ग्रास मोरे नाहीं धन धामही
स्वार्थ परमार्थसे विहीन दीन सब विधि
निरादर-भाजन न जन नाहिं ठाम ही ।
जीवनकी गई बाजी मन हुआ नहिं राजी
सत्संग कीन न न कीन सत्कामही
मंगल दया-निधान राम दया करि देहु
'गाऊं तव गुण-गान रटूं तव नाम ही' ॥२०॥

विषय प्रसंग वारि देहु कथाका प्रसंग
कुसंग निवारि नित्य सन्त-संग दीजिये
अन्य-आस तजि करि आस औ विश्वास तव
दास-दास बनूं ऐसी मेरी मति कीजिये ।
पापवृत्तिवाला मन धर्मवृत्तिवाला करि
रघुनाथ तव प्रेम मतवाला कीजिये
मंगल दया-निधान दयाकरि सियानाथ
बूडौ भवसिन्धु माहिं बाहिं गहि लीजिये ॥२१॥

निशिदिन शेष औ गणेश यदि कहैं तऊ
तव गुण-जलधिका आवत न पार है
चतुरन शिरोमणि वेद औ विद्वान् कहैं
अनुपम तव नाम-महिमा अपार है।
पतित परम कुविचारी हुं विकारी महा
नाथ! पर लिया तव नामका आधार है
मंगल कहत तारो **मंगल**-भवन राम!
पतित-उद्धारकारी विरद तुम्हार है ॥२२॥

शुचि हिन्दू-धर्म अन्य धर्ममे विलीन होत
हिन्दू नारी नर हिन्दू नहिं कहलावते
वेद औ पुरान गीता आदि ग्रन्थ जारे जात
मन्दिर औ मूर्त्ति कही देखि नहिं पावते।
हिन्दू-संस्कृति नाम मात्रही की शेष होति
उपवीत तोडि सभी चोटी कटवावते
मंगल मंगल-निधि परात्पर ब्रह्म राम
रामानन्दाचार्य रूप धरि जो न आवते ॥२३॥

सम्प्रदाय नाव बहि जात वादीमत धार
यदि यतिपति रामानन्द न बचावते
विशिष्टाद्वैत मत श्रौत न प्रथित होत
यदि श्रुति सूत्र गीता भाष्य न बनावते।

राम–ध्यान राम–गुण–गान करि लोग किमि
  भवसिन्धु तरि नित्य राम–धाम पावते
मंगल मंगल–निधि परात्पर ब्रह्म राम
  रामानन्दाचार्य रूप धरि जो न आवते ।।२४।।

श्रौत=वैदिक । प्रथित=प्रसिद्ध ।

तुलसी कबीर टीला अग्र नाभा आदि द्वारा
  हिन्दुत्व बचाया राम–भक्तिको दृढाइके
रामके चरित गुण यशका प्रकाश करि
  भव–भीति टारी मुक्ति–मार्गको दिखाइके ।
श्रुति सूत्र गीताका बताया युक्तियुक्त अर्थ
  आनन्दभाष्यनसे कुतर्क को हटाइके
मंगल कहत भव–सिन्धुसे उबारे जन
  रामानन्दाचार्य वेद–धर्मको बचाइके ।।२५।।

भिन्न भिन्न मति जन सुख धर्म पावैं नहिं
  एकमति जन नित्य सुख धर्म साधहीं
भिन्न मति जन राज–गौरव न पाइ सकैं
  एकमति जन राज–गौरवको साधहीं ।
भिन्न भिन्न मति जन शान्ति नहिं पाइ सकैं
  एकमति जन भव्य विश्व–शान्ति साधहीं
मंगल न भिन्न मति जन राम पाइ सकैं
  एकमति जन गाइ रमे राम साधहीं ।।२६।।

दुर्लभ वैष्णव जन दुर्लभ वैष्णव व्रत
दुर्लभ वैष्णव भक्ति भाग्यसे मिलत है
दुर्लभ वैष्णव-पाद पानी पाप-शून्यकरें
पारस परसि लोहा कांचन बनत है।
दुर्लभ वैष्णव-सेवा करे भक्ति रस मिलै
पिया भक्ति रस जन अमर करत है
दुर्लभ वैष्णव धर्म मंगल गहत जोई
तेहि पाद तीन लोक वैभव परत है ॥२७॥

बार बार नाचि ताल ठोंकिके पितर कहैं
वशमें वैष्णव हुआ रक्षा खूब करि है
जहां लगि वैष्णव न कुलमें जनम लेय
तहां लगि पितृचक्र भवचक्र फिरि है।
श्रीवैष्णव जेहि थल निमेष मात्रहु रहैं
तीर्थ तीर्थदेव चक्र तहां वास करि है
मंगल मंगल-निधि वैष्णव-शरण गहे
बल हीन बालकहु कालसे न डरि है ॥२८॥

तुलसी पहिरि गले एक कण खाये फल
शत यागसे अधिक होत भाग जागते
तुलसी विहीन जन-अन्नजल ग्राह्य नहीं
तुलसी सदाही धारो सोवत औ जागते।

तुलसी पहिरि गले नर जो नहात तब
गंगादि नहाये सम पाप दूर भागते
मंगल कहत गले लसी तुलसीही देखि
तेजसे तमस् सम यम भागै लागते ॥२९॥

तमस्=अन्धकार

ऊर्ध्वपुण्ड्र पदाकृति द्वादश सुहायँ अति
श्वेत पुण्ड्र वीच रम्य रक्तश्री सुशोभती
गले विलसत पुनि तुलसीका दिव्यमणि
भुजनमें राम चाप बाण छाप सोहती ।
राममन्त्रराज लिये दास्य पर नाम किये
कृपा करि राम-भक्ति जासु मन मोहती
मंगल मंगलरूप सोई जन वैष्णव
ताहीकी चरण-धूलि कर्म-बन्ध तोडती ॥३०॥

दीजिये अवश्य दान देश काल पात्र देखि
कहत हैं सन्त शास्त्र गीता भी कहत है
अन्न वस्त्र गाम कोई कोई धन धाम देत
जय हेत कोई शस्त्रदानही करत है ।
तहां अन्न वस्त्र भूमि धन आदि दाननसे
ज्ञानका जनक विद्या-दानही बढत है
मंगल कहत जन-अभय करन हेत
राम मन्त्र दीक्षा दान सबसे चढत है ॥३१॥

जनक=कारण

श्रुतिगण मार्ग दिये हरि गीता—गान किये
व्यास सूत्ररूप कहे खूब ध्यान दीजिये
बिना गुरु ज्ञान नही बिना ज्ञान भक्ति नहीं
बिना भक्ति मुक्ति नहीं कोटि युक्ति कीजिये ।
चित्तको एकाग्र करि गुरु पादपद्म धरि
नम्रतासे सेइ पूंछि मन्त्र ज्ञान लीजिये
श्रीआनन्दभाष्य सुनि विशिष्टाद्वैत गुनि
कहत मगल मुनि राम—भक्ति कीजिये ॥३२॥

बहु अन्न खानेसे न कोई पहलवान होय
पहलवान होय बहु अन्नके पचाने से
बहु ग्रन्थ पढे नहि कोई बुद्धिमान् होय
बुद्धिमान् होय यथा काल याद आनेसे ।
धनके कमानेसे न जन धनवान् होय
धनवान् होय जन धनके बचाने से
मंगल न धर्म जानेहीसे धर्माचार्य होय
धर्माचार्य होय जानि धर्माचार पानेसे ॥३३॥

शक्तिमान् अचतुर युद्धकी तयारी करैं
शक्तिमान् चतुर तो क्षमा शस्त्र गहते
बल करि वश किये काल पाय शत्रु बनैं
क्षमा करि वश किये नित्य मीत बनते ।

अशक्त-हनन नहीं भूषण है शक्तनका
शक्तनका भूषण तो क्षमा बुध कहते
मंगल न तिनका कुजन कुछ करि सकैं
सदाही जो जन क्षमा शस्त्र गहि रखते ॥३४॥

पंच इन्द्रियन वश हुआ परपंच करै
रात दिन भोगत है भोग तीनो तापका
कौडी वश भ्रात मात तातहूका घात करै
चोरै धन डर नहीं दीन द्विज शापका।
जोगवत पत्थर औ धातु नहिं धर्म करै
माटी में मिलावै अनमोल जन्म आपका
मंगल विलास करै सोचै नही यम-त्रास
यमराज लोक नही राज निज बापका ॥३५॥

अबला औ बाल वृद्ध जाति सगे मीतहू का
लूटि लूटि खात नित माल है हराम का
सबहीसे करै दगावाजी सब भांति कीही
रखै न हिसाब देश प्रान्त और गामका।
राक्षस पिशाच और दैत्यके कुकर्म करै
पामर पापी महान् बना नर नामका
मंगल पूंछे हिसाब कहा देयगा जवाब
गुनेगार हुआ सर्वेश राजा रामका ॥३६॥

धर्मको न नष्ट करो नष्ट धर्म नष्ट करै
जीवका रक्षण करै रक्षित स्वधर्म ही
बाढत अधर्म से औ देखत विजय भद्र
मूलके सहित सब नाशत अधर्म ही।
जीविकाके लोभ भय काम वशसे हू कभी
त्यागत न बुध किन्तु गहि राखैं धर्म ही
मंगल अनित्य जग सुख भोग तजि सुखी
होय नित्य जीव सेइ कल्पतरु धर्म ही ॥३७॥

पूर्व दिशा छोडि भानु पश्चिममें उगै भले
हिमकर-कर भले आगिहू वरसते
पीपरके पात सम सुमेरहु हालै भले
शीत होय अग्नि कोई छुइ न हों जलते।
पर्वतके शिखरके सबसे उपर पुनि
शिला माहिं भले मञ्जु कञ्ज-वृन्द खिलते
सज्जन-स्वभाव तऊ मंगल डिगत नाहीं
वचन स्वीकार करि कभी न बदलते ॥३८॥

नहीं है सो सभा जहां वृद्ध जन होंय नहीं
सभा सोई जेहि माहिं वृद्ध जन राजतं
नहीं हैं सो वृद्ध धर्म कहत डरत हैं जो
वृद्ध जन लोभ भय छोडि धर्म भाषते।

नही है सो धर्म जेहि मध्य सत्य नहीं होय
सत्य युक्त धर्म सन्त वृन्द सदा मानते
नहीं है सो सत्य जेहि माहिं छिपा होय छल
छल हीन सत्य सन्त मंगल बखानते ॥३९॥

सत्य परमेश्वरने सत्य ही जगत रचा
सब जग माहिं सत्य ईशही समान है
सत्यको जो छोडै ईश-शासन सो नर तोडै
"सत्यंवद्" ईश्वरका शासन महान् है ।
पातक न जग माहिं झूठके समान कोई
कोई तप नाहीं पुनि सत्यके समान है
तापसे बचावै औ बचावै काल शापसे हू
सत्य सम मंगल सुसाधन न आन है ॥४०॥

नीति तत्त्व ज्ञानी जन पेट भरि निन्दा करै
अथवा बडाई करैं श्रेष्ठ कर्म जानिके
लक्ष्मीजी भव्य मानि चाहे चली आवैं घर
अथवा सिधावैं दूर नीच कर्म मानिके ।
अधर्म समुझि यम-गण चाहे आज मारैं
जिलावैं युगान्त तक चाहे धर्म जानिके
मंगल कहत अतिधीर धर्मवीर जन
न्याय मार्गसे न हटै कभी भीति मानिके ॥४१॥

स्वप्न-राज साज जिमि थोडी देरही को होत
जग-राज-साज तिमि थोडे दिनही रहैं
स्वप्न बुद्वि बल जिमि थोडी देर ही रहत
जग बुद्धि बल तिमि थोडे दिनही रहैं ।
स्वप्न दार दारक रहत जिमि थोडी देर
जग दार दारकहु थोडे दिन ही रहैं
मंगल मंगल-निधि राम भूलि भूलो कत
ये मंगल रागरंग थोडे दिनही रहैं ॥४२॥

तनु अभिमान नित खान पानहीका ध्यान
राम न भजत दिन नीके चले जात हैं
तप दान ज्ञान ध्यान करत न राम-गान
जीवनके क्षण सब खाली चले जात हैं ।
आचार विचार सब छोडे अनाचार रत
रोवै मेरे यशके प्रचार रहे जात हैं
मंगल अवसर दिये अन्तमें हिसाब लेंय
हियगत राम सब देखे सहे जात हैं ॥४३॥

जननीके उदरसे निकसिके बाल शिशु
धाइ पुनि पिया सुख पयोधर मातके
दिन दिन मोह ममताही में बंधत, राखै
हिय तिय बास, सुख भूला मात तातके ।

जीवनके दिन जात नहिं लखि परै तेहि
दौडि दौडि देखै नाचरंग जात जातके
मंगल मंगल चहै सियाराम भूलि जन
सब लुटै काल अन्त चोर जिमि रातके ॥४४॥

देखैं नहिं निज दोष नित देखैं पर दोष
अपने न गिनै पर दोष गिनि राखहीं
कुकरम करत न तनिक डरत मन
कुकरम-फल दुख रात दिन चाखहीं ।
भगवत् भागवत किंकर बनत नाहीं
तासु फल रोगी बने पडे पडे कांखहीं
मंगल मंगल निधि राम नाम भाषैं नहिं
कुत्सित अहितकर शब्द शठ भाषहीं ॥४५॥

युद्धकारी शान्ति-हेतु युद्धको बताय करि
पोषक साहित्य जन-मानस बनावहीं
युद्धको अशान्ति कारी कहि साधु शान्तिकारी
साहित्य औ जन-मन शान्तिसे सजावहीं ।
शान्ति-सन्धि करि कलि-जन सेना-साज साजैं
उत्तर पयान कहि दक्षिण सिधावहीं
मंगल वारन-रद सम जन अभिप्राय
अन्तर में और और बाहर बतावहीं ॥४६॥

लोभी जन जहां धर्म–सेतु छिन्न भिन्न करैं
जरि रहे पट सम सोई देश त्यागिये
जहँा जन जीवनके हेत अधरम करैं
भुजग–निवास सम सोऊ देश त्यागिये।
क्षणिकहि लाभ हेत जहँा जन धर्म करैं
ठग जन–वास सम सोऊ देश त्यागिये
जहॅा जन डाह तजि राम हेत धर्म करैं
मंगल मंगलकर देश सो न त्यागिये ॥४७॥

जनकी जवानी पुनि भूधर–तरंगिनीसी
करत तूफान अति वेग बही जात है
जीवनके जीवन भी जल बुदबुद सम
द्रुतगतिमान् औ अचानक विलात हैं।
भोग दान करैं नाहीं धन पाय जन जग
चोरे आगि जरे राजहरे बिललात हैं
मंगल कहत सुर दुरलभ तन पाय
वृथाही गुमाय जन अन्त पछितात हैं ॥४८॥

द्रुतगतिमान्–शीघ्रगतिमान्।

कुत्सित राजाके राज सुख शान्ति नाहिं मिलैं
प्रजा कर भरि भरि दुखीही दिखात है
तिमि लोक माहिं पुनि कुमीत मिताई किये
दुख छोडि नाहिं सुख रंचहू दिखात है।

तैसेही कुनर औ कुनारी सग व्याह भये
नरक मद्दश लेश सुख न दिखात है
कहत मंगल मुनि कुशिष्य पढाये तिमि
अपयश तजि जग यश न दिखात है ॥४९॥

कुत्सित=खराब

अनुद्यमी लोगनका जगमें नशात धन
असमान लोगनकी मित्रता नशात है
दुराचारी लोगनका कुल पुनि नष्ट होत
धन लोभी लोगनका धर्महू नशात है।
कुव्यसनी लोगनका विद्या फल नष्ट होत
मितंपच लोगनका सुखहू नशात है
कुसचिव लोगनके मंगल प्रमाद सेही
इह राजा लोगनका राजहू नशात है ॥५०॥

मितंपच=कृपण

उखडे जमाय फूल चुनैं न ढहाय तरु
लघुहिं बढाय नित वक्रहीको मोडते
अति कुम्हिलायेनको सींचि हरा भरा करि
परवृद्धिरोधकको मूलसे ही खोदते।
नतको उठाय जन-प्रेमको बढाय पुनि
जन दुख कर पथ कंटकको तोडते
मंगल मंगलकर कहत सुराजनीति
माली सम बनि राजा राज-सुख भोगते ॥५१॥

राज पाट हाथी घोडा शोभाकर बनैं कैसे
मन नहीं राजी सुधि करै यमगणकी
ऊनी रेशमी औ सूती दुशाला दुपट्टा धोती
शोभा-हेतु बनैं कैसे जाति है कफनकी।
नाशमान मोती हीरा हारहू न अलंकृति
चोर नृप हरैं कभी मौत करैं जनकी
मंगल मंगल-निधि सियाराम भक्ति तथा
सत् शिक्षा अलंकृति मानवके तनकी ॥५२॥

अलंकृति=अलंकार (भूषण)

मूरख स्वभाव नहीं छोडै विधि सिखयेहु
कोयला कपूर नहिं होय रंगे रंगमें
मोतीके चुगाये काग होत नहीं कलहंस
सुरभि न होति शुनी नहवाये गंगमें।
नहवाइ गज अंग चन्दन लगाये कहा
आप शिर धूरि डारि होत सोई ढंगमें
मंगल कहत राम मंगल-जलधि भजो
खोओ न समय राम-विमुखन-संगमें ॥५३॥
सबकी भलाई करो कभी न बुराई करो
सांचीही कमाई करो सदा सांच बोलिये
राममेंही चित्त रखो भक्ति-रस-स्वाद चखो
विश्वरमे राम लखो बुद्धि नेत्र खोलिये।

करो पुरुषारथको गहो परमारथको
तजो निज-स्वारथको बात नहिं छोलिये
सर्व घडी सर्वयाम तजि चित्त-सर्वकाम
मंगल इह ललाम रामरंग घोलिये ॥५४॥

साधुजन संगति में जाय नहिं जन तब
परात्पर ब्रह्म राम-कथा नहिं मिलि है
रामायण-कथा यदि सुनै नहिं जन तब
मोह महाभूधर हिलाये नहिं हिलिहै ।
मानवका मोह-नाश होय नहिं यदि तब
राम-पादपद्म-अनुराग नहिं मिलिहै
मंगल मंगल-निधि राम-पद-भक्ति बिना
कर्म बद्ध जीवनसे मुक्ति नहिं मिलिहै ॥५५॥

लोगन कल्याण हेत साधु जन फिरैं नित
मुक्ति-पथ भक्ति देत मायासे बचावही
माया रूप सुन्दरीका रूप धरि सजै, होंय
कामी काम-वश साधु मन न चलावहीं ।
माया-निधि-रूप धरि पथमें दिखाय कभी
लोभी लोभैं साधु जन आंख न उठावहीं
मंगल कहत नित राम-प्रेमरस चाखैं
मायाविनी माया कहँ साधुही नचावहीं ॥५६॥

जानैं जन भ्रात सम परनारी मात सम
क्रोधी सम नहीं बात बात में रिसात हैं
मानैं मान शाप सम प्रभुताहु पाप सम
धन धाम भाग देखे थल तजि जात हैं।
देखैं सिद्धि शूलि सम धन देख धूलि सम
स्वर्ग अपवर्ग हेत नहीं ललचात हैं
मंगल सकल तजि सियाराम नित्य भजि
उपकार करि साधु जन हर्षात हैं ॥५७॥

सोई भक्ति अधिकारी जेहि जन जीभ मंजु
सन्तनके गुण-गण-गान रंग रंगी है
सोई दिव्य ज्ञानवान् जेहि जन मति अति
सन्तनके पादपद्म प्रेम रस पगी है।
सोई ध्यानी सोई योगी जेहि जन चित्तवृत्ति
जग ध्यान तजि सन्त ध्यान हेत जगी है
मंगल कहत सोई सियाराम कृपा पात्र
सन्तन रिझावन लगन जेहि लगी है ॥५८॥

सन्तनके सेवन समान नही जप तप
सन्त-सेवा सम योग याग न महान् हैं
तीरथ-भ्रमण नहीं सन्त-सेवा तुल्य पुनि
सन्त-सेवा सदृश न व्रत और दान हैं।

सन्त-सेवा सम नहीं ज्ञान सुखकारी जग
सन्तनके सेवनके तुल्य नहीं मान हैं
मंगल मंगलनिधि भगवान् राम और
भक्ति गुरु सन्त चारो एक ही समान हैं ॥५९॥

भोगनके रोगनसे लोगनको काढि नित
सन्त जन जीवनकी कर्म फांस काटते
अन्तर औ बाहर पवित्र करि दर्शनसे
सन्त जन जीवनके पाप-पुंज जारते।
दिव्य उपदेशनसे लोकको जगाय सन्त
मद काम क्रोध लोभ चोरनको डाटते
मंगल कहत दयावान् सन्त लोगनको
कुपथसे खींचि भक्ति-पथ वीच डारते ॥६०॥

बार बार मित्र भ्रात तात और मात मिलैं
दारक औ दार पुनि बार बार मिलते
बार बार राज साज गज रथ वाजि मिलैं
बल बुद्धि कोष जय बार बार मिलते।
बार बार विधि सूर्य चन्द्र इन्द्र लोक मिलैं
अनल अनिल लोक बार बार मिलते
मंगल मंगल-निधि सियाराम-दयासे ही
सन्त-संग राम-धाम कोई बार मिलते ॥६१॥

सेनापति मन संग इन्द्रिन को वश करि
विषय छुडाय राम-सेवा में लगावहीं
काम क्रोध लोभ और मोह मद मत्सरके
गढ खोजि खोजि सम भूमि पैं ढहावहीं ।
मायाविनी मायाकी माया निवारि मुक्तिपथ
संशय रहित अति सुगम बनावहीं
मंगल कहत जग-मंगल करन हेत
सन्त वीर राम-भक्ति-ध्वज फरकावही ॥६२॥

साहूकार संगति से साहूकार होत जन
चोर जन संगतिसे चोर होत जन हैं
लोभी जन संगति से लोभी ही बनत जन
त्यागी जन संगतिसे त्यागी होत जन हैं ।
कामी जन संगतिसे कामीही बनत जन
क्रोधी जन संगतिसे क्रोधी होत जन हैं
मंगल असन्त संग करत असन्त जन
सन्त जन संगतिसे होत सन्त जन हैं ॥६३॥

रमा औ रमेश युत शेषके समान राजै
रकार मकार युत राम नाम जित है
धन धाम राज छोडि प्रीतिसे प्रसन्न होय
गभीर न थाह मिलै प्रेम पय थित है ।

शान्ति सुधा किरणसे तीन विध ताप हरै
विधु सियाराम चारु चरित लसित है
मंगल मंगल गुण सिन्धु सियाराम–भक्त
सन्तन–समाज–सिन्धु प्रणमत नित है ॥६४॥

धन गया मान गया कला कुशलाई गई
दिव्य अंग अंगनकी मंजुता नशानी है
कांपैं शिर हाथ पांव कटि अति नमि गई
नाक नैन मुखहुसे गिरै नित पानी है।
कान नहिं सुनैं और आंख नहिं देखैं पुनि
टेकनके हेत एक लकडिहु आनी है
मंगल मनुज तोऊ इच्छत विषय विष
यह एक नहीं बहु मौतकी निशानी है ॥६५॥

तृष्णा परवश नर परत समुद्र माहिं
मोती नहिं मिलि चाहै हाथ लागै पंकही
तृष्णा परवश ह्वैके अरि पै चढाई करैं
राजको गुमाय राजा बनैं भले रंकही।
तृष्णा परवश जन नाना विध पाप करैं
मरि दुख भोगैं जग लहिके कलंक ही
मंगल सन्तोषी सन्त सुख भोगैं राम भजि
चमकावैं दशो दिशि यशका मयंकही ॥६६॥

हाय हाय करि व्यवसाय हित दौड़ै जग
पेटमे भरत पुनि अन्न आध सेर ही
जगके प्रपंचनमें रचि पचि रहै जीव
जीवन समाप्त जानै नहिं भई देर ही।
मंगल कहत नही दीन कुछ दीननको
मरि चला कौन न तो सियाराम टेरही
असन्तोषी जन जोरि जोरिके मरत पुनि
जारिके कुटुम्बी जन खात सुख तेरही ॥६७॥

तृष्णासे दुखित जन भोजन औ वस्त्रनको
फिरत ललात रोकैं नहीं लोल चितही
शर चाप धरे सावधान राम धावैं सुनि
करत पुकार हैं प्रपन्न जन जितही।
भजो राम और नहीं पाप करो कोई ठौर
नही अस ठौर नहिं रमे राम जितही
मंगल मगल-निधि रामका भरोसा राखो
विश्वम्भर नाम विश्व भरैं पोषैं नितही ॥६८॥

प्रपन्न=शरणागत

छिन छिन मान करि मनको मनाइयत
मानत न मन तोऊ अन्य और सटकत
विषफल विषयन हित ललचात चित
रोके न रहत लोल हठ करि गटकत।

सन्तनके सत्पथ राखेहु रहत नाहीं
चोर जुआखोरनके पथ नित भटकत
मंगल दंगल नाच रंग देखै रात दिन
राम कथा कीर्त्तनमें जात शिर पटकत ॥६९॥

शाक पात रूखा सूखा खाइके गुजारा करो
परकी मिठाई देखि नहीं ललचाइये
धूनी जूनी कमरीसे जैसे तैसे दिन काटो
शाल औ दुशाल लखि चित न चलाइये ।
निज पूर्व कर्म फल श्रम करि पाय पुनि
ईश उपकार मानि मनको मनाइये
मंगल कहत ध्यान राखो सब जाय नहीं
सब जात देखि जोई बचैसो बचाइये ॥७०॥

जूनी=पुरानी

शंका बिन सुबरन लंकापति दशमुख
जानकीको हरिके गंवाई निज-जान है
किष्किंधा-राजा महाबलशाली बालिहूने
लघुभ्रात-नारि ले गंवाई निज-जान है ।
अजोड पहलवान बलवान् कीचकहु
द्रौपदीको छेडिके गंवाई निज-जान है
मंगल कहत परदार-रति नाहीं करो
परदार-रति विषपान के समान है ॥७१॥

सुधा सम प्रथम मिलत जोई सोई पीछे
तिय पिय मुख नाहीं लागत सुहावने
अनुकूल कालमें कलेजा हिम करैं जो सो
प्रतिकूल काल हुए लागत जलावने।
जीवनके मनहर जीवनमें होवैं जोई
काल-गाल गये सोई लागत भयावने
मंगल मंगल-निधि सियाराम बिना और
कोई नहिं सब दिन लागत सुहावने ॥७२॥

कूडा कचरेसे भरपूर धूर देह यह
जाहि लिये मुकुर विलोकैं जन घूरि घूरि
मुख आंख नाक हाथ पांव भरे हाडनसे
प्रशंसत जिन्हें कवि जन गण भूरि भूरि।
ढांकी मोरीसम रम्य चर्म ढांकी देह माहिं
मल मूत्र रक्त मांस कफ भरे थूरि थूरि
मंगल कहत नर नारी तनु देखि लोभैं
मरे चिता जरे पुनि भागैं छोडि दूरि दूरि ॥७३॥

भूरि भूरि=वहुत बहुत

सम्पतिके रंग माहिं जीवन जीवन माहिं
सब ढिग रहैं नित हाजिर हजूरही
बिपतिमें परिगये प्राणके निकरि गये
नहिं आवैं पास कोई रहैं दूर दूर ही।

देह ढांके घूर सम दीखत कपूर सम
रोग लागे मरे सगे फेकैं घर दूर ही
मगल श्रीराम भजो सगे गेह नेह तजो
मौत परवाना लिये आवेगी जरूरही ॥७४॥

रसना विवश रस हेत मीन फंसि मरैं
कुरंगहु वेणु धुनि सुनि मारे जात है
कागज-मतंगिनीको देखिके मतंग-गण
स्पर्श हेत धाइ ढांके कूप परि जात हैं।
गन्ध मुग्ध भृंगगण कंटकसे वेधे जात
मोहि दीप-रूप पै पतंग जरि जात हैं
मंगल करत सावधान विषयोंसे बचो
मृत्यु फन्द मायाने लगाये पांच जात हैं ॥७५॥

सुबरन काया कोई सुबरनकी ही कहैं
जन्म जन्म जरे सडे माटी होत देह है
मिलेकीही सगी होत बिना मिले छोडि देत
वेश्याके सनेह सम देहका सनेह है।
मस्त करि जनकी जवानी औ कमानी खोवै
सुबीज खोवनहारि यथा खारी रेह है
मंगल मूरख मृत्युकारी देह-नेह करि
भूलत अमरकारी रामका सनेह है ॥७६॥

लाज छोडि सन्त–पाद पद्म–धूलि लेइ नहीं
जन्म जन्म मरै जीव कर्मभार ढोइके
सुख–धाम राम नाम गाइ न सुधारै भव
भावीको विगाडै दुखवीज पाप बोइके।
सीतारामजीको क्षण चिन्तत नमत नाहीं
अमोल समय खोवै रातदिन सोइके
मंगल कहत नहीं मंगल कमावै आय
जीवन गंवाय जीव अन्त जाय रोइके ॥७७॥

किये अभिमान रातदिन फूले फूले फिरो
यम आगे यह अभिमान नहि चलिहै
रातदिन घूमि घूमि खूब जोर शोर करो
यम आगे यह जोर शोर नहिं चलि है।
स्वार्थ हेत रात दिन दौडा दौडी खूब करो
यम आगे यह दौडा दौडी नहिं चलिहै
रातदिन मंगल विचारो ब्रह्म रामहीको
यम आगे औरका विचार नाहिं चलिहै ॥७८॥

सब चित् अचित् हैं ब्रह्मके शरीर किन्तु
ब्रह्म है शरीरी नहिं कोईका शरीर है
चित् और अचित् में व्यापि सदा ब्रह्म रहै
दोउनका आत्माही ब्रह्म, न शरीर है।

सर्वमतज्ञानिनका अति दृढ मत यह
व्यापकहि आत्मा औ व्याप्यही शरीर है
चित् औ अचित्कोहू कबहुं कहत ब्रह्म
जिमि 'मैं हूं' कहा जात मंगल शरीर है ।।७९।।

अर्थ—यहा पर चित् शब्दका अर्थ है जीव। जीवका स्वरूप आगे अर्थपञ्चक मे आचार्यवाद स्वयही करेंगे ।

अचित् शब्दका अर्थ है अचेतन (ज्ञान शून्य) तत्त्व । अचेतन तत्त्वके चार भेद हैं–नित्यधाम ज्ञान प्रकृति और काल ।

नित्यधाम कोही भगवद्धाम रामधाम मोक्षधाम नित्यविभूति त्रिपादविभूति परधाम और परमव्योम कहते हैं। साकेत लोक गोलोक और महावैकुण्ठही नित्यधाम है ।

ज्ञानकोही बुद्धि मति और धर्मभूत ज्ञान भी कहते है ज्ञान स्वय प्रकाश नित्य और प्रभाके समान सकोच विकाशवाला तत्त्व है। जीव और ईश्वर दोही ज्ञानवाले तत्त्व है।

प्रकृतितत्त्वकोही प्रधान और माया कहते हैं। प्रकृति द्रव्य सत्त्व रजस् और तमस् नामक तीनो गुणोका आश्रय है और नित्य है। प्रकृतिके चौवीस भेद है । मूलप्रकृति महत्तत्व अहकार एकादश इन्द्रिय (मन श्रोत्र चक्षु घ्राण रसन और त्वक् छ ज्ञानेन्द्रिय (वाक् पाणि पाद उपस्थ और गुदा पाच कर्मेन्द्रिय) पञ्चतन्मात्रा (शब्द तन्मात्रा स्पर्शतन्मात्रा रूपतन्मात्रा रसतन्मात्रा और गन्धतन्मात्रा) पञ्चमहाभूत (आकाश वायु

अग्नि जल और पृथिवी)। प्रकृतितत्त्व स्वयप्रकाश नही है किन्तु परप्रकाश अर्थात् जड है और ज्ञानशून्य है।

भूत वर्त्तमान और भविष्यत् व्यवहारोका हेतु कालतत्त्व है। काल तत्त्व ज्ञानशून्य नित्य विभु और जड है।

भगवान् श्रीरामजीही परात्पर ब्रह्म अथवा सर्वेश्वर हैं। वे नित्य सर्वज्ञ विभु (व्यापक) स्वयप्रकाश तत्त्व है। श्रीरामजीकी स्थिति पर व्यूह विभव अन्तर्यामी और अर्चावतार पाच प्रकारसे है।

अब उनासीवे कवित्तका अर्थ लिखा जाता है—

आचार्यपाद श्री मगलाचार्यजी कहते है कि—सभी जीव (चेतन) और ईश्वर ज्ञानातिरिक्त उक्तचारो अचेतन तत्व ब्रह्मके (श्री रामजीके) शरीर हैं। किन्तु ब्रह्म शरीरी (शरीरवाला=आत्मा) है। ब्रह्म किसीका भी शरीर नही है। क्योकि ब्रह्म उक्त दोनो चित् और अचित् तत्वोमे व्याप्त होकर रहता है इसलिये ब्रह्म उक्त दोनो चित् और अचित् तत्वोका आत्माही है शरीर नही है। क्योकि सभी मतोके ज्ञानियोका यह सुदृढ मत है कि व्यापकही आत्मा होता है और व्याप्यही शरीर होता है। **'यस्यात्मा शरीरम्'** (आत्मा (जीव) जिस ईश्वरका शरीर है) **'यस्य पृथिवी शरीरम्'** (पृथिवी जिस ईश्वरका शरीर है) इत्यादि श्रुतियोमे और **'जगत् सर्वं शरीरं ते'** (हे भगवान् श्रीरामजी यह चेतनाचेतन सम्पूर्ण जगत् तुम्हारा शरीर है) इत्यादि वाल्मीकि रामायण वाक्यमे भी उक्त चित् और अचित् तत्वोको 'ब्रह्मका शरीरही कहा है। शास्त्रमें

कभी कभी चित् और अचित् ब्रह्मशरीरोका भी ब्रह्म शब्दसे व्यवहार किया जाता है । जैसे मै शब्दका व्यवहार आत्माके लियेही होता है तो भो कभी कभी किसीके शरीरको छूकर 'कौन है' ऐसा पूंछने पर में हूं ऐसा उत्तर दिया जाता है ॥७९॥

शिष्य कहै गुरुदेव ! जीव ब्रह्म एक कि दो
गुरु कहैं दोऊ भिन्न कहैं ज्ञानी जनही
शिष्य कहै गुरु देव ! एक भये दोष कहा
गुरु कहैं एक भये सृष्टि नहिं बनही ।
ब्रह्म यदि जीव तब सुखरूप सृष्टि करै
करैं कार्य निज–दुखकर अज्ञ जनही
मंगल बहुत जीव अणु, ब्रह्म एक विभु
जीव ब्रह्म भिन्न कहैं शास्त्रके बचनही ॥८०॥

अर्थ—जीव और ब्रह्मका भेद अच्छी तरह समझमें आनेकेलिये श्रीमहामुनीन्द्रजी गुरु और शिष्यके सवादरूपसे कहते हैं–

शिष्य कहता है कि हे गुरु देव ? जीव और ब्रह्म दो हैं कि एक ?

गुरुदेव उत्तर देते हैं कि हे शिष्य ? ज्ञानी लोग जीव और ब्रह्म दोनोंको भिन्नही कहते हैं ।

आचार्यपादके इस कथनसे ध्वनित होता है कि जीव और ब्रह्मको एक कहनेवाले लोग अज्ञानी हैं ।

जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महाराज उक्त कथनको युक्तिसे सिद्ध करते है कि–यदि ब्रह्मही जीव है तो वह सुखरूप सृष्टि करै दुखरूप

सृष्टि न करै। अपनेको दुख करनेवाला कार्य तो अज्ञानी लोगही करते हैं। लोकोक्ति भी है कि "पाय कुल्हाडा देत है मूरख अपने हाथ"। ब्रह्मको तो '**यः सर्वज्ञः सर्ववित्**' इत्यादि श्रुतिया सर्वज्ञ सर्व–वेत्ता कहती हैं।

आचार्यपाद श्री मङ्गलाचार्यजी महाराज महामुनीन्द्रजी कहते हैं कि जीव बहुत (नाना) है और अणु परिमाणवाले है और ब्रह्म एक है और विभु (परममहत्व) परिमाणवाला है अर्थात् व्यापक है। शास्त्रके वचनही जीवोको और ब्रह्मको भिन्न कहते हैं। जीव और ब्रह्मका भेद कहनेवाले शास्त्र वचन नीचे लिखे जाते है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति॥

यह श्रुति श्वेताश्वतर उपनिषद् (४–६) की है।

अर्थ–जीव और ईश्वर सुन्दर पखवाले दो पक्षीरूप है। सर्वदा साथ रहते हैं और परस्पर मित्र हैं। देहरूप एक वृक्षका दोनोने आश्रय लिया है। उन दोनो मे से एक अर्थात् जीव कर्मफल सुख दु:खको स्वादिष्ट रूपसे खाता है अर्थात् भोगता है। किन्तु ईश्वर तो कर्मफल सुख दुखको नही भोगता हुआ विराजमान रहता है॥

समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनीशया शोचति मुह्यमानः।
जुष्टं यदा पश्यत्यन्यमीशमस्य महिमानमिति वीतशोकः॥

अर्थ–यह श्रुति मुण्डकोपनिषद् (३।१।२) की है। पुरुष अर्थात् भोक्ता जीव एक देहरूप वृक्ष पर निमग्न अर्थात् 'मै देह हू' इस प्रकार

इतश्च शारीराद्भिन्नः । 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति । भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥' 'तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।' 'यो मां पश्यति सर्वत्र' 'मयि सर्वमिदं प्रोतम्' 'सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनश्च' इत्यादयः स्मृतयः । चकारात्–"ज्ञाज्ञौ द्वावजावीशानीशौ" 'प्रधानक्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः' 'नित्यो नित्यानाश्चेतनश्चेतनानामेको बहुनां यो विदधाति कामान्' 'पृथगात्मानं प्रेरितारञ्च मत्वा जुष्टस्ततस्तेनामृतत्वमेति' इत्यादयः श्रुतयोऽप्युपासकत्वेन जीवमुपास्यतया च परमात्मानमुपदिशन्ति । अतो जीवादन्यः परमात्मेति ।

(आनन्दभाष्य १।२।६)

अर्थ–इससे भी परमात्मा जीवसे भिन्न है। 'हे अर्जुन सर्व प्राणियोको यन्त्र पर स्थितके समान अपनी इच्छासे भ्रमाता (घुमाता) हुआ ईश्वर सर्वप्राणियोंके हृदय प्रदेशमें स्थित रहता है।' 'हे अर्जुन सर्वभावोंसे उसी ईश्वरकी शरणमें जाओ' 'जो प्राणी मेरेको सर्वत्र देखता हैं' 'यह सम्पूर्ण जगत् मुझमें पिरोया हुआ (स्थित) देखता है' मैं सबके हृदय में सन्निविष्ट हूं। मुझसेही स्मृति, ज्ञान ओैर ज्ञाननिवृत्ति आदि होते हैं'। इत्यादि स्मृतिया। चकारसे 'ईश्वर और जीव दो जन्मशून्य तत्व हैं। एक (ईश्वर) ज्ञानी अर्थात् सर्वज्ञ हैं दूसरा अज्ञ अल्पज्ञ है। एक इश्वर है दूसरा अनीश्वर है' 'प्रधान (प्रकृति) और जीवोका स्वामी है गुणोका ईश (नियामक) है' 'नित्योकाभी नित्य और

चेतनोंका भी चेतन एकही ईश्वर बहुत (जीवों)के कामोंको करता है' 'आत्मा (जीव) और प्रेरक (ईश्वर) को पृथक्रूपसे मानकर ईश्वरकी प्रसन्नताको प्राप्त हुआ जीव अमृतपद (मोक्ष) को प्राप्त होता है।' इत्यादि श्रुतिया भी उपासक रूपसे जीवका और उपास्यरूपसे परमात्माका उपदेश करती हैं। इसलिये परमात्मा जीवसे अन्य है।

भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीने गीताके आनन्दभाष्यमे भी कहा है कि—

'शास्त्रं त्वनेकशो जीवेश्वरभेदमेव प्रतिपादयति।'

अर्थ—शास्त्र तो जनेको प्रकारसे जीवो और ईश्वरके भेदको ही प्रतिपादित करता है।

काशीजीमे आनन्दभाष्यकार श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज यतिराजके सिहासनपर उनके पश्चात् उनके प्रथम शिष्य श्री ११०८ जगद्गुरु श्री अनन्तानन्दाचार्यजी महाराज यतिराज विराजमान हुए हैं। अत एव श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी महाराज ही द्वितीय श्री रामानन्दाचार्य हैं। उन्होनेभी जीवको श्रीरामजीसे भिन्न श्रीरामाधीन कहा है, श्रीरामरूप नही कहा है। उनका कथन है कि—

'आत्मरूपं सदा चिन्त्यं सच्चिदानन्दरूपिणम्।
सेवासुखप्रदश्रीमद्रामाधीनं निरामयम् ॥ ३७॥

(सिद्धान्तदीपक)

द्वितीय रामानन्दाचार्य जगद्गुरु श्री अनन्तानन्दाचार्यजी महाराज के शिष्य श्री ११०८ जगद्गुरु श्री नरहर्यानन्दजी महाराज हैं। और जगद्गुरु श्री नरहर्यानन्दजी (जगद्गुरु श्री नरहरिदासजी) महाराजके

शिष्य **श्री** ११०८ आचार्यशिरोमणि गोस्वामी **श्री** तुलसीदासजी महाराज हैं। उनगोस्वामी **श्री** तुलसीदासजीने भी जीवोंको अनेक और पराधीन लिखा है और ईश्वर को एक और स्वतन्त्र लिखा है। इस प्रकार जीव और ईश्वरका भेद ही कहा है। वह इस प्रकार—

परवशजीव स्ववश भगवन्ता। जीव अनेक एक श्रीकन्ता॥

(**श्री** रामचरित मानस)

श्री टीलाद्वारपीठनामक **श्री** रामानन्दपीठके सस्थापक **श्री** ११०८ जगद्‌गुरु **श्री** टीलाचार्यजी महाराज व्रतिराजने भी जीव और ईश्वरका भेद ही कहा है—

यस्यात्मा यह श्रुति कहति जीवहिं राम-शरीर।
जगटीला विख्यात यह देही भिन्न शरीर॥

श्री टीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधीश **श्री** ११०८ जगद्‌गुरु श्री भरतदासजी महाराज महामुनीन्द्रने भी शिक्षामणिमाला में कहा है—

ज्ञानी ज्ञानस्वरूप है जीव नित्य सुखरूप।
भोग्य शेष भगवान् का नहिं हरि औ तनुरूप॥४३॥

मायावादी कहैं यथा चन्द्र जलबीच तथा
ब्रह्म-प्रतिबिम्ब जीव माया में दिखात है
कृपासिन्धु गुरुदेव कृपा करि कहो यह
सत्य वा असत्य मायावादिनकी बात है।
झूठी है, वे ब्रह्म मानें मंगल विशेष शून्य
मायामें तो प्रतिबिम्ब कैसे परिजात है

कैसे प्रतिविम्ब परै ब्रह्म सब थल व्यापै
ब्रह्मथलशून्य माया–थल न दिखात है ॥८१॥

अर्थ–श्री टीलाद्वारपीठनामक श्री रामानन्दमहापीठके स्थापक जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महाराज जीवके ब्रह्मप्रतिविम्बवादका खण्डन गुरु शिष्य सवादरूप से करते है कि–मायावादी लोग (अद्वैती लोग) कहते हैं कि 'जैसे जलमे चन्द्रका प्रतिविम्ब दिखाई देता है उसी प्रकार माया मे पडा हुआ ब्रह्मका प्रतिबिम्ब ही जीव है।' शिष्य कहता है कि हे कृपासिन्धु गुरुदेव ? कृपा करके कहिये कि यह मायावादियों की बात सत्य है अथवा असत्य है?

जगद्गुरु श्री मगलदासजी महाराज कहते हैं कि–मायावादियों की यह बात झूठी है। क्योंकि मायावादी लोग ब्रह्मको निर्विशेष मानते है अर्थात् मायावादियोके मतमें ब्रह्म गुण क्रिया आकार आदि विशेषणों से शून्यही माना जाता है। तब फिर निर्विशेष (विशेषणरहित) ब्रह्मका प्रतिबिम्ब मायामे कैसे पड सकता है?

कहनेका तात्पर्य यह है कि–चन्द्रमा मे तो गोल आकार होता है तथैव शुक्ल (सफेद) रूप होता है। इसलिये चन्द्रका प्रतिबिम्ब जलमे पडता है। ब्रह्ममे तो माया वादियोके मतमें न लाल पीला शुक्ल आदि रूप होता है, न गोल चौरस त्रिकोण आदि आकार होता है। तो फिर मायामे ब्रह्मका प्रतिबिम्ब कैसे पडेगा?।

अब मायामे ब्रह्मके प्रत्तिविम्ब पडनेका दूसरी रीति से खण्डन करते हैं—

विभुपरिमाणवाला होनेसे ब्रह्म व्यापक माना जाता है। अर्थात् ब्रह्म सभी स्थलों मे व्याप्त रहता है। कोई भी ऐसा स्थल नही है जहा ब्रह्म न हो। तो फिर माया किस स्थल मे रहेगी। क्योकि चन्द्र इत्यादि बिम्ब के सम्मुख चन्द्रादि शून्यस्थलमें स्थित जल दर्पण इत्यादि स्निग्ध पदार्थों में ही चन्द्र इत्यादिका प्रतिविम्ब पडता है। ब्रह्म सर्व स्थल में व्याप्त रहता है। ब्रह्मशून्य स्थलके न होनेसे ब्रह्म सम्मुख माया नही रह सकती। तो फिर सम्मुखस्थलमें न रही हुई माया मे ब्रह्मका प्रतिविम्ब कैसे पडेगा? छिद्ररहित छतके नीचे बन्द कोठरी मे स्थित जलमें चन्द्रका प्रतिविम्ब कभी नही पडता है। इस लिये "मायामें पडा हुआ ब्रह्मका प्रतिविम्बही जीव है" यह मायावादियोका कथन नितान्त (बिलकुल) मिथ्या है।

आनन्दभाष्यकार भगवान् श्री रामानन्दाचार्यजीने भी कहा है कि

"किञ्च तदीय सिद्धान्ते निरवयवस्य विभुनो ब्रह्मणः प्रतिविम्बोऽप्यसम्भवी। सावयवस्य परिच्छिन्नस्यैव च लोके प्रतिविम्बदर्शनात्।

[आनन्द भाष्य १-१-२]

अर्थ—और अद्वैतवादियो के सिद्धान्तमें निरवयव और विभु ब्रह्म का प्रतिविम्ब भी असम्भवित है। क्योकि लोकमें सावयव और परिच्छिन्न वस्तुके ही प्रतिविम्ब होते है ॥८१॥

शिष्य कहै गुरुदेव मायावादी गण कहैं
जग है विवर्त्त तीनकालमें न सांच है

सुनो शिष्य श्रुति स्मृति कहैं न विवर्त्त जग
किन्तु ब्रह्म-परिणाम कथनसे सांच है।
फिर एक प्रश्न पूछो कहैं मायावादी गण
जगका मिथ्यात्व भला मिथ्या है वा सांच है
सांच मानैं यदि, द्वैत जागेसे अद्वैत भागै
मंगल जो झूठ मानैं, होत जग सांच है ॥८२॥

अब श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्री रामनन्दमहापीठाधीश जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महाराज गुरु शिष्य सवादद्वारा मायावादी महानुभावो के माने हुए जगत्के मिथ्यात्वका निराकरण (खण्डन) करते हैं—

शिष्य कहता है कि हे गुरु देव ! मायावादी लोग (अद्वैती लोग) कहते है कि यह जगत् ब्रह्मका विवर्त्त है इसलिये तीनों कालमे सत्य नही है।

गुरुदेव कहते हैं कि हे शिष्य ? सुनो। श्रुति और स्मृति दोनो ही जगत्को ब्रह्मका विवर्त्त नही कहती हैं किन्तु जगत् को ब्रह्मका परिणाम ही कहती हैं। इसलिये यह जगत् सत्यही है मिथ्या नही है। किसी वस्तुके वास्तवमे अन्यप्रकार होनेको परिणाम कहते है। जैसे मृत्तिकाका परिणाम घट है। किसी वस्तुके अवास्तविक (अयथार्थ) अन्य प्रकार होनेको विवर्त्त कहते है। जैसे शुक्तिमे (सीपमें) रजत (चादी) के भास होनेपर वह रजत, शुक्तिका विवर्त्त कहा जाता है। मृत्तिकाका परिणाम घट मिथ्या नही है किन्तु सत्य है। "शुक्तिका

विवर्त्त रजत सत्य नहीं है किन्तु मिथ्या है।" ऐसा अद्वैतवादी लोग मानते है ।

विशिष्टाद्वैत वेदान्त सिद्धान्तमें तो शुक्तिरजत भी सत्य ही है मिथ्या नहीं है" यह बात मैने अपने पद्यात्मक अत्यन्त लघु निबन्ध **वेदान्तसिद्धान्तमार अथवा सिद्धान्तचालीसा** मे कही है कि—

सत्य जगत् रघुपति परिणामा ।
नहिं विबर्त्तका श्रुतिमें नामा ॥
यथा जाल मकडी तनु द्वारा ।
तिमि हरि–तनुसे जगत् पसारा ॥३०॥
सीप रजत–अंशनसे रांचा ।
तेहिसे सीपरजत है सांचा ॥
स्वल्प अंश वश नहिं व्यवहारा ।
तेहि कारण भ्रम–रूप प्रचारा ॥३१॥

जगत्‌को ब्रह्म (भगवान् श्री रामजी)का परिणाम कहनेवाली श्रुति तैत्तिरीयोपनिषद् में है—

सोऽकामयत बहु स्यां प्रजायेयेति । स तपोऽतप्यत । स तपस्तप्त्वा। इदं सर्वमसृजत । यदिदं किंच । तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत् । तदनुप्रविश्य सच्च त्यच्चाभवत् । निरुक्तश्चानिरुक्तश्च । निलयनश्चानिलयनश्च । विज्ञानश्चाविज्ञानश्च । सत्यश्चानृतश्च सत्यमभवत् । यदिदं किञ्च तत्सत्यमाक्षते । तदप्येषः श्लोको भवति । [तै० २।६।१]

अर्थ—उस ब्रह्मने चाहा कि 'बहुत हो जाऊ' 'आकाशादि रूपसे प्रकट होऊ''। उसने तप किया। उसने तप करके इस जगत्को बनाया। जगत्की सृष्टि करके वह ब्रह्म सृष्ट जगत्में प्रवेश किया। वह प्रविष्ट होकर निर्विकार और सविकार हुआ। शब्दवाच्य और शब्दसे अवाच्य हुआ। आश्राय और अनाश्रय हुआ। विज्ञान (अजड=स्वयं प्रकाश) और अविज्ञान (जड=परप्रकाश्य) हुआ। सत्य (चेतन) और असत्य (अचेतन) वह सत्य हुआ। जो यह जगत् है उसे सत्य कहते हैं। उस विषयमे यह श्लोक होता है।

जगत्को ब्रह्मका परिणाम कहनेवाली अनेक श्रुतिया हैं। विस्तार भयसे यहा नही लिखता हू

जगत्को सत्य और ब्रह्मका परिणाम कहनेवाली स्मृति–

ब्रह्म सत्यं तपः सत्यं सत्यश्चैव प्रजापतिः।
सत्याद् भूतानि जातानि सत्यं भूतमयं जगत्॥

[अश्वमेधपर्व ३५।३४]

ब्रह्म सत्य है, तप सत्य है और प्रजापति सत्य है। सत्य ब्रह्मसे सम्पूर्णभूत उत्पन्न हुए है। और पञ्चभूतमय जगत् सत्य है॥

ऐसीही अनेक स्मृतिया जगत्को ब्रह्मका परिणाम और सत्य कहती हैं। विस्तार भयसे सबको नहीं लिखा।

बोधायन वृत्तिकार श्री ११०८ जगद्गुरु श्री पुरुषोत्तमाचार्यजी यतिसार्वभौम के दादागुरु (गुरुके गुरु) श्रीसम्प्रदायाचार्य भगवान्

श्रीवेदव्यासजीने भी वेदान्तदर्शनके प्रकृत्यधिकरणद्वारा ब्रह्म (भगवान् श्री रामजी)को ही जगत्का उपादान और निमित्त दोनो कारण माना है।

आनन्दभाष्यकार भगवान् आदि श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराजने भी 'परिणामात्' सूत्रके आनन्दभाष्यमे कहा है कि—

"इतश्च जगत्प्रकृतिर्ब्रह्मैव। 'निरुक्तश्चानिरुक्तश्च निलयनश्चानिलयनश्च विज्ञानश्चाविज्ञानश्च सत्यश्चासत्यश्च सत्यमभवत्। यदिदं किञ्च। तत्सत्यमित्याचक्षते" इत्यविभक्तनामरूपातिसूक्ष्मचिदचिद्वस्तुशरीरकस्य कारणावस्थस्य ब्रह्मणो विभक्तनामरूपस्थूलचिदचिद्वस्तुशरीरत्वेन परिणामाज्जगदुपादानं निमित्तञ्च ब्रह्मैव। सर्वस्य चिदचिद्वस्तुनो ब्रह्मशरीरत्वं ब्रह्मणस्तदात्मत्वञ्च 'यस्य पृथिवी शरीरं यः पृथिवीमन्तरो यमयति स त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः' 'यस्यात्मा शरीरं य आत्मानमन्तरो यमयति स त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः' इत्येवमादिभिः श्रुतिभिः सिद्धमेव। मायिमतेऽस्य सूत्रस्यासङ्गतत्वं दुष्परिहरम्। यतस्तैः शुद्धस्य ब्रह्मण एव परिणामोऽभ्युपेयस्तथा च विकारित्वेन निर्विकारश्रुतिव्याकोपोऽनिवार्यः। यच्चात्र व्याख्यातं परिणामो विवर्त्त इति तदपि न विचारसहम्। दुग्धस्य दध्याकारेण परिणामवद्रज्जोः सर्पाकारेण परिणामत्वासम्भवात्। तात्विकोऽन्यथाभावः परिणामोऽतात्विकोऽन्यथाभावस्तु विवर्त्त इति परिणामविवर्त्तयोर्विभिन्नार्थकत्वान्न विवर्त्तवादस्यात्र प्रसरः। एवमवच्छेदप्रतिविम्बादिवादानामपि प्रकृतार्थविघातकत्वम्। अस्मन्मते तु "तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्" "अनेन जीवेनात्मनाऽनुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणि" इत्यादिभिः

श्रुतिभिः परिणामो विशेषणांश उपपद्यतेतराम् । विशेष्यांशे निर्विकारत्वमप्यक्षतम् । उभयोरपि ब्रह्मस्वरूपत्वमेवेत्येकस्यैवोपादनताऽपि सम्पन्नेति । वस्तुतस्त्वव्याकृतनामरूपयोर्व्याकरणमात्रमेव सृष्टिः सैव च परिणामशब्देनोच्यत इति सर्वं समञ्जसम् ॥

[आनन्दभाष्य १-४-१७]

अर्थ-इस (कहेजानेवाले) कारणसे भी जगत्का उपादानकारण (मूलकारण) ब्रह्मही है। तैत्तिरीयोपनिषद्की "निरुक्तश्चानिरुक्तश्च इत्यादि श्रुतिके प्रमाणसे नामरूपविभागरहित अतिसूक्ष्म चित् और अचित् शरीरवाले कारणब्रह्मके नामरूपविभागवाले स्थूलचित् और अचित् शरीरधारी (जगत्) रूपसे परिणत होनेसे जगत्का उपादान कारण ब्रह्मही है। "सभी चित् और अचित् पदार्थ ब्रह्मके शरीर हैं और ब्रह्म उनका (चित् और अचित् पदार्थों का) आत्मा है" इस कथनमें वृहदारण्यकोपनिषद् की "यस्य पृथिवी शरीरम्" (जिस (ब्रह्म)का पृथिवी शरीर है जो पृथिवीका नियमन करता है वह अमर अन्तर्यामी तेरा आत्मा है।) और "यस्यात्मा शरीरम्-" (आत्मा (जीव) जिसका शरीर है, जो आत्माका नियमन करता है, वह अमर अन्तर्यामी तेरा आत्मा है।) इत्यादि श्रुतिया प्रमाण हैं। माया वादियो (अद्वैतवादियो)के मतमें इससूत्र (परिणामात् (१-४-१७) की ऐसी असङ्गति होती है जो हटानेसे नही हट सकती है। क्योकि मायावादियोको शुद्ध ब्रह्मकाही परिणाम (विकार) स्वीकार करना होगा। ऐसा स्वीकार करनेसे ब्रह्म विकारी सिद्ध होगा। और ब्रह्मको विकारवाला माननेमें ब्रह्मको

निर्विकार कहनेवाली श्रुतियोंका विरोध अनिवार्य होगा। और जो यहा पर अद्वैतवादियोने व्याख्याकी है कि "यहा पर परिणाम शब्दका अर्थ है विवर्त्त" सो भी विचारको नही सह सकता है। अर्थात् वह विचार करने पर ठहर नही सकता। क्योकि जैसे दूधका दधिरूपसे परिणाम (विकार) सम्भवित है उस प्रकारसे रज्जू (रस्सी)का सर्परूपसे परिणाम सम्भवित नही है। किसी वस्तुके वास्तवमें अन्यरूप होजानेको परिणाम कहते हैं। जैसे दूधका दही हो जाना। अर्थात् दही दूधका परिणाम है। और किसी वस्तुके अवास्तविकरूपसे अन्यरूप होनेको विवर्त्त कहते है। जैसे अन्धकारमे रज्जु (रस्सी)का सर्प होना। अर्थात् सर्प रज्जुका विवर्त्त है। इस प्रकार परिणाम और विवर्त्त इन दोनोके भिन्न अर्थवाला होनेसे यहा पर विवर्त्तवादका अवसर नही है। इसी प्रकार अवच्छेदवाद प्रतिविम्बवाद आदिभी प्रस्तुत परिणामवादके विघातक ही है। "ब्रह्मने ही जगत्की सृष्टि करके उसमे प्रवेश किया" "मै इस जीव शरीर द्वारा प्रवेश करके नाम और रूपका व्याकरण (स्पष्टीकरण) करता हूँ।" उस समय यह जगत् अस्पष्टनाम और रूपवाला था। वह नाम और रूपसे स्पष्ट किया जाता है।" इत्यादि श्रुतियोके प्रमाणसे हमारे मतमे तो परिणाम विशिष्ट ब्रह्मके विशेषण अश (शरीराश चित् और अचित्) मे अच्छी प्रकारसे सगत होता है। और विशिष्ट ब्रह्मके विशेष्याश (ईश्वराश) में निर्विकारता भी अक्षत रहती है। विशेषणाश और विशेष्याश दोनोके विशिष्ट ब्रह्म होनेसे ही एक विशिष्ट ब्रह्मकी ही उपादानकारणता भी सिद्ध हो गई। वास्तवमे तो अव्याकृत (अस्पष्ट) नाम और रूपका व्याकरण (स्पष्ट होना)

ही सृष्टि है। वही परिणाम शब्दसे कही जाती है इसलिये हमारे मतमे सब सगत है ॥ (आनन्दभाष्य १-१-१७)

श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दपीठके संस्थापक जगद्गुरु श्रीटीलाचार्यजी महाराजने भी शिक्षासुधामें कहा है कि-

'नेह नानास्ति किञ्च' इति श्रुति न कहति जग झूठ।
जगत्-हेतु पर एक यह टीला सांच न झूठ ॥२२३॥
सूत्रकार टीला कहत जगत् ब्रह्म-परिणाम।
तो अनित्य यह नहिं-मृषा, किन्तु त्याज्य दुख-धाम॥२२४॥

जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महाराज कहते हैं कि हे शिष्य! मायावादियोसे फिर एक प्रश्न पूंछो, मायावादी लोग कहै कि "जगत् का मिथ्यात्व सत्य है अथवा मिथ्या ?

यदि मायावादीगण जगत्के मिथ्यात्वको सत्य मानेंगे तो एक सत्य ब्रह्मतत्त्वसे द्वितीय सत्यतत्त्व जगत्का मिथ्यात्व होगा। इस प्रकार द्वैतके जागृत होनेसे अद्वैतवाद विदा हो जायगा।

यदि मायावादीगण कहे कि मिथ्याभूत जगत्का मिथ्यात्व मिथ्या है, तो फिर उन्होने जगत्का सत्यत्व स्वीकार करही लिया। क्योकि जिस वस्तुका मिथ्यात्व मिथ्या होता है वह वस्तु सत्य होती है।

जैसे कोई मायावादियोसे पूछे कि ब्रह्मका मिथ्यात्व सत्य है कि मिथ्या है ? तो वे कहते है कि ब्रह्मका मिथ्यात्व मिथ्या है। अपने इस कथनद्वारा वे ब्रह्मके सत्यत्वकाही स्वीकार करते हैं। उसी प्रकारसे यदि मायावादी लोग जगतके मिथ्यात्वको मिथ्या मानते है, तो उसका यही अर्थ है कि वे लोग जगत्के सत्यत्वका स्वीकार करते है ॥८२॥

सकल अशुभ जग दैवके दियेसे मिलैं
मिलत सकल शुभ सियाराम दियेसे
जन-पराजय होत दैवके कियेसे सदा
जगमें विजय होत सियाराम किये से।
करो पुरुषार्थहि फल-आस तजि नित
कबहुं विसारो नाहिं सियाराम हिये से
दुख-मूल गये विना मंगल न नित्य सुख
दुख-मूल जात रटि सियाराम जिये से ॥८३॥

बहु जन्म पुण्य तरुफल नर-देह फला
यह अवसर वार वार नहिं मिलि है
कर्म आदि साधन अनेक वार करि जान्यों
अबतो गलाये दाल कोईके न गलि है।
अकृत सायुज्य मुक्ति कृत कर्म-साध्य नहीं
सियाराम भजे विना नहीं अब चलि है
मंगल मंगल-निधि सियाराम जो न भजै
सोई अवसर चूकि पीछे हाथ मलि है ॥८४॥

अकृत=नित्य (नही किया हुआ) कृत=अनित्य।

रामहीका याग योग रामहीका राग भोग
रामहीसे हों निरोग रामही जपत हैं
रामहीका प्रेम नेम रामहीसे योग क्षेम
रामरूप रत्न हेम मांगिके जियत हैं।

राम–पद लगि दौर रामचन्द्रके चकोर
रामहीकी कृपाकोर नित्यही चहत हैं
राममें रहैं मगन मंगल श्री राम–जन
रामहीमें राखि मन रामही रटत हैं ॥८५॥

चूल्हाके अनल सम कर्म सुख–साधन है
भोग जल पिये जन्म कोयला दिखात है
विद्युत्–अनलसम ज्ञान सुख–साधन है
मेघजल तुल्य भोगवीच न बुझात है।

बाडव अनल रामभक्ति सुख–साधन है
दैवभिन्न इह कर्म सिन्धु–जल खात है
मंगल प्रलयानल नित्यधाम–राम सेवा
जेहि आये पूर्व दैव जग जरि जात है ॥८६॥

याग दान कर्मनसे कर्म–बन्ध कटैं नहीं
मलके धोये से यथा मल नहिं छूटते
सियाराम–भजन दिवाकर उदय बिना
माया निशा चोर काम क्रोध आदि लूटते।

कीर्त्तन अर्चन ध्यान सार्थ बिना मानवका
रोग ठग भोग बन वीच गला घोंटते
मंगल मंगल–निधि सिया राम भजे बिन
जीव कर्म–बन्ध कोई भांति नहीं छूटते ॥८७॥

सार्थ=काफला

भागसे मिला पवित्र भागीरथी जल त्यागि
भागवान् जन काहे जल-कूप खनि हैं
मधुकर वृन्द अरविन्द-मकरन्द त्यागि
काहे रस रहित करीलनमें बसि हैं।
काहेको मधुर त्यागि स्वातीका जलद-जल
चातक समूह अन्य जल अभिलषि हैं
मंगल कहत राम-भक्ति कामधेनु त्यागि
अजा तुल्य अन्य-भक्ति बुध काहे करि हैं ॥८८॥

सियाराम-शक्ति सम नाहीं कोई शक्ति कहीं
सियाराम-ज्ञान सम नाहीं कोई ज्ञान है
सियाराम-भक्ति सम नाही कोई भक्ति कहीं
सियाराम-गान सम नाहीं कोई गान है।
सियाराम-कृपा सम नाहीं कोई कृपा कहीं
सियाराम-दान सम नाहीं कोई दान है
सियाराम-नाम सम मंगल न नाम कहीं
सियाराम-ध्यान सम नाहीं कोई ध्यान है ॥८९॥

भक्ति-शक्तिके समान नाहीं कोई शक्ति कही
भक्ति-दानके समान नाहीं कोई दान है
भक्ति-बलके समान नाहीं कोई बल कहीं
भक्ति-ज्ञानके समान नाहीं कोई ज्ञान है।

भक्तिके आधार सम नाहीं है आधार कहीं
भक्ति-गानके समान नाहीं कोई गान है
भक्ति-रस चाखो मन **मंगल** कहत नित
भक्ति-रस के समान नाहीं रस आन है ॥९०॥

पिओ राम कथा सुधा काननके दोननसे
दोऊ नैन दोननसे राम-छवि पीजिये
रसनासे रस-धाम रामनाम स्वाद चाखो
मनको मनाइ सदा राम-ध्यान कीजिये।
वाणीसे श्रीराम-मन्त्र जपो तथा रामजीके
चरित उदार गुण यश गाय लीजिये
मंगल कहत राम पाद पद्म सेइ शुभ
मानवका जीवन सफल करि दीजिये ॥९१॥

होवो न हताश दुखचिन्तन तजहु नित
भजो सदा राम सजो भक्ति ही के साजको
रामका चरित सुनो रामका स्वभाव गुनो
रामका भरोसा करि करो सब काज को।
रामके भजन माहिं आलस न करो कभी
राम नाम कीर्त्तनमें छोडो लोक लाजको
मंगल कहत सब मंगल-भवन सेवो
राम पद पद्म भवसागर-जहाज को ॥९२॥

छोडि बाह्य वृत्ति निज स्वारथ प्रवृत्ति सब
प्रेमी राम पादपद्म प्रेमसे भजत हैं
पापकारी जन तुल्य पाप वृत्तिवाले मन
राम प्रेमी जननके कभी न बनत हैं।
अनजाने माहिं यदि विधिके विधान वश
राम प्रेमी-मन माहिं पापहू बसत हैं
मंगल दया-निधान अन्तर्विराजमान
राम पाप नाशि भक्त-मंगल करत हैं ॥९३॥

आवाहन करि प्रेमी प्रेमसे श्रीरामको दे
अर्घ्य पाद्य आचमन स्नानको करावते
तुलसी चन्दन पट भूषण औ गन्ध पुष्प
भोगको निवेदि धूपि आरती उतारते।
विनय सुनाय करि दण्डवत् पांय परि
पानको खवाय सुख शय्यामें सुलावते
मंगल कहत राम नाम यश गाय सुनि
मंगल निधान राम-धाम दिव्य पावते ॥९४॥

देश और गाम जात धन और धाम जात
साहेबी सलाम आदि जात सब हाथसे
भ्रात तथा तात मात दारक औ दार जात
अन्त न रहत सब छूटि जात साथसे।

राज धन बल जन वाले काल-गाल गये
बचे न सहसकर तथा दशमाथ से
मंगल कहत सब तजि रघुनाथ भज
भला होगा तेरा मन एक रघुनाथ से ॥९५॥

आवहु तो राम कहो जाहु पुनि राम कहि
घूमत फिरत खडे होत राम कहिये
बैठहु तो राम कहो उठहु तो राम कहो
सोवत जागत देत लेत राम कहिये ।
खाओ पीओ सुनो गुनो राम राम कहि सदा
देखत औ सूँघत छुवत राम कहिये
मंगल कहत राम जानैं कब प्राण जायँ
सावधान रहि नित राम राम कहिये ॥९६॥

राम नामके प्रताप सिन्धु मध्य सेतु बँधा
गिरि जलनिधिके जहाज सम बने हैं
राम नामके प्रताप हेमलंक भस्म भये
विभीषण गृह यथा पूर्व रहे बने है ।
राम नामके प्रताप हरि प्रहलाद हेत
भीर सब टारि नर हरि रूप बने हैं
मंगल कहत राम नामके प्रताप जन
कितने तरे हैं भव जात नहिं गने हैं ॥९७॥

राम नाम गाये से ही बनी है केवट शुक
ध्रुव देव ऋषि वाल्मीकि भागवान की
राम नाम गायेसे अगस्त्य औ सुतीक्ष्ण बने
शबरीकी बनी नहिं रही तेहि मानकी।
गीध प्रहलाद गणिकादि राम गाइ तरे
गुप्त बात नही कहूं जाहिर जहानकी
मंगल कहत सीधे राम नाम गावो नित
छोडो बात याग योग ज्ञान और ध्यानकी ॥९८॥

तेहिमानकी=उसके वशकी ।

अतिही अपार राम नामके प्रताप यश
श्रुति शेष शारद के कहे न सिरात हैं
सूकरके सावकके मारे पै यवन बोला
हारामने मारा अब मेरे प्राण जात हैं।
तरा सो तो भवाम्बुधि यथा लघु बालगण
बिनाही प्रयास गाय-खुर लांघि जात हैं
मंगल विचित्र कहा यदि राम नाम प्रेमी
राम नाम नाव चढि भव-पार जात हैं ॥९९॥

कलि काल माहीं परिताप पाप युत पुनि
करम कलाप नही बनि सकै गति है
कलि काल माहीं पुनि चित्तकी चंचलतासे
निरुपाधि योगकी समाधि न लगति है।

कलिकाल माही मतवादिनके वादनसे
संशय में पडी मति नहीं होति गति है
और नहीं मंगल कहत कलि माहिं एक
रामनाम रामनाम रामनाम गति है ॥१००॥

शंकरके शंकर प्रसिद्ध निगमागममें
सुसमर्थ वर्ण राम नाम के युगल हैं
सुखद् विभाकर निशाकर समान दोऊ
तम पुञ्ज हारी ज्योतिकारी निर्मल हैं।
मोक्षदानी पापहारी पतित उद्धारकारी
भक्ति औ प्रपत्ति सम मारग सरल हैं
मंगल कहत यहिलोक तथा परलोक
मंगलके हेतु धर्म अकुरके दल हैं ॥१०१॥

लोक-व्यवहारके व्यापार में हैं हानि बहु
छोडिके आसक्ति सदा सर्व काम कीजिये
नश्वर कुभोग लोक मारग में खींचैं सदा
मद मोह काम क्रोध लोभ त्यागि दीजिये।
भक्तिके बजार माहीं निजहिं समर्पि दिव्य
अनमोल हीरा राम नामका खरीदिये
मंगल न घाट वाट रोक टोक करै कोई
राम नाम लादि राम-धाम-सुख लीजिये ॥१०२॥

अर्थपञ्चक

प्राप्य

वेदवेद्य स्वरूप परात्पर प्राप्य ब्रह्म
निराधारके आधार भगवान् राम हैं
सत्‌चिद् आनन्द विभु दिव्यदेह दिव्यधाम
सीतानाथ अभिराम जित कोटि काम हैं।
सर्व-ईश सर्व-ज्ञानी सर्व पूज्य सर्व-दानी
सर्व-हेतु अवतारी शुभगुण धाम हैं
मंगल दयानिधान सदा सर्व शक्तिमान्
भक्तनके प्राण महा मंगल विश्राम हैं ॥१०३॥

अर्थ-श्री टीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दपीठके संस्थापक श्री रामानन्दाचार्योपनामक श्री ११०८ जगद्गुरु श्री टीलाचार्यजी महाराज व्रतीन्द्रने अर्थपञ्चकका निर्देश करते हुए कहा है कि-

'प्राप्ता प्राप्य उपाय अरु फल विरोधि शरमान।
टीला भाषत वेद सब मुनि इतिहास पुरान' ॥
(शिक्षासुधा २९८)

आचार्यचक्रवर्त्ती श्री टीलाचार्यजी कहते हैं कि प्राप्य (प्राप्त करने योग्य भगवान् श्रीरामजी) प्राप्ता (प्राप्त होनेवाले जीव) उपाय

(भगवत्प्राप्तिका उपाय भक्ति अथवा प्रपत्ति) विरोधी (भगवत्प्राप्ति के विरोधी) और फल (भगवत्प्राप्तिके उपायका फल=मोक्ष=भगवत्प्राप्ति) इन्ही पाचो अर्थो का वर्णन समस्त वेद समस्त मुनि समस्त इतिहास और समस्त पुराण करते हैं।

तदनुसारही श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठके सस्थापक श्री ११०८ जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महाराज महामुनीन्द्रजी भी उक्त **अर्थपञ्चक** का वर्णन पाच कवित्तों द्वारा करते हैं—

आचार्य शिरोमणि जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महाराज कहते है कि जीवोके परम प्राप्य (प्राप्त करने योग्य) परात्पर (सर्वसे पर) ब्रह्म भगवान् श्रीरामजी है। वे भगवान् श्रीरामजी वेदोके वेद्य (वेदोके मुख्य वर्णनीय विषय) रसरूप और निराधारोके परम आधार है। सत् चित् और आनन्दरूप है। विभु परिमाणवाले अर्थात् सर्व व्यापक है। दिव्य (अप्राकृत) देहवाले है और दिव्य (अप्राकृत) धाम वाले हैं। करोडो कामदेवोको जीतनेवाले अत्यन्त सुन्दर जगज्जननी श्रीजानकीजीके स्वामी है। सर्वेश्वर सर्वज्ञ सर्वपूज्य और सर्वदानी है। सर्वके कारण अवतारी और कल्याण गुणोके धाम हैं। दयाके भण्डार नित्यही सर्व शक्तिमान् भक्तजनोके प्राण और महामगलोके अन्तिम विश्राम हैं। अर्थात् महामङ्गलोके पराकाष्ठारूप है। अथवा महामगलरूप है और महान् विश्रामरूप है ॥१०३॥

प्राप्ता

प्राप्ता हैं जीव, अब जीवन स्वरूप सुनो
जीव ज्ञानवान् ज्ञानरूप ईश-दास हैं

जीव, नही प्राण, नहीं इन्द्रिय औ देहरूप
देह इन्द्रियादि जड प्रकृति-विकास हैं।

धर्मभूत ज्ञानभिन्न अणु सभी ईशभिन्न
परस्परभिन्न जीव बहु स्वप्रकाश हैं

जनन मरण शून्य मंगल आनन्दरूप
भक्ति बिना भोगैं दुख बंधे कर्मफांस हैं ॥१०४॥

श्री रामानन्दाचार्योपनामक श्री टीलाचार्य जगद्गुरु श्री मगलाचार्यजी महाराज कहते हैं कि—जीवही प्राप्ता (प्रापक—भगवान् श्री रामजी को प्राप्त होनेवाले) है । अब जीवोके स्वरूपको सुनो । जीव ज्ञानवान् (ज्ञाता—ज्ञानाश्रय) ज्ञानरूप और ईश्वरके (श्री रामजीके) दास है । जीव प्राणरूप इन्द्रियरूप और देहरूप नही हैं । देह इन्द्रिय और प्राण तो जड प्रकृति के विकास हैं अर्थात् प्राकृत पदार्थ हैं । जीवगण तो प्रकृतिके विकार नही किन्तु चेतन है । सभी जीव धर्मभूतज्ञान (बुद्धि) से भिन्न है अणुपरिमाणवाले है और ईश्वर (भगवान् श्री रामजी) से भिन्न है । जीव एक नही किन्तु बहुत है (असख्य है) सभी जीव परस्पर भिन्न है अर्थात् प्रत्येक जीब भिन्न भिन्न है । एक नही है ।

जीव स्वप्रकाश है अर्थात् अजड है । जीव प्रकृतिके सदृश जड अर्थात् पर प्रकाश नही हैं। जीव जन्म और मृत्युशून्य हैं । अर्थात् जीवोकी उत्पत्ति नही होती और जीवोका नाश भी नही होता है । जीवो के जन्म और मरण तो जीवोके देहसयोग और देहवियोग को कहते है । सभी जीव आनन्दरूप हैं । परन्तु भगवान् श्रीरामजीकी भक्ति किये बिना कर्मपाशमे बद्ध होकर जीव गण दुख भोगते है ॥१०४॥

—*—

उपाय

राम प्राप्तिका उपाय कहूं सुनो चित्त लाय
राम प्राप्ति बिना नहीं कटे दुख फांस है
सन्तन का संग करै राम कथा नित्य सुनै
राम कथा बिना नही होन मोह–नाश है ।

सद्गुरु शरण जाय वैष्णव संस्कार पाय
शुद्ध मन माहिं करै भक्तिका विकास है
मंगल श्री रामजीकी भक्ति औ प्रपत्ति बिना
कर्म नाशि जाइ सकै नहीं राम पास है । १०५॥

महामुनीन्द्र श्रीमङ्गलाचार्यजी महाराज कहते है कि–श्रीरामजी की प्राप्तिका उपाय कहता हू । चित्त लगाकर सुनो । श्रीरामजीको प्राप्त हुए बिना कर्मवन्धन नही कटता है । श्रीरामजीकी प्राप्ति के

लिये सन्तोका सग करना चाहिये तथा नित्यही श्रीरामजीकी कथा सुननी चाहिये । श्रीरामजीकी कथाके बिना मोहका नाश नही होता है । श्रीरामजीकी प्राप्तिके लिये सद्गुरु (श्रीरामभक्त विरक्तश्रीवैष्णव सन्तगुरु) की शरणमे जाकर पञ्चवैष्णव सम्कारोसे सस्कृत होकर शुद्ध मनमे भक्तिका (विशुद्ध भगवत्प्रेमका) विकास करना चाहिये । क्योकि श्रीरामजीकी भक्ति और प्रपत्ति (शरणागति)के विना कोई भी जीव भगवान् श्रीरामजीको प्राप्त नहीं हो सकता है ।

द्वितीयरामानन्दाचार्य श्री ११०८ जगद्गुरु श्री अनन्तानन्दाचार्यजी महाराजके शिष्य श्री ११०८ जगद्गुरु श्री नरहर्यानन्दाचार्य जी महाराजके शिष्य **श्री** ११०८ जगद्गुरु गोस्वामी **श्री** तुलसीदासजी महाराजने भी **श्री**रामरामचरित मानसमें कहा है कि–

बिन सत्संग न हरि कथा तेहि बिन मोह न भाग ।
मोह गये बिन राम पद होय न दृढ अनुराग ॥
वारि मथे वरु होय घृत सिकतासे वरु तेल ।
बिन हरि–भजन न भव तरहिं यह सिद्धान्त अपेल ॥

विरोधी

काम क्रोध लोभ मोह मत्सर पापी विचार
जानिये विरोधी नित लोक सुखासक्ति को
देह-आत्माभिमान सन्त धर्म–अपमान
बलादि–गुमान करै धावै सिद्धि शक्तिको ।

राम-परतंत्र जीव जानै निजको स्वतंत्र
राम छोडि करै अन्य देव–अनुरक्तिको
मंगल कहत छिन छिन आयु घटि रही
तजिके विरोधी करो रामजीकी भक्तिको ॥१०६॥

आचार्यचक्रचूडामणि जगद्गुरु **श्री** मङ्गलाचार्यजी महाराज अब भगवत्प्राप्तिके विरोधियोको कहते हैं कि—काम क्रोध लोभ मोह मत्सर पापी विचार तथा लौकिक सुखकी आसक्ति अथवा लोकासक्ति और सुखासक्तिको भगवत्प्राप्तिका विरोधी जानना चाहिये। इसी प्रकार देहात्माभिमान (देहको ही आत्मा मान लेना), सन्त धर्म—अपमान अर्थात् सन्तोका अपमान और धर्मका अपमान अथना सन्तोके धर्म **श्री**वैष्णव धर्म भगवदुपासन ऊर्ध्वपुण्ड्रधारण तथा तुलसीधारण और **श्री**राममन्त्रदीक्षा इत्यादिका अपमान करना भी भगवत्प्राप्तिके विरोधी है। इसी प्रकार बल बुद्धि राज्य धन रूप आदिका अभिमान तथा अणिमादि सिद्धि और शक्तिके लिये अथवा सिद्धिकी शक्तिके लिये रामभजन छोडकर दौडना भी भगवत्प्राप्तिके विरोधी हैं। इसी प्रकार राम परतत्र जीवका अपनेको स्वतंत्र जानना तथा **श्री**रामजीको छोडकर अन्य देवोका अनुराग (प्रेम=भक्ति) करना भी भगत्प्राप्तिके विरोधी हैं। **श्री**मगलाचार्यजी महाराज कहते है कि—आयु क्षण क्षण घट रही है। उक्त विरोधियोका त्याग करके **श्री**रामजीकी भक्तिको करो ॥१०६॥

फल

राम-भक्ति करि भोग भोगि देह तजि गहै
देवयान-पथ करै विरजा नहान को
अजर अमर भूख प्यास पाप शोक हीन
सत्य काम पावै सत्य संकल्प महान् को।
सर्व ज्ञान सर्व गति पाय नित्य सुखी होय
सुखरूप देखि राम करुणा निधानको
मंगल सायुज्य फल महत्तम अविनाशी
राम-धाम-सुख सम नहीं सुख आनको ॥१०७॥

अब श्रीरामोपासनाका फल कहते हैं कि—जीव श्रीरामजीकी भक्तिको करके प्रारब्ध कर्मके फलरूप सुख और दुखरूप भोगोंको भोगकर स्थूल प्राकृत शरीर (पाञ्चभौतिक शरीर) को छोडकर सूक्ष्म शरीर सहित देवयान (उत्तरायण) मार्गसे जाता है और इस लीला विभूति तथा नित्यविभूति नामक दोनों विभूतियोकी सीमा पर स्थित श्रीविरजा नदीमें स्नान करके सूक्ष्म शरीरको भी छोड देता है और दिव्य शरीरवाला होकर अजर अमर भूख प्यास पाप और शोक से रहित सत्यकाम और महान् सत्य संकल्पवाला हो जाता है। अर्थात् उक्त आठ गुणवाले ईश्वरके समान ही उक्त आठ गुणोंवाला हो जाता है। सुखस्वरूप और करुणानिधान परात्पर ब्रह्म भगवान् श्रीरामजीका

दर्शन करके जीव सर्वज्ञ और सर्वलोकगतिवाला होकर नित्यसुखवाला होता है। यही मोक्षावस्था है। मोक्षावस्थामे जीवको सर्वोत्तम भगवान् श्रीरामजीका नित्य कैङ्कर्यसुख प्राप्त होता है। मोक्षावस्थामें जीवको भगवान्‌का सर्वथा भोगसाम्य प्राप्त होता है। विभुपरिमाण, श्रीजानकी पतित्व और जगद्व्यापार इत्यादि ईश्वरके गुण तो मुक्त होनेपर भी जीवको नही प्राप्त होते हैं।

जगद्गुरु श्रीमगलाचार्यजी महाराज कहते हैं कि भगवद्भक्ति अथवा भगवत्-शरणागतिका सायुज्यमुक्तिरूप फल सर्वसे महान् और अविनाशी (नित्य) है। श्रीराम-धाम अर्थात् श्रीसाकेतलोकके सुखके समान अन्य किसीका भी सुख नही है ॥१०७॥

इस कवित्तमे कथित देवयान (उत्तरायण) पथको ब्रह्मसूत्रके आनन्दभाष्यमे श्री ११०८ जगद्गुरु भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी यतीन्द्रने अत्यन्त स्पष्ट रूपसे कहा है कि—

"ततश्चायक्रमः सम्पन्नः। नाडीरश्मिप्रवेशानन्तरमर्चिषोऽहरह्न आपूर्यमाणपक्षमापूर्यमाणपक्षादुत्तरायणमासांस्तेभ्यः संवत्सरं संवत्सराद्वायुं वायोरादित्यमादित्याच्चन्द्रमसं चन्द्रमसो वैद्युतं वैद्युताद्वारुणं वारुणादैन्द्रमैन्द्राद्धातृलोकं धातृलोकाद्विरजां स्नात्वा श्रीसाकेतलोकद्वारमिति।"

(आनन्दभाष्य ४-४-३)

अर्थ–इससे यह क्रम हुआ कि भक्त जीव अन्त समयमे (मृत्यु समयमें) मूर्धा नाडीसे सूर्यरश्मि (सूर्यकिरण) को प्राप्त होता है। अर्चिर्लोक (किरण लोक)से अहर्लोक (दिनलोक)को प्राप्त होता है। अहर्लोकसे शुक्लपक्ष लोकको प्राप्त होता है। शुक्लपक्ष लोकसे उत्तरा-यण सज्ञक षट्मास लोकसे सवत्सर लोकको प्राप्त होता है। सवत्सर लोकसे वायुलोकको प्राप्त होता है। वायु लोकसे आदित्यलोक (सूर्यलोक) को प्राप्त होता है। आदित्यलोकसे चन्द्रलोकको प्राप्त होता है। चन्द्र लोकसे विद्युत् लोकको प्राप्त होता है। विद्युत् लोकसे वरुण लोकको प्राप्त होता है। वरुण लोकसे इन्द्र लोकको प्राप्त होता है। इन्द्रलोकसे श्रीब्रह्माजीके लोकको प्राप्त होता है। यहा तकके लोक पुनरावृत्तिवाले हैं। अर्थात् प्राकृत लोकोमे सर्वसे ऊपर श्रीब्रह्माजीके लोकसे लेकर नीचेके सभी लोकोमे जाने पर जीवकी पुनरावृत्ति होती है। अर्थात् श्रीविधिलोक (ब्रह्माजीका लोक) आदि लोकोके भोगहेतु पुण्यके क्षीण होने पर जीवको जन्म ग्रहण कर मृत्यु लोकमें आना पडता है। ब्रह्माजीके लोक तकही लीला विभूति है। ब्रह्माजीके लोकसे चलकर विरजामें स्नान करके जीव नित्य श्रीसाकेतलोक (श्रीरामजीके लोक)के द्वारको प्राप्त होता है। और पुनरावृत्ति रहित हो जाता है।

इति अर्थपञ्चक



श्री हनुमान्‌जीको नमस्कार

महा शक्तिशाली शक्ति हीननको शक्ति देत
मुक्तिकारी देत ब्रह्म राम भक्ति ज्ञानको
भक्त जन पालत दलत रोग ग्रह दशा
हरत कुमंत्र यंत्र भूतनके मानको ।
साधु जन रंजन औ यातु धान गंजन जो
पाप हरि देत धन जन बल मान को
मंगलकरन जन संकटहरन ताहि
मंगल नमत राम दूत हनुमान को ॥१०८॥

इति षष्ठ तरंङ्ग ।



श्री हनुमते नमः

श्री सीतारामाभ्यां नमः ।



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नमः।
जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नमः। जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नमः।
महागुजरात श्रीरामानन्दमहापीठ संस्थापक श्री ११०८
जगद्गुरुश्री मङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र विरचित

विनयशिक्षानिधि

अथवा

श्रीमङ्गलगीतावली

१

ब्रह्म सृष्टि लयकारक परिपालक हे ।
अवतारिन् श्रुतिवेद्य जय जय राम हरे ॥१॥

हे ब्रह्म हे सृष्टि और लयके करनेवाले हे परिपालक हे वेदवेद्य हे हरि हे अवतारी श्रीरामजी आपकी जय हो जय हो ॥१॥

शङ्खासुरवधकारक जनतारक हे।
मत्स्यरूप सुरभूप जय जय राम हरे ॥२॥

हे शंखासुरका वध करनेवाले हे भक्तजनतारक हेमत्स्यावतार रूप हे देवोके राजा हे हरि हे श्रीरामजी जय हो जय हो ॥२॥

सुरनत मन्दरधारक खलघातक हे।
कूर्मदेह गुणगेह जय जय राम हरे ॥३॥

हे देवोसे नमस्कृत मन्दराचलको धारण करनेवाले खलोका नाश करनेवाले हे गुणभवन कूर्मावतारस्वरूप हरि श्रीरामजी आपकी जय हो जय हो ॥३॥

हिरण्याक्षसंहारक अघहारक हे।
कोलकाय जितमाय जय जय राम हरे ॥४॥

हे हिराण्याक्षके सहारक पापहर्त्ता मायाको जीतनेवाले श्रीवाराह अवतार स्वरूप हरि श्री रामजी जय हो जय हो ॥४॥

कनककशिपुतनुघातक भयहारक हे।
नरहरिरूप सुरूप जय जय राम हरे ॥५॥

हे कनककशिपुनाशक भयहर्त्ता श्री नरसिहावताररूप और सुन्दर रूपवाले हरि श्रीरामजी जय हो जय हो ॥५॥

जितबलिमतिबलधामन् विभुवामन हे।
नमितसुरेश महेश जय जय राम हरे ॥६॥

हे बलिको जीतनेवाले ज्ञान और बलके धाम (भवन) विभुपरिमाण-वाले (सर्वत्र व्यापक) इन्द्रको भी नमानेवाले श्रीवामनावतारस्वरूप महान् ईश्वर (परमेश्वर) हरि श्रीरामजी जय हो जय हो ॥६॥

क्षत्रियजिद् द्विजमण्डन भवखण्डन हे ।
परशुराम जितकाम जय जय राम हरे ॥७॥

हे क्षत्रियोंको जीतनेवाले ब्राह्मणोका मण्डन करनेवाले जन्म मरणरूप भवखण्डन कर्त्ता और कामको जीतनेवाले (ब्रह्मचारी) श्री परशुरामावताररूप हरि श्रीरामजी जय हो जय हो ॥७॥

खरजिद्धतलङ्केश्वर परमेश्वर हे ।
प्रणतपाल अघकाल जय जय राम हरे ॥८॥

हे खरदूषणविजेता लङ्केश्वर रावण तथा पापके नाशक प्रणतपाल परमेश्वर हरि श्रीरामजी जय हो जय हो ॥८॥

कंसवधादिविधायक मतिदायक हे ।
घनश्याम अभिराम जय जय राम हरे ॥९॥

हे कसवध इत्यादि कार्य करनेवाले ज्ञानदाता घनके समान श्यामरूपवाले श्रीकृष्णावतारस्वरूप सुन्दर हरि श्रीरामजी जय हो जय हो ॥९॥

करुणाकर भयभञ्जन सुररञ्जन हे ।
बुद्ध अबोधितरूप जय जय राम हरे ॥१०॥

हे करुणाके आकर (खानि) भयभञ्जन तथा सुररञ्जन और अपने स्वरूपको छिपानेवाले बुद्धावताररूप हरि श्रीरामजी जय हो जय हो॥१०॥

दारुणयवनविदारक भवतारक हे ।
कल्किन् जितकलिभूप जय जय राम हरे ॥११॥

हे कठोर यवनोके नाशक तथा कलियुगी राजाओंको जीतनेवाले **श्री**कल्की अवताररूप भवपारकर्त्ता हरि **श्री**रामजी जय हो जय हो ॥११॥

यतिपतिभाष्यविधायक सुखदायक हे ।
रामानन्द परेश जय जय राम हरे ॥१२॥

हे यतिपति **श्री**आनन्दभाष्यके कर्त्ता और सुखदायक भगवान् **श्री**रामानन्दाचार्यस्वरूप परमेश्वर हरि **श्री**रामजी जय हो जय हो ॥१२॥

मंगलदाससहायक रघुनायक हे ।
पाहिजनं जनपाल जय जय राम हरे ॥१३॥

जगद्गुरु **श्री**मङ्गलाचार्यजी महाराज महामुनीन्द्रजी कहते हैं कि हे मङ्गलदासके अर्थात् मेरे सहायक भक्तजनप्रतिपाल **श्री**रघुनाथजी जनकी (दासकी=मेरी) रक्षा कीजिये। हे हरि **श्री**रामजी जय हो जय हो। **श्री**टीलाद्वारपीठनामक **श्री**रामानन्दमहापीठके सस्थापक **श्री** ११०८ जगद्गुरु **श्री**मङ्गलाचार्यजी महाराजने परात्पर ब्रह्म भगवान् **श्री**रामजीके दश मत्स्यादि अवतारों तथा आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु **श्री**रामानन्दाचार्यावतारका वर्णन करते हुए सर्व अवतारोके अवतारी भगवान् **श्री**रामजीकी स्तुतिरूप मगल इस गीत द्वारा किया है ॥१३॥



२

वन्दौ ब्रह्म सीतानाथ ।

सकल सुर मुनि मुक्त जन जेहि नमत जोरे हाथ ॥

जग करत जग पैठि पालत हरत जो जगदीश ।
धरैं विधि हरि हरानिल रवि अनल शासन शीस ॥१॥

विन्दुको जो करत सागर तथा सागर विन्दु ।
लखैं अन्य न भूलि नयना जासु लखि मुख इन्दु ॥२॥

हरत धरणी-भार जो धरि विविधविध अवतार ।
धर्म थापत साधु रक्षत कृपा पारावार ॥३॥

विषम माया-विष उतारत जासु तारक मन्त्र ।
रटत जेहिका नाम टूटत अति कठिन भवयन्त्र ॥४॥

श्रुति चतुर्मुख पञ्चमुख जेहि शेष वदन हजार ।
शारदा गणपति न मंगल वरणि पावैं पार ॥५॥

३

पाकर तन अनमोल रतन मन
क्यों खोवै भजिले सियराम ।
पीछे पछितैहै शिर धुनि धुनि
रे मन बीतत जनम निकाम ॥

परिहरि हरि-चर्चा भावैं नित कामी-काम-प्रसंग ।
रोम रोम में रमै राम तजि विषयनहीका संग ॥१॥

धरम छोडि धन जोडि बनावै महल खजाना हाट ।
इक दिन यम-गण बांधि चलैं ले पडा रहै सब ठाट ॥२॥

बाल-अवस्था खेलि गँवाई युवा गंवाई सोय ।
कुढा बुढापा अन्त मौत लखि रोवत धीरज खोय ॥३॥

जग-सुख-आस फांस यमकी गुनि तजु भजु सीताराम।
मंगल मिलत न और यतनसे जनन मरण विश्राम ॥४॥

४

वन्दौं जानकी जग-मात ।

जाहि सुमिरत द्रवत रघुवर सकल जगके तात ॥
दिव्य वैभव रूप गुणगण दिव्य मनहर गात ।
जासु निग्रह विन अनुग्रह भाव हिय छलकात ॥१॥

फलति आशा लता वन्दत जासु पद जलजात ।
जासु नखकी प्रभासे शसि प्रभाकरहु विभात ॥२॥

सिखइ रघुवरके चरणकी शरण नाशति घात ।
शरण आगत जनहिं रामहिं पुनि निवेदति जात ॥३॥

सर्वस्वामिनि अघहरनि जगकरनि श्रुतिविख्यात ।
करत मंगल मुक्त निज जन देति मंगलजात ॥४॥

जलजात=कमल । मंगलजात=मंगलसमूह ।

५

वन्दौं वायुसुत हनुमान् ।

रामदूत महान् अतिबलवान् औ मतिमान् ॥

सधत सब विधि स्वार्थ भजते पार्थके रथ-केतु ।
जासु ऋणिया बने, रघुवर भवजलधिके सेतु ॥१॥

काम सुर तरु भक्त जनके केसरी-सुत वीर ।
सदा तत्पर भक्त-रक्षण में रहत रण धीर ॥२॥

नित्य नाशत भक्त जनके पाप शाप त्रिताप ।
देव-पति ग्रह-पति बखानत पवन-सुत-परताप ॥३॥

जो करै हनुमान्का स्तव-पाठ पूजा जाप ।
तासु मंगल सर्व मंगल होत आपहि आप ॥४॥

६

भजो मन यतिपति रामानन्द ।

रामानन्द भजत दुख नाशत मिलत सकल आनन्द ॥

शिष्य राघवानन्द मुनीके औ राघव-अवतार ।
सर्व वर्णको रामशरणमें दिया दिव्य अधिकार ॥१॥

युक्तियुक्त निगमागम सम्मत रुचिर विशिष्टाद्वैत ।
लखि जिनका मत नीक न लागत द्वैत तथा अद्वैत ॥२॥

जीते सिद्धि बुद्धि वाले सब सिद्ध तथा मतवान् ।
विजय-पताका जासु उडी जग फैला सुयश महान् ॥३॥

बाल ब्रह्मचारी करुणावरुणालय सुन्दर गात।
विद्वत् सिद्ध योगि नृप सेवित दिग्विजयी विख्यात ॥२॥
साधकगण-पथ सुगम कीन अतियमनियमादि सिखाय।
जनन मरण भय हरे नरनका रामशरण दरशाय ॥३॥
रामानन्दाचार्य जगद्गुरुमतका करि विस्तार।
भक्ति रहस्य प्रकाशि किया मंगल अति जग–उपकार ॥४॥

९

मोक्षप्रद उपदेश टीलाचार्यजी व्रतिराजका।
सुखद आश्रय है उन्ही आचार्यगण–शिरताजका ॥
श्रीविशिष्टाद्वैत सद्वेदान्तमतका करि प्रचार।
है बढाया धर्म रामानन्दजी यतिराजका ॥१॥
देखि जीवोंको भवाम्बुधि बूडते जो करि दया।
दिये आश्रय जानकीपतिपादपद्म जहाजका ॥२॥
जो न मंगल पान की शिक्षासुधा टीलार्यकी।
तो मिला यह मनुज–जीवन जगत् में केहि काजका ॥३॥

व्रतिराज=ब्रह्मचारियोंके राजा। पान की=पिया।

१०

श्रुतिधर्म दे गये हैं टीलार्यदेव हमको।
सत्पथ दिखा गये हैं टीलार्यदेव हमको ॥
राघवके स्वामिपन औ जीवोंके दासपनका।
सद् ज्ञान दे गये हैं टीलार्यदेव हमको ॥१॥

सर्वेश रामचरणोंकी शरण दिव्य देकर ।
निर्भय बना गये हैं टीलार्यदेव हमको ॥२॥

आनन्दभाष्य समझा वादी परास्त करके ।
निश्चित बना गये हैं टीलार्यदेव हमको ॥३॥

मंगल सुमुक्ति–साधन हरि भक्ति श्रवण आदि ।
नवधा बता गये हैं टीलार्यदेव हमको ॥४॥

११

कर मन गुरु चरण–अनुराग ।
फलहिं सब सद्भाग जेहिसे दूर हों दुर्भाग ॥
सकल दैहिक मानसिक औ दैव भौतिक ताप ।
गुरु चरणकी शरण जातहि मिटत आपहि आप ॥१॥

कोटि करिये याग जप तप लाख साधिय योग ।
विना सद्गुरुकी कृपाके मिटत नहिं भव–रोग ॥२॥

दयासागर गुरुदयासे पाइ तारक मंत्र ।
तरै सुखसे भवजलधि जान तोडि माया–यंत्र ॥३॥

कहत मंगल मोक्षकर गुरुपादपद्म–पराग ।
गर्व आलस छोडि भजु मन जागरे अब जाग ॥४॥

१२

गुरुजी मैं तो काल–प्रवाह बहा ।
कृपा करि अब पार करिये करउं वचन कहा ॥

भूखका दुख दूर टारन कीन जीभ कहा।
भूख लागत ही, लगा पुनि स्वाद रोग महा॥१॥
विषय चिन्त्यौं रातदिन नहिं कीन सन्त कहा।
जनमिके बहुवार जगमें ताप तीन सहा॥२॥
गर्भ-दुख दुःसह सह्यों अब मृत्यु-दुःख महा।
सहौं तेहि केहि भांति मंगल जातही न कहा॥३॥

१३

धनि धनि साधु जन सत्संग।
बन्ध काटत मुक्ति साधत सन्त दे निज-रंग॥
गले में तुलसी लसी भुजमें धनुष शर छाप।
लाल श्रीयुत श्वेत ठाढे तिलक हरते पाप॥१॥
राममंत्र सुजाप जपते रामके हो दास।
रामहीकी आस करते रामका विश्वास॥२॥
सुमति उपजै कुमति विनसै सन्त शिक्षा पाय।
करत दर्शन तरत पापी पाप-सिन्धु सुखाय॥३॥
कहत मंगल होत मंगल किये जिनका साथ।
मिलैं सब ब्रह्माण्ड-नायक ब्रह्म सीतानाथ॥४॥

१४

मनवा सोइ सांचा सन्त।
जासु दर्शन करनि बोलनि करै भव दुख-अन्त॥

विषामता करि दूरि, जगमें सत्य समता पूरि।
विमल मानस करि भरै जो ज्ञान करुणा भूरि ॥१॥

सकल गमनागमनकारी जगत्–नाते तोडि।
असत् पथसे जो हटा कर देय सत्पथ जोडि ॥२॥

देत रघुवरके चरणकी शरण शक्ति अमाप।
जो विनाशै ज्वाल माला सहित तीनहु ताप ॥३॥

जो करै तजि विषय–लालच रामभक्ति ललाम।
जगत्–**मंगल** करै **मंगल** सोइ **मंगल**–धाम ॥४॥

१५

सन्त सुन्दर सत्य हितकर बोलते।
विष हटा करके सुधारस घोलते ॥

चित्त चिन्तित कर्म कहि करिके सदा।
आचरत शिक्षा न बातहि छोलते ॥१॥

सत् न बनते अन्यको कहिके असत्।
सर्वको अनुभव तुलामें तोलते ॥२॥

सन्त जन निज औ पराया भूलिके।
दया औ उपकार करते डोलते ॥३॥

सुमति दे **मंगल** सभी को कर सुखी।
भक्तिसे सब कर्म–बन्धन खोलते ॥४॥

१६

ऐसे सन्त ही जग माहिं ।

सकल जग जन बन्धु जिनके कोउ पराया नाहिं ॥

जगत् जन सियराम सन्मुख होत जिन ढिग जाइ ।
पी पिलावैं भक्ति रस जो मुक्ति–युक्ति बताइ ॥१॥

बनत सज्जन जिन चरण छुइ दुष्ट जन–सन्दोह ।
यथा पारस परसि सुबरन बनत कुबरन लोह ॥२॥

सबहिं नाच नचाव माया सन्तसे भय खाति ।
जिनहिं भीतर और बाहर राम–मूर्ति दिखाति ॥३॥

उपजि रघुवर–कथा जिन सँग करति मोह–विनाश ।
स्वयं तरते तारते जो जगत् मंगलदास ॥४॥

सन्दोह=समुदाय ।

१७

जो जन सतत सेवैं सन्त ।

सुदिन उनके होयँ अरु हो दुर्दिनों का अन्त ॥

ईश और अनीशकी होती सुखद अनुभूति ।
नीति विचलित करि सकै नहिं तीन लोक विभूति ॥१॥

ज्ञान भक्ति क्रिया न जिनके मुक्ति साधन पास ।
गाय खुरसम भवजलधि सो तरत बिन आयास ॥२॥

राम विश्व निवास तिनके बसत हिय निष्पाप ।
सकल मंगल मिलत मंगल मिटत तीनहु ताप ॥४॥

अनुभूति=अनुभव । आयास=श्रम=मेहनत ।

१८

जिनके सन्त जन-अनुराग ।

धन्य तिनके जनक जननी धन्य तिनके भाग ॥

भजत भगवत् भागवत नित सन्त वरणत भाग ।
मनुजका सद्भाग तिन आचरण-चर्चित जाग ॥१॥

सुनत शिक्षण सन्त जनके तथा वन्दत पाद ।
दुरत कांचन कामिनी रति क्रोध औ उन्माद ॥२॥

सन्त दीन दयालु ज्ञानी सहन शील उदार ।
करत जनको सन्तपद-जल भवजलधि से पार ॥३॥

अहिंसा शमदम निरत औ सत्यभाषी सन्त ।
नित्य मंगल भजत मंगल सन्त औ भगवन्त ॥४॥

१९

मनवां सोइ मानवजान ।

सतत जगहितमें निरत जो भूलिके निजमान ॥

वर्जि दुर्जन अर्जि सज्जन तर्जि दानव-नीति ।
जो करै हरिजन तथा हरि कथा कीर्त्तन प्रीति ॥१॥

दीन जनका जो सहायक साधु रघुवर भक्त ।
जो न हो परनारि परधन निरत विषयासक्त ॥२॥

गुणग्राही सद्‌गुणी रहि दुर्गुणोंसे दूर ।
मान गुरुजनका रखै जो धर्मरक्षक शूर ॥३॥

सत्य हित नित कहत जो निज औ पराया भूल ।
तेहि सुजन पर सदा मंगल बरसते सुख फूल ॥४॥

२०

मन तेरा कैसे ठिकाना होय ।
सारा जीवन बिताया सोय ॥

राम भजना कल्पतरु तजि
अघ बबुर लिये बोय ॥१॥

गर्व तजि हरिगुरु शरण बिन
गर्भकी गति होय ॥२॥

धन सुतनु तिय औ सुतन तजि
अन्त चलना होय ॥३॥

हाथ मलि पछिताय पीछे
आंसुसे मुंह धोय ॥४॥

कहत मंगल भजात रामहिं
नित्य मंगल होय ॥५॥

२१

अरे मन राम-भजन कर चेत ।

राम-भजन बिन प्राणी जगमें पाहन सदृश अचेत ॥

सब झूठे नाते दिखलाते
मीठी मीठी बात सुनाते ।
जीव ज्ञान बिन धोखा खाते
प्रभु तजि मायामें भरमाते ॥
आयु बिताये देत ॥१॥

दारक दारा गृह धन मेरा
यह मेरा केवल वह तेरा ।
मरते करि इमि मेरा तेरा
मायाका लखते न अंधेरा ॥
केवल अपयश लेत ॥२॥

लखि पर-विपति हृदय हुलसत हैं
ईर्षासे तन मन धधकत हैं ।
काम क्रोध मद लोभ बढत हैं
रघुपति तजि जन जग भटकत हैं ।
नश्वर वैभव हेत ॥३॥

धोखा दै दै रंग जमावत
कुछ आदर्श न जग दिखलावत ।

पचि पचि मूरख जन्म गंवावत
अन्त समय कुछ संग न आवत ॥
होत न कबहूं चेत ॥४॥

ज्ञानवान् बनि जानि न पाते
रजमें जीवन रतन मिलाते।
कैसे जगमें आते जाते
मंगल भेद समझ ना पाते ॥
अवसर खोये देत ॥५॥

२२

मनवा जाग रे अब जाग।
जन्म मानवका मिला तोहिं भव्य तेरे भाग ॥
मोह ममता नीदमें तू, घूमता शिर काल।
सुखद अवसर धन नशाकर करैगा बेहाल ॥१॥
गला घोंटति मारि है अब तोहिं आशा फांस।
क्या भरोसा आइहै फिर तोरि निकरी सांस ॥२॥
जात जीवन कहत मंगल अबहु मन तू जाग।
विषय विष वैराग करि कर राम-पद-अनुराग ॥३॥

२३

सुमिर सियावर रात गई अब मनवा हुआ सवेरा।
करुणासिन्धु रामके सुमिरे होवै कर्म-निवेरा ॥

अवसर लखत काल निशिवासर यमगण करते फेरा ।
शब्द रूप गन्धादि विषय ठग चहुं दिशि डारे डेरा ॥१॥
काम क्रोध लोभादि भुजंगम अन्तर किये बसेरा ।
मंगल साधन भजन छोडि क्यों करता मेरा मेरा ॥२॥

२४

मन अब तजहु सब अभिमान ।
शरण लो रघुवर चरणकी मौत शिरपर जान ॥
सगे साथी धन जवानी लखि बहुत इतरात ।
चार दिनकी चांदनी ये अन्त काली रात ॥१॥
घृणाकर मल मांस मज्जा हड्डियों पर चाम ।
ताहि पुनि पुनि लखत मोहत छोडि भजना राम ॥२॥
मान बिन बनि देहु सबको मान औ आराम ।
कहत मंगल भजहु मंगल–भवन सीताराम ॥३॥

२५

मन तब भीति केहिकी होय ।
राम पद पाथोज रत यदि तू भ्रमर सम होय ॥
अन्य कीर्त्तन प्रभुहिं तजि मम बानि–बानि न होय ।
प्रभु यश सुधा परिपूर्ण यदि मम श्रवण–पुट द्वय होय ॥१॥
मंगल भले नरलोक वा नरकादि की गति होय ।
सर्वत्र सियवर मधुर मूरति झलकती यदि होय ॥२॥

२६

भजहु मन सर्वेश्वर सियराम ।
अप्रमेय अवगुण–गण विरहित अनुपम शुभ गुणधाम ॥
सर्वाधिक शोभामय जिनकी मूरति अति अभिराम ।
मति नति प्रकट करनि अन्तस्तमहरनि ज्योति सुललाम ॥१॥
पावन जासु पदाम्बुज वन्दन नाशत दुखके गाम ।
नित्य मुक्त ब्रह्मादि देव जेहि सेवत आठो याम ॥२॥
पातक तूल महाद्रि विदाहक बन–दव जेहिको नाम ।
मंगलदास त्रिताप विनाशति जासु भक्ति सुख धाम ॥३॥

२७

मन क्यों राम भजत अलसात ।
दुर्लभ जीवन बीतत जात ॥
बाल अवस्था खेलि गंवावत
यौवनमें निद्रा अति भावत ।
जर्जर जरा देखि घबरावत
मौत उपर मंडरात ॥१॥
काम क्रोधसे मुंह नहिं मोडत
बाढत लोभ नीति–पथ छोडत ।
ठगि ठगि के बहु माया जोडत
संग न कुछ भी जात ॥२॥

संतसंगमें रुचि नहिं करता
करत कुकर्म तनिक नहिं डरता ।
जननी जनक गुरुहुसे लडता
वन्दन करत लजात ॥३॥

आवत नींदि कथा कीर्त्तनमें
दुरत नींदि सज्जन–निन्दनमें ।
ििचकत मंगल पुण्य करनमें
पाप करत दिन रात ॥४॥

२८

चिन्तहु चित्त राम उदार ।

रूप सिन्धुहिं सुमिरि करिये मृत्युसिन्धुहिं पार ॥
नव जलद सम श्याम सुषमा जलधि मन अभिराम ।
लोक लोचन सुखद सुन्दर कमल लोचन राम ॥१॥
अरुण शारद तरुण सरसिज सदृश मंजुल पाद ।
विबुध मुनि मन हरन निरखत हरत सकल विषाद ॥२॥
अभयदायक सुख विधायक धरे सायक चाप ।
मंजु युग कर कंज हरते प्रणत जन सन्ताप ॥३॥
विमल शारद सुधाकर सम वदन सुखकर गोल ।
कहत मंगल जो विलोकत बिकत सो बिन मोल ॥४॥

२९

राम नाम रसधाम रटो रस जानन हारी रसना हो ।
राम नाम का रटना जगमें यम जीतन कटि कसना हो ॥

राम नाम बिन जगका नाता जिमि विषधरका डसना हो ।
राम नाम बिन उद्यम करना कर्म फांसका कसना हो ॥१॥

राम नाम बिन सकल सफलता ठगटोलीमें फंसना हो ।
राम नाम बिन मंगल जीवन जनु दलदलमें धसना हो ॥२॥

३०

प्रेमसे रसना रटहु श्रीरामको ।
पियहु नित रसधाम राघव–नामको ॥

पतित पावन भवपतित उद्धारकर ।
भयहरन औ सुख करन सुख धामको ॥१॥

अद्वितीय दयालु दानी देव देव ।
जगत् कर्त्ता औ जगत् विश्रामको ॥२॥

प्रणत पालक औ परेश्वर मुक्तिकर ।
दिव्य देही दिव्य गुण गण धामको ॥३॥

जा रहा जीवन चला मंगल विफल ।
भजहु भजने योग्य जन–अभिरामको ॥४॥

३१

राघव प्रणतपाल दयाल ।

सकल साधन हीनहू निज जनहिं करत निहाल ॥
पुत्र टेरेहु आर्त्त द्विजकी आर्ति टारन हार ।
पाहि बोले मात्र वारनराज तारन हार ॥१॥
दीनबन्धु दयाब्धि दानी द्रवत देखत दीन ।
भक्त जन बिन तथा तडपत यथा जल बिन मीन ॥२॥
योग याग विहाय ज्ञानहु चाहते इक प्रीति ।
सकृत् शरणहुसे स्वजनकी हरत सबही भीति ॥३॥
सर्व स्वामी सर्वमें बसि सर्व साधत राम ।
कहत **मंगल** करहु मंगल–करनि भक्ति ललाम ॥४॥

आर्त्त=दुखी आर्त्ति=दुख । विहाय=छोडकर । सकृत्=एकवार ।

३२

ऐसे राम परम कृपाल ।

शरण आवतही जननके बनत नित रखवाल ॥
गरजता इत केसरी उत व्याध तानत बान ।
हरिन हरि सुमिरन किया राखे शरन भगवान् ॥१॥
व्याल काटा व्याधको छूटा धनुषसे तीर ।
हरिन हरि रक्षित, हुआ शर विंधा सिंह शरीर ॥२॥
कर्म कर्मी योग योगी करि न पावहिं जाहिं ।
भालु मर्कट भीलको सोइ राम मिलत सराहि ॥३॥

चहत इत उत लोक गमनागमन से विश्राम ।
कहत मंगल तो भजो नित राम मंगल-धाम ॥४॥

३३

प्रेमी प्रेम निबाहन श्रीरघुनन्दन केवल जानत है ।
वनके वानर भालु किरातहिं निज कुटुम्बिसम मानत हैं ॥
सुर भूसुर सम भेंटि हृदयसे केवटको सन्मानत हैं ।
सरस महल पकवान निरस कहि शबरी बेर बखानत है ॥१॥
जाति पांति विद्या कर्मादिक निज जनके न विचारत हैं ।
सुभग दृष्टि भक्तनके केवल भक्तिभाव पर डारत है ॥२॥
मंगल साधन हीन दीन निज नाम रटनसे तारत है ।
एक वार ही चरण शरणसे शरणागत-भय टारत हैं ॥३॥

३४

गुणपै बलि जाउं राम गुणपै बलि जाउं ।
सब दिन सब विधि अपार गुनतैं थकि जाउं ॥
सहस वार ढांकत जन अवगुण-परिवार ।
भक्तनका एकहु गुण कहत सहस वार ॥१॥
भक्तन दुख नाशि राम सब बिधि सुख देत ।
आरत जन बन्धु करत आरत जन हेत ॥२॥
चाहत नहिं विद्या कुल चाहत बस प्रेम ।
रीझत हैं तेहि पर जेहि सुमिरनका नेम ॥३॥

सकल आस छोडि शरण मांगत अभिराम ।
निर्भय सब भांति करत मंगल श्रीराम ॥४॥

३५

जिनके राम हों रखवार ।
तिनको कौन मारनहार ॥

शत्रु बनि ससार करि सकता न बांका बार ।
हों अमीतहु मीत, सिरजैं सब विगाडनहार ॥१॥

हलता नहीं पत्ता कहीं बिन जासु सत्ता पाय ।
दुःख हर तेहि रामका जन सकै कौन दुखाय ॥२॥

अचेतन चेतन करति जेहि पादपावन धूरि ।
तासु जन लखि सर्वदा भव-भीति भागति दूरि ॥३॥

तरे वारिधि वारि पर जेहि नाम बल पाषान ।
भजहु मंगल ताहि रामहिं तजहु सर्व गुमान ॥४॥

३६

राघव-भक्ति सब सुख-खानि ।
धर्म अर्थ सुकाम मुक्तिहु देति आश्रित जानि ॥

भक्तके दुखमें दुखी हो सुखी सुखमें होइ ।
हर्ष करिके करति सोई भक्त चाहत जोइ ॥१॥

भक्ति आशा करत नित जो सर्व-आस विहाइ ।
देखि तेहि भवजलधि बूडत राम तारत धाइ ॥२॥

ध्रुव तथा गज गीध गणिको काक कीश कबीर ।
भक्ति गहि प्रहलाद मीरा तरे तुलसी धीर ॥३॥
राज जन धन कर्म विद्या आदिकी तजि आस ।
करहु मंगलकरनि राघव-भक्ति मंगलदास ॥४॥

३७

तब श्री रघुवर-भक्ति मिलै ।
जब मद मोह लोभ क्रोधादिक अवगुण-राशि जलै ॥
जब सब शीत अशीत जयाजय सुख दुख द्वन्द्व गलै ।
असि विराग गुरु-ज्ञान कवच धरि वैरी विषय दलै ॥१॥
जब श्रीराम राम-जन सेवन हित तन मन मचलै ।
मंगलदास राम यश गावत सन्तन मार्ग चलै ॥२॥

३८

राघव-भक्ति नवधा जान ।
मुक्ति दायिनि भक्ति अङ्गिनि अङ्ग कर्म ज्ञान ॥
श्रवण सुन्दर सुनैं राघव रूप गुण यश धाम ।
मिलै तब श्रीरामका अनुराग सुखका धाम ॥१॥
रटै रसना रामका रसधाम गुण यश नाम ।
करे कीर्त्तन होति जन सायुज्य मुक्ति ललाम ॥२॥
राम-सुमिरन सद्य नाशत पाप-पुञ्ज महान् ।
राम सुमिरत होत जन का सकल विध कल्यान ॥३॥

रामके पदपद्म सेवत अन्य सेवन छोडि ।
ताहि तारत भवजलधिसे तुरत रघुवर दौडि ॥४॥
श्रौत लौकिक अर्चनासे अर्चिके रघुराय ।
सुखीहों जन लोक औ परलोक सम्पति पाय ॥५॥
रामका वन्दन करत सब नष्ट हों भव–द्वन्द ।
स्वर्ग दुर्लभ लहत जन अपवर्गका आनन्द ॥६॥
रामकी करि आस जगसे रहै नित्य उदास ।
रामकाही दास हो तो सर्व जग हो दास ॥७॥
रहैं सुखमें भगैं दुखमें सर्व स्वारथ मीत ।
सर्वदा ही मीत नरके राम वानर मीत ॥८॥
कहत **मंगल** कृति तथा मतिमान् तजि मतियोग ।
निजहिं रामहिं अर्पि पावहिं मुक्ति मंगल भोग ॥९॥

सद्य=शीघ्र । श्रौत=वैदिक । लौकिक=लोकसम्बन्धी (पौराणिक अथवा पञ्चरात्र सम्वन्धी आदि)

३९

साधो भक्ति–साधन सात ।

भक्ति राघव सतत सुमिरन, करे बन्धन जात ॥

अर्थ–हे साधो भाई भक्तिके सात साधन है । अथवा हे भाई भक्तिके सात साधनोको साधो (करो) । भगवान् श्रीरामजीका निरन्तर स्मरणही भक्ति है । भक्ति करनेसे कर्म बन्धन दूर हो जाता है । (छूट जाता है) ।

जाति आश्रय आदि दूषण रहित अन्नहिं खाय ।
होत तबही काय शुद्धि विवेक सोइ कहाय ॥१॥

अब जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महामुनीन्द्र भक्तिके सातो साधनो को क्रमशः कहते है । भक्तिका प्रथम साधन 'विवेक' है । प्याज लशुन इत्यादि अन्न (खाद्य पदार्थ) जातिदूषण वाले है । पतित चोर ठग इत्यादि लोगोके अन्न आश्रयदूषण वाले है । और उच्छिष्ट (जूठा) केशपतित बासी दुर्गन्धवाला कीटपतित इत्यादि अन्न निमित्त-दूषणवाले है । इन तीनो दोषोसे रहित अन्नके खानेसे जो कायाकी शुद्धि होती है, वही विवेक नामवाला भक्तिका साधन है ॥१॥

शब्द रूप स्पर्श रस औ गन्ध करते शोक ।
विषय-पञ्चक-अनादरही भक्ति-हेतु विमोक ॥२॥

भक्तिका दूसरा साधन 'विमोक' है । शब्द स्पर्श रूप रस और गन्ध ये पाचो विषय शोक उत्पन्न करते है । पाचो विषयोका अनादर ही 'विमोक' नामवाला भक्ति साधन है ॥२॥

सतत चिन्तै राम-विग्रह छोडि सबकी आस ।
योगसाधक सोइ साधन कहत बुध अभ्यास ॥३॥

भक्तिका तीसरा साधन है 'अभ्यास' । कर्म विद्याआदि सभीकी आशाको छोडकर भगवान् श्री रामजीके विग्रहका सतत चिन्तन भी भक्तिका साधन है। योगसाधक उसी साधनको पडित लोग 'अभ्यास' कहते हैं ॥३॥

यज्ञ–पञ्चक करै पालै अन्य आश्रम–धर्म ।
ताहि कहते क्रिया जो जन जानते श्रुति–मर्म ॥४॥

भक्तिका चौथा साधन 'क्रिया' है । वेदके मर्म जाननेवाले लोग पञ्च महायज्ञ (बलिवैश्वदेव आदि)के करने तथा आश्रमोके अन्यान्य धर्मों के पालन करनेको 'क्रिया' नामवाला भक्तिसाधन कहते हैं ॥४॥

अहिंसा प्रिय सत्य ऋजुता मानपूर्वक दान ।
असंकल्प अहेतु करुणा जानिये कल्यान ॥५॥

अहिसा (किसीको भी मन वचन और क्रिया से दुख न देना) प्रिय सत्य बोलना, ऋजुता (अकुटिलता) मानपूर्वक दान देना, असंकल्प (विरुद्धसकल्प न करना) और अहेतुकी दया इत्यादि को 'कल्यान' जानिये । 'कल्यान' भक्तिका पाचवा साधन है ॥५॥

शोक भयके हेतु होता दैन्य मानस–खेद ।
दैन्य वर्जन अनवसादहु भक्ति साधन–भेद ॥६॥

मनका खेद ही दैन्य है । दैन्य अर्थात् अवसाद (मानसखेद) शोक और भयके कारणसे होता है । दैन्यका अभाव अर्थात् 'अनवसाद' (दैन्याभाव) भक्तिका छट्ठा साधन है ॥६॥

कहत मङ्गल जीवका सन्तोष अति उद्धर्ष ।
अनुद्धर्षहु भक्ति साधत रहित तुष्टि–प्रकर्ष ॥७॥

जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी महामुनीन्द्र कहते है कि जीवके अतिसन्तोषको उद्धर्ष कहते हैं । सन्तोषके प्रकर्ष (अधिकता) से रहित

अनुद्धर्ष भी (उद्धर्षाभाव भी) भक्तिका साधन है। भक्तिका सातवा साधन 'अनुद्धर्ष' है ॥७॥

श्री शुकदेवजीके शिष्य बोधायनवृत्तिकार श्री ११०८ जगद्गुरु श्री पुरुषोत्तमाचार्यजी बोधायन मुनिके शिष्य श्री ११०८ जगद्गुरु श्री गङ्गाधराचार्यजी महाराजने साधनदीपिकामें भक्ति के उक्त सातो साधनोंका वर्णन नीचे लिखे प्रकारसे किया है—

श्री ११०८ जगद्गुरु श्री गङ्गाधराचार्य प्रणीता

साधनदीपिका

सीतानाथसमारम्भां वादरायणमध्यमाम् ।
बोधायनाख्यगुर्वन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥१॥

जगद्गुरु श्रीगङ्गाधराचार्यजी महाराज कहते हैं कि श्रीसीतानाथ भगवान् श्री रामजीसे आरम्भ हुई श्रीवादरायण व्यासजी जिसके मध्यमें है उस निजगुरु बोधायन नामक जगद्गुरु श्री पुरुषोत्तमाचार्यान्त गुरुपरम्पराका मै वन्दन करता हू ॥१॥

रामस्य ब्रह्मणोऽनन्य भक्त्यैव मुक्तिराप्यते ।
भक्तिर्ध्रुवा स्मृतिः सा च विवेकादिकसप्तकात् ॥२॥

परब्रह्म भगवान् श्रीरामजीकी अनन्य भक्तिही से मुक्ति मिलती है। ध्रुवा स्मृति अर्थात् तैलधाराके समान अखण्ड श्री रामस्मरणही भक्ति है। और वह भक्ति विवेक इत्यादि सात साधनोसे होती है॥२॥

जात्याश्रयनिमित्तैर्यद् दुष्टमन्न भवेन्न हि ।
तस्माद् देहस्य संशुद्धिर्विवेकः कथ्यते बुधैः ॥३॥

जो अन्न जाति आश्रय और निमित्त तीनो दोषोसे दुष्ट न हो उससे देहकी सशुद्धिको पडित लोग 'विवेक' नामवाला भक्तिका प्रथम साधन कहते हैं ॥३॥

शब्दरूपरसस्पर्शगन्धेषु विषयेषु यः ।
अनादरः स तत्त्वज्ञैर्विमोकः परिकीर्त्तितः ॥४॥

शब्द स्पर्श रूप रस और गन्ध नामक पाच विषयोका अनादर ही तत्त्वज्ञानियो द्वारा 'विमोक' नामवाला भक्तिका दूसरा साधन कहा गया है ॥४॥

शुभाश्रयस्य यच्चात्र संशीलनं पुनः पुनः ।
अभ्यासः साधनं तद्धि योगध्यानोपकारकम् ॥५॥

भगवान् के दिव्य विग्रह को शुभाश्रय कहते है । श्रीरामजीके दिव्यविग्रहका अच्छी प्रकारसे वारंवार चिन्तन ही योगध्यानोपकारी 'अभ्यास' नामवाला तीसरा भक्तिसाधन है ।

यथाशक्ति हि पञ्चानां यज्ञानां महतां तथा ।
आश्रमान्तरधर्माणामनुष्ठानं क्रिया मता ॥६॥

शक्तिके अनुसार पाच महायज्ञो और आश्रमोके अन्य धर्मो का 'क्रिया' नामवाला चौथा भक्तिसाधन माना गया है ॥६॥

अहिंसा चानभिध्या च सत्यार्जवे तथा दया ।
दानं चैतानि कल्याणतयाऽऽम्नातानि सूरिभिः ॥७॥

अहिसा (मन वचन और कायासे किसीको पीडा न देना), परायी वस्तुके लेनेका सकल्प नही करना, सत्य बोलना, सरलता (कुटिलता नहीं करना), दया तथा दान इत्यादिको विद्वान् पुरुषोने 'कल्याण' नामवाला भक्तिका पाचवा साधन कहा है ॥७॥

शोकभीतिनिमित्तेनावसादश्चित्तदीनता ।
तदभावो हि सम्प्रोक्तोऽनवसादो महात्मभिः ॥८॥

शोक और भयसे होनेवाली चित्तकी दीनताको अवसाद कहते हैं । अवसादके अभाव (चित्तकी दीनताके अभाव) को महात्माओने अनवसाद नामक भक्तिका छठ्ठा साधन कहा है ॥८॥

उद्धर्षः खलु सन्तोषोऽनुद्धर्षस्तद्विपर्ययः ।
शोकवच्चातिसन्तोषे मनःशैथिल्यहेतुता ॥९॥

सन्तोषको उद्धर्ष कहते हैं । उद्धर्षके अभाव अर्थात् अतिसन्तोषके अभावको (न होनेको) अनुद्धर्ष कहते हैं । 'अनुद्धर्ष' भक्तिका सातवा साधन है । शोकके समानही अतिसन्तोष भी मनकी शिथिलता का कारण है । मनके शिथिल होनेपर भक्ति नही बनती है । इस लिये अतिसन्तोषके अभावस्वरूप अनुद्धर्षको भक्तिका साधन मानते है ॥९॥

पुरुषोत्तमशिष्यश्रीगङ्गाधरार्यनिर्मिता ।
अज्ञानध्वान्तहृद् भूयादेषा साधनदीपिका ॥१०॥

जगद्गुरु श्री पुरुषोत्तमाचार्यजी बोधायनके शिष्य जगद्गुरु श्री

गङ्गाधराचार्यजी निर्मित यह **साधन दोपिका** अज्ञानान्धकारको हरण करनेवाली हो ॥१०॥

श्री ११०८ भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजीने भी श्री भगवद्-गीताके आनन्दभाष्यमें उक्त भक्तिके सातो साधनोका निर्देश किया है।

"एवमात्मदर्शनमभिधाय विवेकादिसाधनसप्तकजन्य-परविद्याप्रस्तावं विदधाति–योगिनामिति।"

(गीताका आनन्दभाष्य ६–४७)

अर्थ–इस प्रकारसे आत्मज्ञानको कहकर विवेक विमोक आदि साधनसप्तकसे उत्पन्न होनेवाली परविद्या (अनन्य भक्ति)का प्रस्ताव भगवान् योगिनामित्यादि श्लोक द्वारा करते हैं।

श्रीरामानन्दपीठनामक श्रीटीलाद्वारपीठके सस्थापक श्री ११०८ जगद्गुरु श्री टीलाचार्यजी ने भी शिक्षासुधामे भक्तिके उक्त सात साधनोंका निर्देश किया है—

अनुद्धर्ष अभ्यास औ अनवसाद कल्यान।
क्रिया विवेक विमोक ये भक्तिद "टीला" जान॥

४०

रामहि से करहु अनुराग।

रामही में रमहु निशिदिन राम बिन सब त्याग॥
रामही की चाह राखहु विषय–चिन्ता छोडि।
रामही को रटहु निशिदिन जगत्से मुंह मोडि॥१॥

रामही की करहु आशा रामहीसे प्रेम ।
रामही के दास हो, करि रामहीका नेम ॥२॥

रामहीको नाइ शिर औ रामहीको ध्याइ ।
रामहीको रिझइ जीवहु रामहीको गाइ ॥३॥

रामही की सुनहु कीरति रात दिन हर्षाइ ।
रामही के पाद सेवहु हृदय अति उमगाइ ॥४॥

रामहीका करहु वन्दन राम लखि मुसकाहु ।
रामहीको पूजि मंगल राम पै बलि जाहु ॥५॥

४१

रामहीका नाम साधन सांच है ।
जो रटै तेहिको न आती आंच है ॥
योग्य जनको योग्य देते राम हैं ।
योग्यताकी अन्त होती जांच है ॥१॥

विपत् आते सब भरोसा हों असत् ।
रामका केवल भरोसा सांच है ॥२॥

जो न मंगल रामका करता भजन ।
ताहि अति माया नचाती नाच है ॥३॥

४२

ऐसा राम नाम–प्रताप ।
उपल जल तरि कीन्ह सेतुहिं तरा कटक अमाप ॥१॥

निज पुरी–जन मुक्त करते राम कहि त्रिपुरारि ।
राम कहि पी गये कुम्भज सकल वारिधि–वारि ॥१॥
प्रथम पूजित भये गणपति पकडि रघुपति–नाम ।
वाल्मीकिहु आदि कवि भये जपे उलटा राम ॥२॥
तरे मगल राम जप करि करी कीश निषाद ।
यवन अवगुण–भवन गणिका विभीषण प्रहलाद ॥३॥

४३

सियराम भजो सियगम भजो
करि प्रेम सदा तन मन धनसे ।
सियराम भजो सियराम भजो
आचरो धर्म बचि विषयनसे ॥
यदि इच्छा हो धन धाम मिले ।
आराम मिले शुभ नाम मिले ॥
सियराम भजो सियराम भजो
तो निकलो माया–बन्धनसे ॥१॥
यदि इच्छा हो लव शोक न हो ।
मर जाने पर यम–लोक न हो ॥
सियराम भजो सियराम भजो
तो मुख मोडो भव-रंजन से ॥२॥
यदि इच्छा कोई ठगै नहीं ।
दुख-दाता कोई जगै नही ॥

सियराम भजो सियराम भजो
तो भागो वंचन हिंसनसे ॥३॥

यदि इच्छा हो सन्मार्ग मिले।
शिरसे सारा जंजाल टले ॥

सियराम भजो सियराम भजो
तो सत् शिक्षा लो संतनसे ॥४॥

यदि इच्छा हो घर बार चले।
सुखसे सारा व्यापार फले ॥

सियराम भजो सियराम भजो
तो मंगल सत्य कहो मनसे ॥५॥

४४

जियरा राम रामहु बोल।

विषय विष करि दूर जीवनमें अमीरस घोल ॥

तजि खुशामद और निन्दा युक्त झूठे बोल।
सत्य प्रिय हित बोल वाणी सुधा सदृश अमोल ॥१॥

करत शिक्षा स्वयंहू कर बातही जिनि छोल।
व्यर्थही जिनि डोल जीवन जा रहा अनमोल ॥२॥

कहत मंगल जो न रसना अन्त रामहिं बोल।
मुक्तिधाम न पाय फेरा फेरि फिरिहै गोल ॥३॥

४५

नित्य राघवसिय राघवसिय राघवसिय बोल ।
भला इसमें भी तेरा कुछ लगता हैं मोल ॥
त्रिगुण मायाने अद्भुत बिछाया है जाल ।
काम क्रोधादि मायाके पक्के दलाल ॥
सभी खोवत हैं मानवका जीवन अनमोल ॥१॥

मनुज मनमें न पशुताको करते लजायं ।
विपत् आने पै अपने कहाते परायं ॥
चलैं गर्दभकी चाल ओढि सावजकी खोल ॥२॥

कर्म करके है भोगत औ करता है फिर ।
भूमिसे स्वर्ग पा स्वर्गसे भूमि फिर ॥
यथा कोल्हूका बैल फिरा करता है गोल ॥३॥

मनुजका जन्म कितने दिनोंमें मिला ।
पुण्य वेलाका सुन्दर सुमन यह खिला ॥
काट कर्मनके बन्ध आंख भीतरकी खोल ॥४॥

पायके जन्म कितने सफल कर गये ।
राम–यश गाय भवसिन्धुको तर गये ॥
करिय कीर्त्तन बजाकर मजीरा औ ढोल ॥५॥

रामसीताने सुन्दर कृपा करदिया ।
भजन करले सम्हरनेका अवसर दिया ॥
कहैं मंगल ना रसघटमें विषकोतू घोल ॥६॥

४६

रघुवर-शरण परम उदार ।

करति धर्म विहीनहूको भवजलधिसे पार ॥
सुखद संसृति हरनि रघुपति शरण पै बलिहार ।
ऊच नीच न भेद जेहिमें सबका अधिकार ॥१॥
सकल जन पर जाहि जननि समान समता भाव ।
लेत आश्रय करति भयसे सकल भांति बचाव ॥२॥
दीन हो प्रतिकूलता तजि रामके अनुकूल ।
रामका हूँ त्राहि कह विश्वास कर सुख मूल ॥३॥
कहत मंगल रामसे मांगै शरण इक बार ।
अभय करते सर्वसे तो राम करुणागार ॥४॥

४७

मैं प्रभु सब दोषनका कोष ।

गति हीनन-गति हो तुम राघव
करेहु न मोपर रोष ॥
पूजत तव पद जलज नाथ मोहिं
लोक-लाज लगि जात ।
मान उदर हित विविध स्वांग धरि
नाचत नाहिं लजात ॥१॥

लेत परम सुख देत परम दुख
निज हित करत गुहार ।
गरल सदृश सो लगत कहत जो
करन दान उपकार ॥२॥
बुध बनि सब कहं सिखवहुं परमैं
करहुं न स्वयं गँवार ।
कामन हित धावत मानत नहिं
मन पामर – सरदार ॥३॥
मंगल कहत जगत् मंगल कर
हे मंगल – गुणधाम ।
मगलकरनि देहु मोहिं राघव
निज–पद–रति निष्काम ॥४॥

४८

अब मोहिं तारिये रघुनाथ ।
तुमहिं तजि जेहि आस कीन्हेउं सो भगें तजि साथ ॥
छोडि साधन सकल आयउं शरण करुणासिन्धु ।
नाथ अब मम बांह पकडहु बूडता भवसिन्धु ॥१॥
लोभ लहरनसे भयानक अगम माया नीर ।
पकडि नक्र मनोज खैंचत मन धरत नहिं धीर ॥२॥
दार दारक आदि ममता बहुत बहत बतास ।
भक्ति नावहिं दूर राखत और की नहिं आस ॥३॥

कहत श्रुति गण तव शरण भवजलधि मंगलसेतु ।
करहु **मंगलदास मंगल** पाहि रघुकुल-केतु ॥४॥

मनोज=कामदेव । बतास=पवन ।

४९

हम तुमरे तुम राम हमारे ।

तुमरो ही नाता अविनाशी
नश्वर नाते जगके सारे ॥
सब आवत सुखमें नहिं दुखमें
दुखमें आवत तुमहिं हमारे ।
कर्म-बन्ध सबही दृढ करते
तुमही काटत बन्धन सारे ॥१॥
लूटत दैवी सम्पति नित नित
कामादिक रिपुवृन्द हमारे ।
तुमरे बिना न ये वश होते
करि करि थके यतन हम सारे ॥२॥
आपद् नई नई बरसावत
ग्रह प्रतिकूल भये पुनि सारे
सुखकी आस न कोउसे यदि तुम
राम न हो अनुकूल हमारे ॥३॥

अवसर बार बार प्रभु दीन्हेउ
तबहु न गये स्वभाव हमारे ।
मंगल जन अपराध क्षमहु अब
नाथ गहउं पदपद्म तुम्हारे ॥४॥

५०

नयनों में बसो सियराम ।
गौर श्याम किशोर सुन्दर जग-नयन-विश्राम ॥
सीय दक्षिण भाग राजो राम जग-अभिराम ।
दामिनी संग मनहुं शोभै सुभग नीरद श्याम ॥१॥
तरुण अरुण पदाम्बुजनमें हेममय पदत्रान ।
कर कमलमें होंय शोभित कमल औ धनु बान ॥२॥
चन्द्रिका शिर क्रीट कुण्डल कानमें द्युति कारि ॥
लाल पीले रंग रंगे रेशमी पट धारि ॥३॥
वक्ष रत्ननहार चित्रित भाल तिलक ललाम ।
वारिये छवि उपरि मंगल कोटि रति औ काम ॥४॥

५१

रघुवर लखहु मोरिहु ओर ।
भरहु तव अनुराग मम हिय करहु करुणाकोर ॥
जाहिं जेहि जेहि ठौर लै मम करम मोहिं बरजोर ।
करइ चिन्तन चित्त तह तहं रूप तव चित चोर ॥१॥
चहौं नहिं रिधि सिधि सुगति औ राज सम्पति मान ।

'रामका लघुदास हूं' दृढ चहौं यह अभिमान ॥२॥
सकल मम जन भले छोडैं विपति में मम मोह ।
जन विपति हर नाथ तुम जिनि मोर छोडेहु छोह ॥३॥
आस औ विश्वास सबका छोडि मांगौ नाथ ।
देहु मंगलकरनि मंगल भक्ति तव रघुनाथ ॥४॥

५२

हे राम दयासिन्धो मुझ पर भी दया करना ।
भवसिन्धु पार कर्त्ता मुझको भी पार करना ॥
कोई नही सहारा विश्वास है तुम्हारा ।
मैं जानता नहीं हूं जप योग याग करना ॥१॥
यह जन्म औ मरणका चक्कर बडा बुरा है ।
पडता है नाथ तीनों तापों में नित्य जलना ॥२॥
मतलबके साथियोंको तजिके किया है निश्चय ।
तव नाम सदा रटना तव ध्यान सदा धरना ॥३॥
मंगल चरण शरणमें मंगल पडा हुआ अब ।
है चाहता तुम्हारी मायाको नाथ तरना ॥४॥

५३

भक्त हरिहिं हरि भक्तहिं ध्यावैं ।
अन्य परायणताको परिहरि
हृदय परस्पर प्रीति बढावैं ॥

जिमि चकोर शसि तिमि दोउ दोउ छवि
नयनन निरखत नाहिं अघावैं ॥१॥

जल बिन मीन सदृश दोउ दोउ बिन
छिन छिन प्राण तजन अकुलावैं ॥२॥

हरि–यश भक्त भक्त–यश हरि पुनि
सुनन हेत सब कुछ तजि धावैं ॥३॥

मंगलदास प्रेमसे नित नित
हरि हरि भक्तनके यश गावैं ॥४॥

५४

रामचन्द्र नित पूजो उनका धाम सभीसे ऊंचा है ।
सभी अधूरे ब्रह्मादिक सुख राघव सुखहि समूचा है ॥

राम रमैं सर्वेश्वर सबमें सबसे रहत निराले हैं ॥
छिपे हुए सर्वत्र रामजी सब पर माया डाले हैं ॥१॥

दुर्गुण गणसे रहित रामजी सागर शुभ गुणवाले हैं ।
स्वयं प्रकाशित दिव्य देह कच परम रम्य घुघराले हैं ॥२॥

दिव्य विभूषण वसन पार्षद चाप बाण कर सोहत हैं ।
दिव्यासन आसीन रूप लखि सुरनरमुनि मन मोहत हैं ॥३॥

अर्चैं चर्चैं वन्दैं सो जन जनम मरणसे छूटैंगे ।
मंगल मंगल–धाम राम रटि नित्यधाम सुख लूटैंगे ॥४॥

५५

तेहि हिय करहिं रघुवर वास ।

जासु हियमें रामहीके आस औ विश्वास ॥
यथा सरिता-जल भरेहु नित रहत जलधि अपूर्ण ।
श्रवण करि हरि-कथा तिमि जेहि श्रवण होत न पूर्ण॥१॥
नील नीरद राम जेहिके चक्षु चातक-रूप ।
अपर सुर सर सरित तजि जल चहत राघव-रूप ॥२॥
जपि षडक्षर राममन्त्रहिं मन्त्रराज ललाम ।
जासु रसना रटति नित रस-धाम रघुवर-नाम ॥३॥
जो दयादिक गुणगणाकर सकल दुर्गुण हीन ।
राम-पाद-प्रपन्न मंगल राम-पूजक दीन ॥४॥

५६

रामकी मायाने नाच नचाया ।

गृह-जन निशिदिन दुर दुरायं तऊ तजत न नर गृह-माया ॥
भीत-दरार वास भुजगनके छानि चहै भहरान ।
ऐसाहू गृह तजत गृही नहिं ममता अति अधिकान ॥१॥
पहिरनको कपडा नहिं तनपै खानेको नहिं धान ।
जागतसे सोवत तक झगडा तऊ गृह स्वर्ग समान ॥२॥
राम बिना साधन गणसे कोउ माया-पार न पाव ।
मंगल माया-पार उतारै राम-शरण दृढ नाव ॥३॥

भहरान=गिरना ।

५७

आश्रय रामहीका लेव।
जगके छोडिके सब देव॥

दया हियमें राखिके नित सन्त जनपद सेव।
राम-चरित अतृप्त ह्वै सुनि धर्ममें चित देव॥१॥
छकिय राम-स्वरूप लखि कर राम पद में प्रेम।
राम-प्रीति बढाय करि कर ध्यानका शुभ नेम॥२॥
दास्य रस सरसाइ हियमें रामका ह्वै दास।
त्यागि सर्वस करिय मंगल सुदृढ राघव-आस॥३॥

५८

बीतै नकाम भजन बिन जीवन॥
राम भजनसे मोक्ष मिलत है
बिन श्रम औ बिन दाम॥१॥
राम भजन सुखदे अविनाशी
रहत न दुखका नाम॥२॥
राम भजन बिन बनते जनके
साधन सकल नकाम॥३॥
जननी जनक दार दारक धन
आवत अन्त नकाम॥४॥
सर्वस छोडि सर्वप्रद मंगल
भजहु सर्वपति राम॥५॥

५९

भजु रे मन रामचन्द्र दूसरा न कोई ।
जनकी गति रामचन्द्र दूसरा न कोई ॥
बहि वहि जेहि हेत मरत माल मान खोई ।
काम पडे राम बिना धावत नहिं कोई ॥१॥
भोगत फल तैसा नर करनी जस होई ।
पावै किमि सम्पति सुख पाप बीज बोई ॥२॥
जगत् राग रंग माहिं तन मन धन गोई ।
भजन बिना अन्त मूढ रोवत दिन खोई ॥३॥
मंगल सुख देखि हँसत आखिर सो रोई ।
सुखमें जो राम भजत नित्य हंसत सोई ॥४॥

६०

सियाराम भजन माहिं चित्त लगारे ।
जन्म जन्म कर्म काटि भोग भगारे ॥
तन धन जन नाहिं देख ।
राम हृदय माहिं पेख ॥
तन धन जन देखि देखि मोह लगारे ॥१॥
जगत् राग रंग छोड ।
विषयनसे हाथ जोड ॥
जगत् राग रंग देखि लोभ लगारे ॥१॥

छोडी चलैं सब चलने वाले जोरि जोरि सब माल ॥२॥
दिशा बहिर होतीं डंकोंको सुनि अरि होत बेहाल ।
काल घडी जब आवति उनकी गलति न तनिकौ दाल ॥३॥
मंगल निर्भय राम-शरण लो चलो न खोटी चाल ।
आत्मसमर्पक बलिके रघुपति भये द्वाररखवाल ॥४॥

६३

अपना कौन है बिन राम ।
नाहिं सुखके मीत दुखमें कोइ आवत काम ॥
राम सब सुख धाम तजि जन धाम करते श्वेत ।
अन्तमें तहं स्वजनही नहिं रहन पलहू देत ॥१॥
'जियहुं तुम बिन ना' कहत इमि बन्धु जन सुत नारि ।
बांधि लकडी सदृश सोई अन्त डारत जारि ॥२॥
कहत मंगल भजहु निशि दिन राम मंगल-धाम ।
महा पतितहु बनत पावन लेत जाकर नाम ॥३॥

६४

जीवन सफल तबही होय ।
जड औ अजड शरीरी रामहिं जानि भजन जो होय ॥

जो समस्त जड और अजड पदार्थरूपी शरीरोंके शरीरी (शरीरवाला) अर्थात् आत्मा भगवान् श्री रामजीको जानकर भजन करे तभी जीवन सफल हो सकता है । श्रुतिने भी कहा है कि-"विज्ञाय प्रज्ञां प्रकुर्वीत" (भगवान् श्रीरामजीको जानकर उनकी भक्ति करो)

'यस्यात्मा शरीरम्' (आत्मा अर्थात् जीव जिस परमात्माका शरीर है) **यस्य पृथिवी शरीरम्'** (पृथिवी जिस परमात्माका शरीर है) इत्यादि श्रुतिया तथा **'जगत् सर्व शरीरं ते'** (हे भगवान् श्रीरामजी यह सम्पूर्ण जगत् तुम्हारा शरीर हैं) इत्यादि स्मृतिया समस्त जड और अजड पदार्थोंको श्रीरामजीका शरीर और श्रीरामजीको सर्वका आत्मा कहती है ॥

प्रथम सर्व चेतनो और अचेतनोके आत्मा सर्वेश्वर भगवान् श्री रामजीका वर्णन करते है कि—

सच्चित् सुख सर्वेश राम विभु दिव्य देह गुणवान् ।
सर्जकादि सर्वज्ञ जगत्के आदि अन्त भगवान् ॥१॥

भगवान् श्रीरामजी सत् चित् और आनन्द स्वरूप हैं, सर्वके ईश्वर (नियामक) हैं. विभु परिमाणवाले अर्थात् सर्वके अन्तर और बाहर व्याप्त हैं और दिव्य (अप्राकृत) देह तथा दिव्य गुणोवाले हैं । सर्व जगत्के सृष्टिकर्त्ता पालनकर्त्ता और सहारकर्त्ता है, सर्व जगत्के आदि तथा अन्त रूप है अर्थात् सर्वजगत्के उपादान कारण (मूल कारण) है और भगवान् है अर्थात् ज्ञान शक्ति बल ऐश्वर्य वीर्य और तेज नामक षड्विध ऐश्वर्यवाले है ॥१॥

आनन्दभाष्यकार श्री ११०८ भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराजने भी कहा है कि—

"तस्य जगत्कर्त्तुर्ब्रह्मणो ज्ञानशक्तिबलैश्वर्यतेजोवीर्यादयो बहवः स्वाभाविका दिव्या गुणाः सन्ति ॥"

(आनन्दभाष्य १-१-१६)

अर्थ—उस जगत्कर्त्ता ब्रह्म के ज्ञान शक्ति बल ऐश्वर्य तेज वीर्य आदि बहुतसे स्वाभाविक दिव्यगुण है ।

"अत एव श्रुत्युपबृंहणीभूतेतिहासपुराणादिषु बहुशस्तत्र भगवतो दिव्यमङ्गलविग्रहस्योपवर्णनं सङ्गच्छते ।"

(आनन्दभाष्य १-१-२१)

अर्थ—इसीलिये वेदोके उपबृहण (विस्तार) स्वरूप इतिहास तथा पुराण आदिमे बहुतवार किया हुआ भगवान्‌के दिव्य मङ्गल विग्रहका वर्णन भी सगत हो जाता है ।

नीचे लिखी हुई श्रुतिया भी भगवान् को दिव्यशरीरवाला तथा दिव्यगुणोवाला कहती हैं—

"यदा पश्य . पश्यते रुक्मवर्ण कर्त्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम् ।" (मु० ३-१-३)

अर्थ—जब जीव ब्रह्माजीके कारण सुवर्णवर्णवाले पुरुष जगत्कर्त्ता ईश्वर भगवान् श्रीरामजीको देखता है ।

"परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च ।" (श्वे० ६-९)

अर्थ—उन भगवान्‌की परा शक्ति विविध प्रकारकी सुनी जाती

है। और उनके ज्ञान बल और क्रिया स्वाभाविक ही हैं। मायाके सम्बन्धसे होनेवाले औपाधिक नहीं हैं ॥१॥

मूल प्रकृति औ महत् अहंकृति तथा पञ्च तन्मात्र।
पञ्चभूत एकादश इन्द्रिय प्रकृति काल जडमात्र ॥२॥

अब जड पदार्थोंका वर्णन करते है—प्रकृति और काल दो जड पदार्थ हैं। प्रकृति चौवीस प्रकारकी है—मूल प्रकृति, महत्तत्त्व, अहकार पाच तन्मात्रा, पाच महाभूत और एकादश (ग्यारह) इन्द्रिय।

सत्त्वगुण रजोगुण और तमोगुण इन तीनोगुणोके आश्रय द्रव्यको प्रकृति कहते है। वह जड द्रव्य है। ईश्वर (भगवान् श्री रामजी) की इच्छासे प्रकृतिके सत्त्व रज और तम गुणोमे वैषम्य (न्यूनाधिक-भाव) उत्पन्न होता है। तो प्रकृतिका महत्तत्त्व नामक विकार होता है महत्तत्त्वसे अहकार उत्पन्न होता है।

अहकार तीन प्रकारका होता है। सात्विकाहकार राजसाहकार और तामसाहंकार।

राजसाहकारकी सहायतासे तामसाहकारसे पाच तन्मात्रा और पाच महाभूत उत्पन्न होते हैं। उसका क्रम इस प्रकार है—

तामसाहकारसे शब्दतन्मात्रा उत्पन्न होती है। शब्दतन्मात्रासे आकाशनामक महाभूत उत्पन्न होता है। आकाशसे स्पर्शतन्मात्रा उत्पन्न होती है। स्पर्शतन्मात्रासे वायुनामक महाभूत उत्पन्न होता है। वायुसे रूपतन्मात्रा उत्पन्न होती है। रूपतन्मात्रासे तेज नामक महाभूत

उत्पन्न होता है। तेजसे (अग्नि)से रसतन्मात्रा उत्पन्न होती है। रस तन्मात्रासे जलनामक महाभूत उत्पन्न होता है। जलसे गन्धतन्मात्रा उत्पन्न होती है। गन्धतन्मात्रासे पृथिवीनामक पाचवा महाभूत उत्पन्न होता है।

राजसाहकारकी सहायतासे सात्विकाहकार ग्यारह इन्द्रियोंको उत्पन्न करता है। ग्यारह इन्द्रियोमें ६ ज्ञानेन्द्रिया है और ५ कर्मेन्द्रिया हैं।

मन श्रोत्र त्वक् चक्षु रसना और घ्राण ये ६ ज्ञानेन्द्रिया है।

वाक पाणि (हाथ) पाद पायु (गुदा) और उपस्थ (मूत्रेन्द्रिय) ये ५ कर्मेन्द्रिया है।

इस प्रकार प्रकृति चौवीस भेदवाली है।

काल भी जड द्रव्य है। कालके तीन भेद हैं भूत वर्त्तमान और भविष्यत्।

प्रकृति और काल दोनों जड पदार्थ ईश्वरके शरीर हैं ॥२॥

चेतन जीव अजड ज्ञानाश्रय ज्ञानरूप अणुमान।
अविनश्वर सब जीव न नश्वर देहेन्द्रिय औ प्रान ॥३॥

अब जीव तत्त्वका वर्णन करते है—

सभी जीव चेतन है। सभी जीव अजड (जडभिन्न=स्वयप्रकाश) ज्ञानके आश्रय (ज्ञाता) ज्ञानरूप और अणुपरिमाणवाले है। विभुपरिमाणवाले नहीं है। सभी जीव अविनाशी है। देह इन्द्रिय और

प्राण नाशमान पदार्थ है । इसलिये अविनाशी जीवात्मा नश्वर देह इन्द्रिय और प्राणसे भिन्न हैं ॥३॥

ईश-अंश सुखरूप अनीश्वर जीव ईशके दास ।
मगल बिना भजन दुखभोगत मंगल बिना हताश ॥४॥

अब यह कहा जाता है कि जीवात्मा ईश्वर (ब्रह्म) नही किन्तु ईश्वरके दास हैं—

सभी जीव ईश्वरके अंश (शरीररूप अंश) सुखरूप तथा ईश्वर नही किन्तु ईश्वरसे भिन्न और ईश्वरके दास है । जगद्गुरु श्री मङ्गलाचार्यजी कहते है कि भगवान् श्रीरामजीके भजनके बिना ससारी जीव मगल रहित और हताश होकर दुख भोग रहे है ॥४॥

ऊपरके चौसठवें पद (भजन) द्वारा जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्यजी महाराजने मुमुक्षु (मोक्षचाहनेवाले) जीवोके परमोपयोगी तत्त्वत्रयके ज्ञानको कहा है ॥६४॥

६५

राम ब्रह्मकी प्रीति बिना जग जाय न माया जीति ।
ब्रह्म-बोध बिन कबहुं ब्रह्मकी होय न सांची प्रीति ॥
जिससे जन्मि जगत् जिसमें स्थित पुनि जिसमें हो लीन ।
अचित् और चित् तनुधारी सोइ कहते ब्रह्म प्रवीन ॥१॥
अचित् अचेतन प्रकृति काल मति नित्य धाम साकेत ।
चित् चेतन संसारि दुखी औ मुक्त नित्य सुख लेत ॥२॥

बद्ध मुक्त दुइ भांति जीवगण त्रिगुण प्रकृति चौवीस ।
जानि काल गति भजहु राम जो सकल लोकके ईश ॥३॥

राम भजे बिन कटैं न कौनिउ भांति कर्मके फन्द ।
निशिदिन पचिपचि मरेहु कबहुं नहिं मिटैं विपतिके कन्द॥४॥

आये हर्ष शोक खोये तजि भजिये सीताराम ।
मंगल सीताराम कृपा बिन मिलै न कहुं विश्राम ॥५॥

६६

अद्वैती गंगानन्द आज थे आये ।
उनके ब्रह्मैक्य-विचार हमें नहि भाये ॥

पूछा क्या गंगानन्दहि नाम तुम्हारा ।
'हां' कहे तो उनसे पूछा प्रश्न दुबारा ॥
'तुमने तो ब्रह्महिं नाम रहित निर्धारा ।
फिर कहिये उससे कैसे ऐक्य तुम्हारा ॥'

वे हंसे और अपना विचार दर्शाये ।
उनके ब्रह्मैक्य-विचार हमें नहिं भाये ॥१॥

'जब ब्रह्म-नाम श्रीराम आदि हो कहते ।
तो क्यों चिढते निज-नाम ब्रह्मका कहते ॥'
'हम बोले तबतो मानहु हम हैं कहते ।
हैं भिन्न जीव औ ब्रह्म वेद भी कहते॥'

श्रुति-वचन हमारे उनको लगे सुहाये।
उनके ब्रह्मैक्य-विचार हमें नहिं भाये ॥२॥

निगमागम जीवहिं दास ब्रह्मका कहते।
यदि उभय एक तो जीवहि क्यों दुख सहते।
यदि जीव ब्रह्म क्यों सुखी जगत् नहिं रचते।
यदि मुक्त ब्रह्म क्यों मुक्त सृष्टि नहिं करते ॥

सुनि राम भजनमें मंगल चित्त लगाये।
उनके ब्रह्मैक्य-विचार हमें नहिं भाये ॥३॥

"**ज्ञाज्ञौ द्वावजावीशानीशौ**" (ईश्वर और जीव दो अजन्मा तत्त्व हैं। एक (ईश्वर) ज्ञानी है अर्थात् सर्वज्ञ है और दूसरा (जीव) अज्ञानी है अर्थात् अल्पज्ञ है। एक ईश्वर है दूसरा अनीश्वर है।) इत्यादि वेदवचन जीव और ब्रह्मके भेदको कहते हैं।

"**प्रधान क्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः**" (प्रधानतत्त्व (प्रकृति) और क्षेत्रज्ञों (जीवों)का स्वामी ईश्वर है। वही गुणोका भी ईश है।)

"**सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः सर्वस्याधिपतिः**"(वृ ४-४-२२) (सर्वको वशमे रखनेवाला सर्वका नियामक और सर्वका स्वामी ईश्वर है) "**दासोऽहं कोशलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः**" (वाल्मीकि रा०) (श्री हनुमान्जी कहते हैं कि मैं अक्लिष्टकर्मा कोशलेन्द्र भगवान् श्रीरामजीका दास हू।) "**दासभूताः स्वतः सर्वे ह्यात्मानः परमात्मनः।**" (ईश्वरसहिता) (सभी जीव परमात्माके स्वत. दास

है ।) **"नियाम्यं धार्यमीशस्य शेषं तस्य च शेषिणः"** (वाल्मीकि संहिता) (उन शेषी सर्वेश्वर श्रीरामजीके नियाम्य धार्य और शेष स्वरूप सब जीव हैं) इत्यादि निगमागमवचन बतलाते हैं कि सर्व जीव सर्वेश्वर भगवान् श्रीरामजीके दास हैं ॥

श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दपीठके संस्थापक श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीटीलाचार्यजी महाराज (श्रीसाकेतनिवासाचार्यजी महाराज) यतीन्द्रने भी प्रबोधकलानिधि मे कहा है—

"दासाकांक्षितवस्तुदक्षितिसुतानाथस्य दासास्तथा
प्रज्ञाप्राणशरीरतः करणतो भिन्नाः समे प्राणिनः ॥८॥"

(सभी जीव अपने दासोको अभिलषित वस्तु देनेवाले भगवान् श्रीजानकीनाथजीके दास हैं। और बुद्धि प्राण शरीर तथा एकादश इन्द्रियोसे भिन्न हैं।)

आनन्दभाष्यकार श्री ११०८ भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज यति सार्वभौमने भी गीताके आनन्दभाष्यमें कहा है कि—

"यदीश्वर एव जीवस्तर्हि कथं स्वाभिन्नजीवभोगार्थं दुःखात्मकं जगत् सृजति ? जीवेश्वरभेदवादिनामस्माकं मते तु सर्वज्ञ परमकारुणिकः सर्वशक्तिमानपि परमेश्वरो जीवानां प्राक्तनशुभाशुभकर्मानुसारेण देवमनुष्यादिविषमां सृष्टिं तत्संहारञ्च करोतीति नोक्त दोषावसरः ।"

अर्थ—यदि ईश्वर ही जीव है तो अपनेसे अभिन्न जीवोके

भोगके लिये दु.खरूप जगत् क्यो सृजता है? सुखरूप जगत् क्यो नही सृजता है? जीव और ईश्वरको भिन्न माननेवाले हमारे मतमें तो उक्त दोष प्रसग प्राप्त ही नही होता है। क्योकि ईश्वर यद्यपि सर्वज्ञ है परमकृपालु है और सर्वशक्तिमान् है तो भी जीवोके पूर्वजन्मके शुभाशुभ कर्मोंके अनुसारही वह देव मनुष्य इत्यादि विषम सृष्टिको और सहारको करता है।

इसलिये डाकोरके टीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठके सस्थापक श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्यजी महाराज महामुनीन्द्रने बहुत ही अच्छा कहा है कि—निगम (वेद) और आगम (पाचरात्र) कहते है कि सर्व जीव ब्रह्मके दास हैं। यदि जीवही ब्रह्म है तो जीव दुख क्यो भोगता है? यदि जीवही ब्रह्म है तो जीव सुखरूप जगत्की रचना क्यो नही करते हैं? यदि "मुक्त जीव ब्रह्म है" ऐसा कहें तो मुक्त जीव सृष्टि क्यो नही करते? यह ध्यानमे रखनेकी बात है कि मुक्त होने पर भी जीव सृष्टि नही कर सकते हैं। यह बात वेदान्त दर्शनके चतुर्थ अध्यायके "**जगद्व्यापारवर्जं प्रकरणादसन्निहितत्वाच्च** (ब्रह्मसूत्र ४–४–१७) सूत्रमे श्रीसम्प्रदायाचार्य श्रीवेदव्यासजीने कही है।

सुना जाता है कि यह श्रीगगानन्दजी इस प्रकार शास्त्रार्थमें हारकर जगद्गुरु श्रीमङ्गलदासजी महाराज महामुनीन्द्रके शिष्य हो गये थे। श्री वैष्णवधर्म स्वीकार करने पर उनका नाम श्रीगगादासजी हुआ था श्रीगगादासजी प्रतिवर्ष मकर सकान्तिके अवसर पर जमात लेकर गगासागर जाते थे। वहा पर एक मास वास करते थे। सिद्धो और वादियोको

परास्त करके परम उदार वैदिक श्रीवैष्णवधर्मका और परब्रह्म भगवान् श्रीरामजीकी भक्तिका विशाल प्रचार करते थे ।

६७

रामही सब जग सिरजनहार ।

सिरजि जगत्में प्रविशि सुरक्षत अन्त करत संहार ॥
सूक्ष्म अचित्चित् तनु युत कारण, स्थूल कार्य आकार ।
विभु चेतन आधार सकलके स्वयं विगत आधार ॥१॥
प्राकृत गुण बिन दिव्य गुणोदधि निराकार साकार ।
सर्व शक्ति शाली अविकारी सब जग देह-विकार ॥२॥
सर्वाराध्य सर्व फल दाता सब कुछ जाननहार ।
सबके भीतर बाहर व्यापत सब नियमन कर्त्तार ॥३॥
जन्ममरण बिन जन्ममरणकर कर्मनके अनुसार ।
मायापति मायासे बांधत भजे छुडावनहार ॥४॥
पर ब्रह्म करुणाकर राघव पतितन-पावनकार ।
मंगल शरणागतिसे आश्रित दशा सुधारन हार ॥५॥

६८

रामकी स्थिति है पांच प्रकार ।

व्यूह विभव पर अन्तर्यामी औ अर्चा-अवतार ॥
दिव्य धाम पार्षद आसन आयुध भूषण तनु श्याम ।
दिव्य गुणाकर सिय सह सोहत पर ब्रह्म श्रीराम ॥१॥

वासुदेव संकर्षण औ प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध ।
सृष्ट्यादिक हित होत रामही व्यूह रूप तनु शुद्ध ॥२॥
अवतारी श्रीराम भक्त हित लेत विभव अवतार ।
रामकृष्ण मत्स्यादि विभव बहु गिनत न आवत पार ॥३॥
सर्व-सुहृद् सर्वेश्वर सबमें राजत निगम निवेद्य ।
नील जलद सम भक्त हृदयमें लसत भक्ति संवेद्य ॥४॥
करुणासिन्धु राम करुणा करि होत मूर्त्ति अवतार ।
मगल षोडश विधिसे पूजत जात दुखद संसार ॥५॥

६९

वैदिक मत विशिष्टाद्वैत ।

कार्य कारण ब्रह्मका अद्वैत ही नहि द्वैत ॥
सूक्ष्म चित् औ अचित् तनुयुत ब्रह्म कारण पूर्व ।
स्थुल चित् औ अचित् तनु सोइ कार्य नाहिं अपूर्व ॥१॥
प्रकृतिगुण बिन दिव्य गुणनिधि ब्रह्म रामहि जान ।
सकल जगत् निमित्त जेहिश्रुति सकल-मूल बखान ॥२॥
दिव्य तनु गुणसे विशिष्टहि ब्रह्ममें श्रुति मान ।
निर्विशेषण ब्रह्ममें नहिं मिलत कोइ प्रमाण ॥३॥
जगत् मकडी-सूत सम सत् ब्रह्म-तनु-परिणाम ।
सूत्र गीता श्रुतिनमें नहिं मृषा जगका नाम ॥४॥
सर्वव्यापक राम आत्मा, देह जीव अनेक ।
राम भिन्नहि जीव, होत न देह देही एक ॥५॥

सर्व फलदानी सियावर सर्व कर्माराध्य ।
भक्ति और प्रपत्तिही से होत जनके साध्य ॥३॥
सर्वस्वामी सर्वकर्त्ता सर्वज्ञाता राम ।
भजे मंगल देत जनको मोक्ष सब सुख धाम ॥७॥

७०

जोई अन्त मति गति सोइ ।
नित्य हो अभ्यास जिसका अन्त तेहि मति होइ ॥
सुनत निरखत अनुभवत है मनुज नित नित जाहि ।
अन्त चिन्तत चिन्तिके तनु तजे पावत ताहि ॥१॥
ब्रह्मज्ञानी जड भरत नित करत मृग-शिशु-नेह ।
मुक्ति-धाम न पाय पाया जन्म ले मृग-देह ॥२॥
कहत मंगल नित्य मंगल-धाम सुमिरहु राम ।
राम चिन्तत तनु तजे पर मिलति मुक्ति ललाम ॥३॥

७१

खबरदार हो रामसे कुछ न लेना ।
खबरदार हो रो उलहना न देना ॥
लगाये हैं दुनियामें मायाने फन्दे ।
खबरदार हो मन तुम्हारा फंसेना ॥१॥
छिपी है लगा करके किस्मत भी घातें ।
खबरदार हो धैर्य धन ले भगेना ॥२॥

समय भी विषय-वृन्द ले घूमता है ।
खबरदार हो इन्द्रियोंको ठगेना ॥३॥
मदन है चढा पुष्प बाणोंको वैठा ।
खबरदार हो काम वृत्ति जगेना ॥४॥
मरो पर रटो नाम मंगल न छोडो ।
खबरदार हो राम जबतक हसैना ॥५॥

७२

सब वन्धु और बहनो श्रीराम राम कहना ।
यह भव्य जीवगणका अनमोल सुखद गहना ॥
दुनियामें जन्म लेकर जो राम ना रटोगे ।
तो अन्त दिन पडेगा रोना औ शोक करना ॥१॥
हैं काम क्रोध लालच माया नगर लुटेरे ।
लूटैं करम कमाई अति सावधान रहना ॥२॥
शीतादि द्वन्द्वगणकी आंधीमें उड न जाना ।
वचना न विषय वारिधि लहरी प्रवाह बहना ॥३॥
तोडो न कभी हिम्मत छोडो न राम रटना ।
मंगल सदैव मंगलकर रामशरण गहना ॥४॥

७३

भजैं जो रामको मिलता उन्ही को जन्मका फल है ।
हृदय जिनका दया सागर सियावर रामका थल है ॥

पियासे पै पपीहा सम न हो सन्तोष औरोंसे ।
जिन्होंके नैन मीनोंको सियावर-रूप ही जल है ॥१॥

विषय गणकी कथा सुनकर हृदयसे जो भडकते हैं ।
मधुर राघव कथा सुनकर जिन्हें पडता महाकल है ॥२॥

जिन्होंके रामही गति हैं जिन्हें श्री रामसे रति है ।
कहैं मंगल सदा जिनके प्रभू श्री रामका बल है ॥३॥

७४

अपने भजनेके लिये जन्म दिया है प्रभुने ।
अपने चिन्तनके लिये चित्त दिया हैं प्रभुने॥

पाप फल दुःख तथा पुण्यका फल सुख देखो।
अपने दर्शन के लिये आंख दिया है प्रभुने ॥१॥

सुनो दीनोंकी पुकारें तथा शिक्षाके वचन ।
अपने सुननेके लिये कान दिया है प्रभुने ॥२॥

मीठा औ सत्य कहो कोइकी निन्दा न करो।
अपने गानेके लिये जीभ दिया है प्रभुने ॥३॥

करो ऊपकार ही सबका कभी हिंसा न करो ।
अपने अर्चनके लिये हाथ दिया है प्रभुने ॥४॥

जन्म बहु वार दिया तुम नहीं चेते मंगल ।
चेतो इस बार दया करके दिया हैं प्रभुने ॥५॥

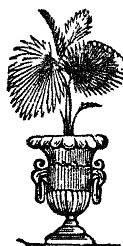
७५

ऐसा होयगा कब भाग।

नित्य सोऊं राम सुमिरत उठुं सुमिरत जाग॥
अन्य चर्चा छोडि होउं राम चर्चा लीन।
रूप जलनिधि रामहित अकुलांय नैनामीन॥१॥
धरै जड चेतनकरनि शिर राम पदकी धूरि।
पतित पावन राम कीर्त्तन करै रसना भूरि॥२॥
नित्य सन्तन संग बैठूं त्यागि दुर्जन-संग।
रंगूं रघुवर-रंगमें मैं छोडि माया-रंग॥३॥
कर करै कैंकर्य औ चित नित्य चिन्तै राम।
मिलै अस संयोग तो मंगल मिलै विश्राम॥४॥

इति सप्तम तरङ्ग।

इति श्रीमङ्गलशिक्षाम्बुधिः।



श्री सीतारामाभ्यां नम ।

श्री वायुनन्दनाय नम



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।
जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।
डाकोरके महागुजरात श्रीरामानन्दमहापीठनामक श्रीमंगलमहापी-
ठाधीश श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीभरतदासजी महामुनीन्द्र विरचित

शिक्षामणिमाला

पाय जासु पद पद्म मधु सन्त सुमधुकर वृन्द ।
तजत मुक्ति मकरन्द सो वन्दौ रघुकुल चन्द ॥१॥

दोष रहित सद्गुण जलधि श्रीमिथिलेश कुमारि ।
वन्दौं जेहि हिय दीनहित छलकत करुणा वारि ॥२॥

रामानन्दाचार्य वर भाष्यकार यतिराज ।
वन्दौं तिनके चरणयुग भव पाथोधि जहाज ॥३॥

प्रणमौं टीलाचार्य वर देशिकपति व्रतिराज ।
अरु वन्दौं गुरुदेव निज मंगलार्य मुनिराज ॥४॥

राम अनादि सुआदि विच यतिपति रामानन्द ।
निजगुरु तक गुरु माल निज प्रणमौं नित सानन्द ॥५॥
वन्दौं सन्त समानदृग् सिय रघुवरके दास ।
जगत्-वन्द्य जिन दृढ करी जगत्-वन्द्य-पद्-आस ॥६॥
वन्दि सन्त पद जलजरज भवजलनिधि वरसेतु ।
शिक्षामणिमाला रचत भरतदास सुख-हेतु ॥७॥

भ्रमत भ्रमत संसार महं जीव दुखी अति होत ।
तब कृपालु रघुनाथकी बहत कृपाका सोत ॥८॥
राम कृपाके होत ही होत मोक्ष-पथ-प्रेम ।
तब श्रीगुरु पद शरण हित धावत तजि सब नेम ॥९॥
कृपासिन्धु रघुनाथकी कृपा सुकृति भव-सेतु ।
सन्त-सग अनुकूलता गुरु शरणागति हेतु ॥१०॥

सिय सियवरकी भक्ति ही मार्ग मुक्तिके हेत ।
भक्ति-प्राप्ति हित गुरुचरण गहहु भव्य करि हेत ॥११॥
श्रीगुरुवरकी कृपा बिन रघुवर कृपापयोधि ।
पाय न पुनि पुनि बूडते प्राणि भवपाथोधि ॥१२॥
पुरुषकार गुरुदेवसे जन लखि हर्षत राम ।
निरखि स्वजनको स्वजनसे सब हर्षत सब ठाम ॥१३॥
संस्कार पञ्चार्थमति गुरुसे लहि अभिराम ।
सत्य कहहु हिंसा तजहु भजहु राम निष्काम ॥१४॥

आश्रय रघुवर-भक्तके रघुवर मोद पयोद ।
सुधा सरहु चातक निरखि तजत न स्वाति-पयोद ॥१५॥

दुख भोगत पर भक्त गण तजत न रघुवर पांय ।
त्यागति जिमि शिशुमातु तऊ लघुशिशु पद लपटांय ॥१६॥

करुणा कोमल चित्त अरु मधुर सुधा सम बानि ।
धर्म कल्पतरु साधु जन कृति नहिं जाय बखानि ॥१७॥

उपल सदृश निर्दय हृदय कठिन कुलिश सम बात ।
पाप विलासी खलन में सब दुर्गुन विलसात ॥१८॥

धर्म हीन जेहि पुरुषके निशिदिन खाली जात ।
श्वास लेत सो भाथि सम जियत न जियत गनात ॥१९॥

रामानन्दाचार्य मत तथा धर्म उत्कृष्ट ।
ग्रहणयोग्य कल्याणप्रद युक्तियुक्त श्रुति-इष्ट ॥२०॥

रामजयन्ती आदि अरु एकादशि प्रतिमास ।
व्रतकर्त्ता जन कहँ कबहुं होत न यमगण-त्रास ॥२१॥

प्राण प्रिया हर व्याध कहं अर्पे प्राण कपोत ।
अपराधिहु जनहित बहत सन्त-दयाका सोत ॥२२॥

सकल दक्षिणा सहित हों सकल यज्ञ इक ओर ।
भीतप्राणके त्राणसे तऊ पुण्य अति थोर ॥२३॥

लहत दयालु दयालु श्रीराम-दया भव-पोत ।
दयाहीन दशकण्ठ-वध बन्धु लंकपति होत ॥२४॥

राम ! वास मम देहु क्षिति स्वर्ग नरक थल कोइ ।
शरद्–जलज–लाजक सतत तव पद–चिन्तन होइ ॥२५॥

भक्त लखत निज भाग्य वश होत सदा सुख दुःख ।
प्रिय पाये कुछ हर्ष नहिं अप्रिय मिले न दुःख ॥२६॥

वृथा चित्त तनु कुटुमकी चिन्ता करत अपार ।
विश्वनाथ रघुनाथ ही सब जग पोषनहार ॥२७॥

अगम अगाध भवाब्धि तऊ चिन्ता चित क्यों होत ।
दीनबन्धु गुरुदेव जब दीन रामपद पोत ॥२८॥

भगवत्–जन रोगादि वश सुमिरत नहिं भगवान् ।
भक्तहिं प्रभु सुमिरत तऊ देत परमपद दान ॥२९॥

कर्म ज्ञान अरु भक्ति बिन नाहिं मुक्तिकी आस ।
अशरणके सियवर शरण राखहु दृढ विश्वास ॥३०॥

साधन बिन जन हेत हरि–लीला बिन मर्याद ।
रघुवर नरहरि रूप धरि राखे जन प्रहलाद ॥३१॥

बन्धु विभीषण शत्रुके सब प्रकारसे दीन ।
लंकापति रघुनाथ हनि तिनहिं लंकपति कीन ॥३२॥

लौकिक वैदिक सकल विध सकल फलन–रति त्यागि ।
राम–दास्य अनुरागि चित बनहु राम–अनुरागि ॥३३॥

सकल सुलभ द्वय चिन्तमन भवजलनिधिका सेत ।
दीन साधनाहीन लखि रघुवर पर पद देत ॥३४॥

जेहिकी मायासे नचत जगत् यथा यन्त्रस्थ ।
सो माया-पति राम विभु सकल लोक हृदयस्थ ॥३५॥

अनल अनिल दाहत बहत जेहि भय मृत्युहु धाव ।
निशिकर दिनकर भ्रमत तेहि रामहि भजहु सभाव ॥३६॥

सर्व-नियामक राम हैं राम-नियामक भक्त ।
राम राम-जनके बनहु परवश औ अनुरक्त ॥३७॥

सन्त-चरण-रज शिर धरे तन मन धन हों शुद्ध ।
हटति अविद्या यवनिका आत्मा हो प्रतिबुद्ध ॥३८॥

रामकृपासे मिलत जग सुख-आकर सत्संग ।
सन्तसंगसे मुक्तिप्रद रघुवर-कथा-प्रसंग ॥३९॥

सन्तकृपा निरखनि निमिष देहु कृपा करि राम ।
चारत जे तव भक्ति पर दुर्लभ मुक्ति ललाम ॥४०॥

प्राकृत देह विभिन्न अणु अप्राकृत हैं जीव ।
जीव शेष शुभ शेषि विभु रघुपति करुणासींव ॥४१॥

आत्मरूप जो लखत यह देह अनात्मस्वरूप ।
जानहु सो मतिमन्द जन अज्ञानिनका भूप ॥४२॥

ज्ञानी ज्ञानस्वरूप है जीव नित्य सुखरूप ।
भोग्य शेष भगवान्का नहिं हरि अरु तनुरूप ॥४३॥

मोर भवन इमि कहत जिमि गृहस्वामी गृहभिन्न ।
जीव, प्राण देहादिसे, मोर कहत तिमि भिन्न ॥४४॥

एक जीव सब कालमें नश्वर देह अनेक ।
ज्ञानवान् यहिसे कहत देही देह न एक ॥४५॥

करत लोक व्यवहारहू रहै लोकसे भिन्न ।
जिमि गभीर जलबीच बसि रहत जलज जलभिन्न ॥४६॥

प्राप्य प्राणिके राम तिमि प्राप्ति-उपायहु राम ।
राम बिना न उपाय कोउ योग याग धन धाम ॥४७॥

याग दान तप आदि सब करतहु भक्त अमान ।
रामहि सब कुछ करत हैं 'मैं न करत' इमि मान ॥४८॥

फल विरहित सियराम हित लौकिक वैदिक कर्म ।
करत न लागत पाप कुछ यह शास्त्रनका मर्म ॥४९॥

अधम पाप-भाजन बडा पडा भवार्णव नाथ ।
स्वीकारहु गति हीन मोहिं अगतिन-गति रघुनाथ ॥५०॥

त्याज्य पापगण त्यागि कर हृदय सरोज ललाम ।
अन्तर्यामी बसन हित राम लोक अभिराम ॥५१॥

बसत भावयुत हृदय में रघुवर अमित प्रभाव ।
प्रभुहिं कुकृत्य कुवासना निर्दय हृदय न भाव ॥५२॥

बसहिं न कलुषित मन भवन त्रिभुवन-पति रघुनाथ ।
रति न करत पंकिल सरसि हंस सलिल खगनाथ ॥५३॥

मृत सो जेहि हिय राम नहिं अमृत सो जेहि हिय राम ।
अर्पत सब कुछ रामको अर्पत सब कुछ राम ॥५४॥

निज भवनहि शोधत सदा रघुपति भवनहु शोध ।
तनुके तनु सित पद्ममें बसत राम कर बोध ॥५५॥

द्वेष रहित ह्वै त्याग नित विविध विबुध गण–राग ।
गुरुवर पद रज पागि चित कर रघुवर अनुराग ॥५६॥

अल्प सुखादिक हेत ही वृथा अन्य सुर हेत ।
रुचिर भुक्ति मुक्तिहु जनहिं सिय सियनाथहि देत ॥५७॥

भौतिक नरतनु करत है तनुमें तनुभृत् भ्रान्ति ।
अहभाव ममभाव औ विषय हेत नित क्रान्ति ॥५८॥

तनुनाता तोरन करहु विषय वासना दूरि ।
तेह हित गुरु पद पद्मकी धूरि सजीवनमूरि ॥५९॥

करहु कृपा रघुनाथ अब हम कृपाल तव भोग्य ।
विषय–दास तव दास्य तजि सब विधि हीन अयोग्य ॥६०॥

अन्यहिं तजि रघुवर भजत जो अनन्य सह प्रेम ।
सीतापति तेहि भक्त के बहत योग औ क्षेम ॥६१॥

जगजननी श्रीजानकी जनक जानकीनाथ ।
व्यापक जननी जनकसे सबजग व्याप्त सनाथ ॥६२॥

जगदात्मा श्रीराम हैं सब जग राम–शरीर ।
दया–पात्र सब जीव हैं दया–सिन्धु रघुवीर ॥६३॥

रामचरणकी शरण गहि तरे गुहादिक हीन ।
तो तरिहहिं क्यों नाहिं सियराम प्रपन्न कुलीन ॥६४॥

सिय सियनायक भक्त निज रक्षत पूत अपूत ।
पालत जननी जनक निज यथा सुपूत कुपूत ॥६५॥

सन्त-धर्म-रक्षण तथा सन्त-रिपुन-क्षय हेतु ।
अवतारी अवतरत जग युग युग रघुकुल केतु ॥६६॥

राम-शेषता निज लखहु सुमिरहु शेषी राम ।
बन्धु वाम धन धाम कुछ अन्त न आवत काम ॥६७॥

अन्तः प्राण न प्राण सुठि प्राण हमारे राम ।
चिन्तत सन्तत सन्त इमि संसृति-हर श्रीराम ॥६८॥

तनु तन्वी सुख तनय असु वसु वसुधा पद मान ।
चहत न हरि-शेषत्व बिन रघुवर भक्त सुजान ॥६९॥

सन्तत इच्छत सन्त निज शीस हृदय भुज दण्ड ।
सियारामकी शेषता बिना होयं शत खण्ड ॥७०॥

जीवनका कर्त्तव्य इक जीवन-फल सुख-धाम ।
सेवै सन्तत सन्तसंग सन्त-प्राण सियराम ॥७१॥

सुखाराध्य सुखरूप औ सुखदाता सुगभीर ।
जल दल फल फूलनहुसे रीझत सिय रघुवीर ॥७२॥

सेवत सीतारामके सेवित हों सुर सर्व ।
सींचत मूलहिं सिंचत जिमि सब दल शाखा पर्व ॥७३॥

संसृति चक्र विराम नहिं सेवत श्री सियराम ।
जन्म जन्म सेवत फिरत अधम अधम जन धाम ॥७४॥

स्वजन भक्ति युत भक्तिसे रीझत दशरथलाल।
यथा खेलावत लाल निज नृपति समर्पत लाल ॥७५॥

जगमें जन-अनुरक्ति बिन बाढति स्वामि-विरक्ति।
स्वजन-भक्तिसे रहित तिमि रुचति न रामहिं भक्ति ॥७६॥

राम रामजन दास्यसे वैष्णव जन कृतकृत्य।
तेहि साधे बिन साधुका सधत न साधु स्वकृत्य ॥७७॥

जगमोहन सियरामके जगमोहन प्रिय बोल।
जगमोहन मुसकानि पै वारित सब जग मोल ॥७८॥

अनुमिति औ प्रत्यक्ष के अ-िपय श्रुतिमत राम।
विषय विषहिं तजि विषय सो करहु सुइन्द्रिय ग्राम ॥७९॥

सुकर सुकर अर्चन करहु सिय सियवरको वीर।
लखन राम सिय लखन युत धावहु मम पद धीर ॥८०॥

जीभ रटहु सिय राम नित चित चिन्तहु सियराम।
श्रवण सुनहु सियराम यश नयन लखहु सियराम ॥८१॥

सियाराम नैवेद्य-रस मम प्रिय रसना चाखु।
पर निन्दा कटु तजि मधुर सियाराम नित भाखु ॥८२॥

इतर गन्ध तजि नासिका हरि पद तुलसी सूंघ।
सियसियवरपद नमन कर मम भल भाल न ऊंघ ॥८३॥

चेति मुक्ति हित यत्न कर चित्त फंसा भवकीच।
कब तक भोगैगा व्यथा जन्मि जन्मि जग बीच ॥८४॥

रामारामहि तजत तोहिं सीताराम छुडाय ।
सीतारामहि भजहु नित रामाराम विहाय ॥८५॥

जासु नाम अघअद्रिपवि भवभेषज पदनीर ।
चरणधूरि चेतनकरनि सेवहु सो रघुवीर ॥८६॥

सिय सियवर सेवा बिना कटै न भवका बन्ध ।
महाविघ्न तेहिमें गुनहु फलयुत कृति सम्बन्ध ॥८७॥

रामकृपा लहु ताहिसे मिटत पुण्य औ पाप ।
पुण्य पापके मिटे बिन मिटैं न तीनहु ताप ॥८८॥

वैष्णव जन गुरुकृपासे ठाटे वैष्णव-ठाट ।
सर्वेश्वर रघुवर भजत लखत कालकी बाट ॥८९॥

काम्य कर्म तजि भजहु मन सिय सियवरहिं सप्रेम ।
नैमित्तिक औ नित्यका करहु नित्य प्रति नेम ॥९०॥

त्यागि सकल विध कर्मफल भजहु सकलपति राम ।
रामकृपाही से मिलत मोक्ष सकल सुख धाम ॥९१॥

सकल धर्म तजि जो लहत वैष्णव रटि सियराम ।
सकल धर्म आचरेहु जन सो न लहैं पर-धाम ॥९२॥

राम राम-जन प्रीतिसे सेवत भक्त अमान ।
शीत उष्ण सुख दुःखको लेखत सदा समान ॥९३॥

सुनत करत निन्दा बनत बहिरे रसनाहीन ।
पर दोषनके लखनमें सज्जन नयनविहीन ॥९४॥

सुख दुख मानामानमें निरखन निजहि समान।
सो अतिप्रिय सियनाथको योगी परम सुजान ॥९५॥

ग्रीवा तुलसी तिलक तनु भुजन चापशर छाप।
तारक वैष्णव नामसे वैष्णव जन निष्पाप ॥९६॥

पक्षी फरि भाथा मुकुट बाणासन अभिराम।
पूजहु दिव्य पवर्ग युत अपवर्गप्रद राम ॥९७॥

पक्षी=पक्षवाला बाण। फरि=ढाल। भाथा=तरकस

कृपा हेत तू सेव नित कृपायतन हरि-मूर्ति।
जन्मि जीव जिमि होय तव जन्म हेतुकी पूर्ति ॥९८॥

जीव कठिन दुर्दैव वश फंसे भवार्णव आय।
अर्चातनु सियरामकी केवल दया उपाय ॥९९॥

अन्तर्यामी व्यूह पर विभव न सहज दिखायँ।
अर्चा कायामें सुलभ रघुपति कृपानिकाय ॥१००॥

दानपत्रमें नृपतिके अंकित द्रव्य समाय।
तथा मूर्त्तिमें मन्त्रसे राजत सियरघुराय ॥१०१॥

कंकर कंचन दुःख सुख तथा मान अपमान।
सन्त आत्माराम नित जानत एक समान ॥१०२॥

ना काहूसे प्रीति अति ना काहूसे द्वेष।
निरखत निन्दा स्तुति सदृश धरे सन्त शुभ भेष ॥१०३॥

सहकारी सब सबलके दुर्बलके नहि कोय।
अनल प्रदीपक अनिल ही दीपक नाशक होय ॥१०४॥

धन अर्जत बहु दुःख पुनि अर्जित रक्षत दुःख ।
विनसे खर्चे दुःख अति धनसे दुःखहि दुःख ॥१०५॥

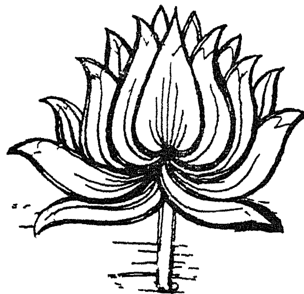
बन्धु सखा जननी जनक वसुधा विद्या वित्त ।
सिय सियनाथहि को गुनत वैष्णव जन दृढ चित्त ॥१०६॥

धन विद्या जननी जनक जिनके सब रघुनाथ ।
तिनके मन मन्दिर बसैं सर्वेश्वर सियनाथ ॥१०७॥

मतवारन मतवारि मति तजि संशय भव-हेतु ।
सियसियनायक शरण गहु भववारिधि वर सेतु ॥१०८॥

सोरठा

सुनि गुनि सन्तविचार भरतदास वैष्णवन हित ।
निगमागमगणसार शिक्षामणिमाला रची ॥



श्री सीतारामाभ्यां नम ।

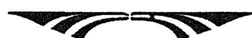
आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।

श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति

श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्यजी महामुनीन्द्र विरचित

रहस्यार्थचन्द्रिका



यदीयप्रतापादहिल्याशिलात्वं
परित्यज्य लेभे वपुर्मानवं स्वम् ।
सदा जानकीकान्त—सत्कान्तकान्ता-
ङ्घ्रिपद्मद्वयं तत् सुभक्त्या भजामः ॥१॥

जिनके प्रतापसे गौतम ऋषिकी धर्मपत्नी अहिल्याने शिलाभावका परित्याग कर अपने मनुष्य शरीर को प्राप्त किया, उन श्रीजानकीनाथजी के अति सुन्दरसे सुन्दर चरणकमल युगलको हम सदा सुन्दर भक्ति से भजते हैं ॥१॥

प्रभुं भाष्यकारं सुशीलाकुमारं
वशीन्द्रं द्विजेन्द्रं हि रामावतारम् ।
अजत्वेऽपि हर्तुं भुवो भूरिभारं
प्रयागेऽवतीर्णं यतीन्द्रं नमामः ॥२॥

इन्द्रियजित् पुरुषोमे श्रेष्ठ द्विजेन्द्र साक्षात् श्रीरामावतार, अजन्मा होने पर भी भूमिके भारका हरण करने के लिये प्रयागराज मे अवतीर्ण आनन्दभाष्यकार प्रभु श्रीसुशीलानन्दन भगवान् श्री रामानन्दाचार्यजी यतीन्द्रको हम नमस्कार करते हैं ॥२॥

सदानन्दभाष्यस्य टीका सुरम्या
सुकल्पद्रुमाख्या कृता येन तं वै ।
सुशीलेन्दिरानन्दनं सर्ववन्द्यं
व्रतीन्द्रञ्च टीलार्यदेवं स्मरामः ॥३॥

उत्तम आनन्दभाष्यकी सुरद्रुमनामक सुरम्य टीका जिन्होने बनाई है उन सर्ववन्दनीय परम सुशील श्रीइन्दिरादेवीके पुत्र जगद्गुरु श्रीटीलाचार्य व्रतीन्द्रको हम स्मरण करते है ॥३॥

दयालोर्गुरोः पादपद्मञ्च नत्वा
परब्रह्मरामस्य पादे रतानाम् ।
जनानां रहस्यार्थबोधाय सम्यग्-
रहस्यार्थसच्चन्द्रिकां संविदध्मः ॥४॥

परमदयालु, श्रीगुरुदेव (श्रीटीलाद्वारपीठाचार्य जगद्गुरु श्रीसहजरामदेवाचार्य) के चरणकमलो को नमस्कार करके परब्रह्म भगवान् श्रीरामजीके चरणोमें निरत महानुभावोको अच्छी प्रकार रहस्यार्थों का ज्ञान होने के लिये हम रहस्यार्थचन्द्रिकाको बनाते हैं ॥४॥

अनन्यैः फलासक्तिशून्यैरुपास्यः
कुजानाथशेषैर्जनै रामचन्द्रः ।

यथा चातकैरम्बुदोऽनन्यभावैः
प्रपन्नत्वमित्थ सदा भावनीयम् ॥५॥

जैसे चातको (पपीहों) से अनन्य भावों द्वारा मेघ उपासित होता है, उसी प्रकार श्रीजानकीनाथजीके शेषभाव (दास्यभाव) को प्राप्त हुए अनन्य फलासक्ति रहित महानुभावो द्वारा भगवान् श्रीरामचन्द्रजी उपासना करने लायक हैं। भावुक पुरुषोंको इसप्रकारसे सदा प्रपन्नत्व नामक रहस्यकी भावना करनी चाहिये ॥५॥

विधेया न हिंसा तृणस्यापि यस्माद्
दयाऽपि प्रपत्तिः पदार्थो न चान्यः।
कुजानाथपादानुरक्तैः सदैवं
प्रपत्तेः शुभा निष्ठता चिन्तनीया ॥६॥

तृण की (घास की) भी हिंसा न करनी चाहिये। क्योंकि दया भी प्रपत्ति (शरणागति) ही है। अन्य पदार्थ नही हैं। भगवान् श्री जानकीनाथजीके चरणकमलानुरागी वैष्णवोको इसप्रकारसे सदा कल्याणकारी प्रपत्तिनिष्ठता नामक रहस्यका चिन्तन करना चाहिये ॥६॥

'कथं देहयात्रा' 'कथश्चात्मयात्रा'
न चेदं विभाव्यं शुभै रामभक्तैः।
प्रभुर्जानकीशः सुनिर्वाहकर्त्ता
जनैर्निर्भरत्वं सुबोध्यं सदैवम् ॥७॥

ब्रह्मलोकपर्यन्तके सुखो के लिये प्रयत्न करनेको देहयात्रा कहते हैं। तथा भगवत्प्राप्तिको आत्मयात्रा कहते है। 'देहयात्रा कैसे होगी ?' और 'आत्मयात्रा कैसे होगी' सुन्दर श्री रामभक्तो को इसप्रकारकी चिन्ता न करनी चाहिये। क्योकि भगवान् श्रीजानकी-नाथजी अच्छी प्रकार से निर्वाह करने वाले हैं। अर्थात् भगवान् श्री रामजी ही देहयात्रा और आत्मयात्रा के निर्वाह करनेवाले है। भगवद्भक्तोको सदा इसप्रकारसे निर्भरत्व रहस्य जानना चाहिये ॥७॥

न मे कर्मशक्तिर्न मे ज्ञानभक्ती
ऋते रामपादाम्बुजान्नैव मुक्तिः।
प्रभोर्जानकीनाथभक्तैर्निरीहै-
र्विचिन्त्या सदा हीनता साधनानाम् ॥८॥

मेरे कर्म शक्ति नही है, मेरे ज्ञान और भक्तिरूप साधन भी नही है, और भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोके बिना मुक्ति नही होती है। नि.स्पृह भक्तोको इसप्रकारसे सदा साधनहीनता नामक रहस्यका चिन्तन करना चाहिये। साधन हीनताको उपायशून्यता भी कहते हैं। कर्म ज्ञान और भक्तिसे सम्पन्न होते हुए भी अपनेको उपायशून्यरूपसे चिन्तन इस लिये करना चाहिये कि कर्म ज्ञान और भक्ति आदि साधन शरणागतिके समान शीघ्र भगवत्प्राप्ति नही करा सकते है। इसलिये इन तीनो साधनोसे सम्पन्न पुरुष भी साधनहीन के समान है ॥८॥

अहं विश्वविश्वैककर्त्तुः परेश-
प्रभोर्जानकीस्वामिनो वश्यतावान् ।
तथा वैष्णवानाञ्च वश्यः सदैवं
प्रपन्नैः पराधीनता बोधनीया ॥९॥

मै सम्पूर्ण विश्वके अद्वितीय रचयिता परात्पर ब्रह्म प्रभु श्रीजानकीनाथजीके पराधीन हूं । तथैव वैष्णवो अर्थात् भगवदीयोके भी पराधीन हू । भगवान्‌के शरणागतोको इसप्रकार सदा अपनी पराधीनता भी जानना चाहिये ॥९॥

अहं देहभिन्नः सुखज्ञानरूपः
प्रभो रामचन्द्रस्य भोग्यश्च शेषः ।
प्रपन्नैर्जनैरित्थमेव स्वकीया
सदाऽप्राकृताऽऽकारता वेदनीया ॥१०॥

मै देहसे भिन्न हूँ, मै सुखस्वरूप और ज्ञान स्वरूप हूँ, तथा भगवान् श्रीरामचन्द्रजी का भोग्य और शेष हूँ । भगवत्प्रपन्नों (श्रीरामशरणागतो)को इसी प्रकारसे सदा अपनी अप्राकृताकारता अर्थात् अप्राकृतत्व नामक रहस्यको जानना चाहिये ॥१०॥

उपेयश्च मे रामचन्द्रः परेशो
विना रामचन्द्रादुपायोऽपि नान्यः ।
सुगम्भीरनीराब्जवत् संसृतिस्थैः
सदैकान्तिकत्वं जनैश्चिन्तनीयम् ॥११॥

मेरे प्राप्य (उपेय) परेश भगवान् श्रीरामचन्द्रजी हैं। श्रीरामजी से अन्य उपाय भी नही है। अर्थात् भगवान् श्रीरामजी ही उपाय (प्रापक) भी हैं। जैसे सुगम्भीर जलके बीचमें कमल जलस्पर्शशून्य होकर रहता है उसी प्रकार ससारावस्थाको प्राप्त होने पर भी ससारमें निर्लेपरूपसे रहनेवाले श्रीरामभक्तोंको इस प्रकारसे सदैव एकान्तिकत्व नामक रहस्यका चिंतन करना चाहिये ॥११॥

मदीये हृदब्जे शुचौ पापशून्ये
सदा राजते देवदेवेश रामः।
धरानन्दिनीनाथपादाब्जनिष्ठै
र्जनैर्नित्यरामित्वमित्थं विचिन्त्यम् ॥१२॥

पापशून्य अतएव पवित्र मेरे हृदयकमलमे देवदेवेश भगवान् श्रीरामजी सदा विराजते हैं। भगवान् श्रीभूमिजानाथ के पादपद्ममें निष्ठा रखनेवाले भगवद्भक्तो को इस प्रकारसे नित्यरामित्व नामक रहस्यका चिन्तन करना चाहिये ॥१२॥

विना द्वेषमन्यं परित्यज्य देवं
गुरुं संसृतेर्भीतितः सम्प्रपद्य।
सुयाच्या कृपा राघवाच्छश्वदित्थं
परैकान्तिकत्वं जनैर्भावनीयम् ॥१३॥

अन्य देवोका द्वेषरहित त्याग कर तथा जन्ममरणरूप ससृतिके डरसे श्रीगुरुदेवकी शरणमे जाकर श्रीरघुनाथजीसे कृपाकी याचना

करनी चाहिये। भगवद्भक्तोंको सदैव इस प्रकारसे परमैकान्तिकत्व नामकरहस्यकी भावना करनी चाहिये ॥१३॥

सदा दासरक्षासुदक्षश्च रामो
दयालुर्विभुर्विश्वभृद्विश्वदेही ।
जगज्जन्महेतुश्च सञ्चिन्तनीयं
सुसम्बन्धबोधस्वरूपत्वमित्थम् ॥१४॥

भगवान् श्रीरामचन्द्रजी अपने सेवकोकी रक्षामे बडे चतुर हैं, बडे दयालु हैं, सारे ससारके पालन करनेवाले हैं, सम्पूर्ण जगत्के आत्मा हैं और सम्पूर्ण जगत्के हेतु (निमित्त और उपादान करण) हैं। सदैव इसप्रकारसे सम्बन्धबोधस्वरूपतानामक रहस्यका चिन्तन करना चाहिये। अर्थात् श्रीरामजी स्वामी हैं और सम्पूर्ण जगत् उनका दास है। श्रीरामजी दयावान है और सारा ससार दयनीय है। श्रीरामजी पोषक अथवा धारण करनेवाले हैं और सम्पूर्ण विश्व पोष्य अथवा धार्य है। श्रीरामजी सर्वके आत्मा है और सम्पूर्ण जगत् उनका शरीर है। भगवान् श्रीरामजी सर्वके उत्पादक अर्थात् पिता हैं और सबही उनसे उत्पन्न हुए है अर्थात् उनके पुत्र है। इस प्रकार सम्बन्धज्ञानके स्वरूपका चिन्तन करना चाहिये ॥१४॥

अशेषं सुखप्राणदेहादिकं सं-
विहायाथ रामस्य शेषत्वमिच्छेत् ।
बहिर्भावतश्चात्मनः संविनाशं
सुबोध्यं जनैः शेषभूतत्वमित्थम् ॥१५॥

सम्पूर्ण सुख प्राण और देहादिकों को छोड कर केवल भगवान् श्रीरामचन्द्रजीकी शेषता (दासता) की ही इच्छा करे। तथैव श्रीरामचन्द्रजीसे पराङ्मुख होने पर अपने स्वरूपका ही विनाश समझे। भगवद्भक्तोको इस प्रकारसे सदैव शेषभूतत्वनामक रहस्य जानना चाहिये ॥१५॥

मया स्वामिनो रामचन्द्रस्य दासे–
न ससेव्यभावान्मनोवाक्यकायैः ।
समाराधनीयाः सरामास्तदीयाः
सदा शेषवृत्तित्वमित्थं विचिन्त्यम् ॥१६॥

स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके मुझ दास द्वारा सेव्यभावसे (इनकी सेवा करना मेरा कर्त्तव्य ही है इस भावना से, अन्य किसी फलकी आकाक्षा से नही) मन वाणी और कर्मसे भगवान् श्रीरामजीके सहित उनके भक्त सम्यक् (अच्छी प्रकारसे) आराधनीय हैं। इसप्रकार शेषवृत्तित्वनामक रहस्यका सदैव चिन्तन करना चाहिये ॥१६॥

सुरूपादिकाल्लौकिकादिन्द्रियार्थात्
सुनेत्रादिकानीन्द्रियाणीह रुध्वा ।
निवेश्यानि रामस्य रूपादिके सा–
धुभिर्नित्यशूरत्वमित्थं सुवेद्यम् ॥१७॥

रूप स्पर्शादि इन्द्रियोके लौकिक विषयोसे नेत्र त्वक् आदि इन्द्रियों को रोक कर भगवान् श्रीरामजीके दिव्य रूपादिको में स्थापित करना

चाहिये। साधु पुरुषोंको इस प्रकारसे नित्यशूरत्वनामक रहस्यको जानना चाहिये ॥१७॥

भवस्यान्वयं रामसेवान्तरायं
परित्यज्य सद्देशिकं सम्प्रपद्य।
प्रतीक्षेत मुक्तिं सदा चारुकृत्यो
मुमुक्षुत्वमित्थं जनैश्चिन्तनीयम् ॥१८॥

भगवान् श्रीरामचन्द्रजीकी परिचर्या (सेवा)में अन्तरायभूत (विघ्नरूप) ससारके सम्बन्धको सर्वथा त्याग कर और सत् आचार्य (गुरु=देशिक) की शरणको ग्रहण कर सदैव पवित्र कर्म करता हुआ मुक्तिकी प्रतीक्षा करे। भक्तोंको इस प्रकारसे सदैव मुमुक्षुत्वनामक रहस्यका चिन्तन करना चाहिये ॥१८॥

सकामं परित्यज्य कर्मात्र लोके
वसेन्नित्यनैमित्तिकादीनि कुर्वन्।
सुबोध्या च मुक्त्यै कुजेशानुकम्पा-
ऽवधेर्गोचरत्वं सदा बोधनीयम् ॥१९॥

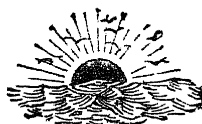
इस लोक में सकाम कर्मको त्याग कर नित्य नैमित्तिक कर्मों को करता हुआ वास करना चाहिये। और भगवान् श्रीरामचन्द्रजीकी अनुकम्पा (कृपा) को ही मुक्तिका मुख्य साधन समझना चाहिये। इसप्रकारसे सदैव अवधिगोचरत्वनामक रहस्यको जानना चाहिये ॥१९॥

भवद्वन्द्ववृन्दे समत्वञ्च यात्वा
प्रभोः शार्ङ्गिणस्तज्जनानां सुसेवा।

सुख और दु ख में सम होकर अपने देह और रूपस्पर्शगन्धादि इन्द्रियोंके विषयों में हेयभाव (त्याज्यभाव) करके भगवान्का भक्त सर्वभावसे भगवान श्रीरामजी में ही सदा रमण करै। अर्थात् भगवान् को ही माता पिता, बन्धु, मित्र और द्रव्य समझे अर्थात् श्रीरामजी को ही सर्वस्व समझे। यहा पर इसप्रकारसे आत्मारामता नामक रहस्यका चिन्तन करना चाहिये ॥२२॥

मङ्गलार्यकृतिः सेयं सद्रहस्यार्थचन्द्रिका।
सल्लोकमङ्गलं कृत्वा भूयाद्रामस्य तुष्टये ॥२३॥

श्री १००८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्यजी महाराज महामुनीन्द्रकी यह रहस्यार्थचन्द्रिकानामकी कृति सज्जन लोगोके मङ्गलको करके भगवान् श्रीरामजीकी प्रीतिकरनेवाली हो ॥२३॥



श्री सीतारामाभ्यां नम ।

आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामान्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।

डाकोरके महागुजरात श्रीरामानन्दमहापीठनामक श्रीमंगलमहापीठाधीश श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीमंगलदासजी महामुनीन्द्र विरचित

वेदान्तचिन्तामणिः

वैष्णवभाष्यकारस्वामिश्री वैष्णवाचार्यप्रणीतभाषानुवादसहित ।

श्रीरामाद्वितताां प्रणम्य हि निजामाचार्यसत्सन्ततिं
पीठाचार्यसुमङ्गलार्यकृतिना रामाय भक्त्याऽर्पितः ।
नानातर्कतमोविमूढमनसां वेदान्तबोधार्थिनां
सद्बोधाय महामहो वितनुतां वेदान्तचिन्तामणिः ॥१॥

श्रीरामजीसे विस्तृत स्वाचार्यपरम्पराको प्रणाम करके पुण्यशाली प्रधानश्रीटीलाद्वारपीठाचार्य जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्यमहामुनीन्द्रके द्वारा भगवान् श्रीरामजीको भक्तिसे अर्पित हुआ यह वेदान्तचिन्तामणि ग्रन्थ विविधतर्कान्धकारसे विमूढचित्तवाले वेदान्ततत्त्वजिज्ञासुओको सद्बोधके लिये महान् प्रकाश दे ॥ १ ॥

शेषस्तनू रघुपतेरणुचेतनोंऽश-
श्चान्यो मतेर्हि करणाद्वपुषोऽप्यसुभ्यः ।
नित्योऽजडः परवशः कृतिभुक्तिशाली
भिन्नोऽसुभृत् प्रतिवपुः सुखबुद्धिरूपः ॥२॥

आचार्यशिरोमणि श्री११०८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्यजीमहाराज महामुनीन्द्र द्वितीय श्लोकमे जीवके स्वरूपका निरूपण करते हैं ।

जीव श्रीरघुनाथजीका शेष (ताम्बूलकुसुमादिवत् सर्वथा उपभोगके लायक) शरीर और अणु चेतन अंश है। बुद्धि इन्द्रिय शरीर और प्राणोंसे भी भिन्न है। नित्य (उत्पत्तिविनाशरहित) अजड (स्वयम्प्रकाश) पराधीन कर्त्ता तथा भोक्ता है। प्रत्येक शरीरमें भिन्न भिन्न है एक नहीं। सुखरूप और ज्ञानस्वरूप है ॥२॥

मुक्ताविमुक्तविधया द्विविधत्वमाप्ता
जीवा मिथो जनकजापतितोऽपि भिन्नाः।
मुक्ता अनन्तभजनाज्जनिमृत्युमुक्ता
बद्धास्त्वनन्तजनिकर्मसुबन्धबद्धाः ॥३॥

मुक्त और अमुक्त (बद्ध) भेदसे जीव दो प्रकारके हैं। सर्व जीव परस्पर भिन्न हैं। अर्थात् प्रत्येक जीव स्वान्यजीवसे भिन्न हैं। तथैव सभी जीव सर्वेश्वर भगवान् श्रीजानकीनाथजीसे भी भिन्न हैं। अर्थात् जीव ही ब्रह्म (ईश्वर) नहीं है। भगवान्‌के भजनसे जन्म और मृत्युसे छूटे हुए जीव मुक्त हैं। अनन्तजन्मोपार्जित्त कर्मरूपी सुदृढ बन्धनसे बधे हुए जीव बद्ध (अमुक्त) हैं ॥३॥

शुद्धाविशुद्धभिदया द्विविधश्च सत्वं
कालो मतिर्गतमतेरचितः प्रभेदाः।
साकेतनित्यपरधामपदाभिधेयं
सत्वं विशुद्धमजडं प्रकृतेर्विभिन्नम् ॥४॥

अब आचार्यपाद अचेतनतत्त्वका वर्णन करते हैं। शुद्धसत्त्व, अशुद्धसत्त्व (मिश्रसत्त्व) काल और बुद्धि (मति=ज्ञान) ये चार अचित

तत्त्वके भेद है । अब शुद्धसत्व (रजोगुण और तमोगुणसे विहीन केवल सत्त्व) का वर्णन करते है । शुद्धसत्व साकेत नित्यधाम तथा परधाम आदि पदोसे कहा जाता है । अर्थात् साकेत नित्यधाम परधाम आदि शुद्धसत्वके ही पर्याय हैं । शुद्धसत्व अजड है और प्रकृतितत्त्व से भिन्न है ॥४॥

नित्याऽकृतिर्गुणवती प्रकृतिः परार्था
तथ्या च मूलमहदादिकभेदभिन्ना ।
भूतादिकव्यवहृतेर्जनको हि कालो
नित्यो विभुर्भुवननाथवपुर्जडश्च ॥ ५ ॥

पाचवें श्लोकके पूर्वार्धद्वारा प्रकृतितत्त्व (माया)का वर्णन किया जाता है । प्रकृति नित्य, कृतिरहित (जड होनेसे कर्तृत्वशून्य) तथा सत्व रजस् और तमस् तीन गुणोवाली है । परार्थ और सत्य है । तथा मूलप्रकृति, महत्तत्त्व, अहकार, श्रोत्र त्वक् चक्षु रसन घ्राण मन वाक् पाणि पाद पायु (गुद) और उपस्थ इत्यादि एकादश इन्द्रिय, आकाश, वायु, तेज, जल और पृथिवी आदि पञ्च महाभूत तथा शब्द स्पर्श रूप रस और गन्ध आदि पञ्च तन्मात्रा आदि चौवीस भेदवाली है । अव पाचवे श्लोकके उत्तरार्धमे कालतत्त्वका वर्णन करते हैं । भूत वर्त्तमान और भविष्यत् इत्यादि व्यवहारोका कारण कालतत्त्व है। काल नित्य (उत्पत्तिविनाशरहित) और विभुपरिमाणवाला (व्यापक) है । और निखिलब्रह्माण्डनायक भगवान् श्रीरामजीका शरीर है ॥ ५ ॥

नित्या तथा सविषया जडताविहीना
विभ्वी मतिर्मददयाप्रभृतिस्वरूपा ।
प्रामाण्यमत्र सुमतं स्वत एव चास्या
याथार्थ्यकं विषयसत्यतया तथा च ॥६॥

अब ज्ञानतत्त्वका (धर्मभूतज्ञान का) वर्णन किया जाता है । मति प्रज्ञा बुद्धि मनीषा धी इत्यादि ज्ञानके पर्याय हैं । ज्ञान नित्य अर्थात् उत्पत्तिविनाशशून्य द्रव्य है । 'मेरा ज्ञान नष्ट हुआ' और 'मेरा ज्ञान उत्पन्न हुआ' इत्यादि व्यवहार तो ज्ञानके सकोच और विकास के कारण होते हैं । तमोविशेषके सन्निधानसे निद्रा और असन्निधान (हटजाने)से जागृति दशा होती है । कोई भी धर्मभूत ज्ञान निर्विषय नही होता है इसलिये सिद्धान्तमें धर्मभूत ज्ञानको सविषय ही माना गया है । ज्ञान अजड (स्वयप्रकाश) पदार्थ है । तथैव ज्ञान विभुपरिमाणवाला पदार्थ है । मद दया राग द्वेष क्षमा तृष्णा श्रद्धा इत्यादि ज्ञानकी ही अवस्था विशेष हैं । विशिष्टाद्वैतसिद्धान्तमें ज्ञानको स्वत प्रमाण वस्तु माना गया है । ज्ञानविषयोंके सत्य होनेके कारणसे सभी ज्ञान यथार्थ माने जाते हैं । विषयव्यवहारके बाधित होनेसे ही ज्ञानमे भ्रमत्व इत्यादि माने जाते हैं ॥६॥

लोकैकहेतुरजडश्चिदचिद्विशिष्टः
श्रेयोगुणैकजलधिर्हतदोषवृन्दः ।
सर्वेश्वरः क्षितिजया सह दिव्यदेहो
ध्येयोऽमृताय सुजनैरिह जानकीशः ॥७॥

आचार्यशिरोमणि श्रीमङ्गलाचार्यजी महाराज महामुनीन्द्र अब ईश्वरतत्वका वर्णन करते हुए कहते है कि सज्जनोको लोकके अद्वितीय हेतु अर्थात् जगत्के अभिन्ननिमित्तोपादानकारण, शरीररूप समस्त चेतनाचेतनो से विशिष्ट अर्थात् सर्वशरीरी, कल्याणगुणोके समुद्र, समस्तदोषरहित, दिव्य (अप्राकृत) देहवाले सर्वेश्वर श्रीजानकीनाथजीका श्रीजानकीजीके सहित ध्यान करना चाहिये ॥७॥

सच्चित्सुखं च सुखिसृष्टिकरं परेशं
व्यूहार्च्यमूर्त्तिविभवप्रभवं च हृत्स्थम् ।
रामं वदान्यविभुसर्वविदं भजध्वं
हालाहलस्य सदृशान् विषयान् विहाय ॥८॥

अचार्यपाद कहते हैं कि–हलाहलके सदृश विषयोको छोडकर सच्चिदानन्दस्वरूप, आनन्दमय, सृष्टिकर्त्ता, परमेश्वर, वासुदेवादि व्यूह, अर्चावतार (भगवन्मूर्त्ति) और विभव अर्थात् मत्स्यादि अवतारोके कारण, हृदयमें रहनेवाले अर्थात् सर्वान्तर्यामी, दाता, विभुस्वरूप और सर्वज्ञ भगवान् श्रीरामजीको भजो अर्थात् सेवन करो ॥८॥

वेदान्तवेद्यकरुणाकरनित्यबन्धोः
सीतापतेः श्रितजनाहितनाशकर्त्तुः ।
भव्यां भवाब्धितरणे तरणिं प्रपत्तिं
भक्तिं विना च मनुजो लभते न मुक्तिम् ॥९॥

वेदान्तवेद्य (वेदान्तसे जाननेयोग्य) करुणाके आकर, नित्यबन्धु स्वाश्रितजनोके अहितका नाशकरनेवाले श्रीसीतानाथजीकी भवसमुद्र

तरनेमे नौकास्वरूप सुन्दर प्रपत्ति (शरणागति) और भक्तिके विना मनुष्य मुक्तिको नही पाता है ॥९॥

धूल्या मुनीन्द्रगृहिणीजडतापहर्त्तु-
र्ब्रह्मेश्वराद्यदितिनन्दनवन्दिताग्रात् ।
भागीरथीप्रभृतितीर्थगणैककन्दा-
न्नान्या गतिः सुखदरामपदारविन्दात् ॥१०॥

धूलिसे मुनीन्द्रपत्नी श्रीअहिल्याजीकी जडताके (शिलापनके) हरण करनेवाले, ब्रह्मा शम्भु इत्यादि देवोसे वन्दित अग्रभागवाले तथा भागीरथी (गङ्गा) इत्यादि तीर्थगणोके कन्दभूत (मूलस्वरूप) सुखप्रद भगवान् श्रीरामजीके चरणारविन्दको छोडकर दूसरी गति नही है। अर्थात् एकमात्र श्रीरामजीके चरणारविन्द ही जीवोके लिये गति (उपाय) है ॥१०॥



श्री हनुमते नमः ।



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नमः ।
जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नमः । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नमः ।
त्रणदेवडी श्रीराममन्दिरके संस्थापक
श्रीमहान्त श्रीरामजीदासजीमहाराज महामण्डलेश्वरविरचित

तत्त्वालोक

वेदान्तचिन्तामणिकी पद्यात्मक टीका

मङ्गलाचरण

नमि के गुरुपंक्तिको गौरवसे करुणाकर रामसियासे चली ।
यह श्रीमन्मङ्गलदास जगद्गुरुसे सियनाथको अर्पी भली ॥
बहु कर्कश तर्क तमोंसे विमूढ वेदान्तमतेच्छुक लोकावली ।
कहँ देइ वेदान्तकी चिन्तामणि महती निज भव्य आलोकावली ॥१॥

जीवतत्त्व

वर शेष शरीर सियावरका अरु चेतन अंश न प्राण न ज्ञाना ।
जडता विन इन्द्रिय देह नहीं करनी करि भोगत भोगहु नाना ॥
प्रति देह में देही विभिन्न सदा रघुनाथ अधीन अणु परिमाना ।
सुख ज्ञान स्वरूप विकारबिना इमि ज्ञानिन जीवस्वरूप बखाना ॥ २ ॥
नहि एक परस्पर भिन्न प्रभु धनुधारी से भिन्न सबै तनुधारी ।
दुई भाँति के जीवन में कछु बद्ध विमुक्त कछु सबलोकविहारी ॥

बहु जन्म के कर्म के बन्ध बँधे मरि जन्मत बद्ध भवाब्धि मझारी।
पुनि मुक्त अनन्त गुणाम्बुधि रामहिं सेइ तरे भवसागर भारी ॥३॥

अचेतनतत्त्व

दुइ सत्व विशुद्ध अशुद्ध तथा मति काल के भेद अचेतन चारी।
शुचि सत्व त्रिपाद विभूति तहां चपला चमकैं न न भाति तमारी॥
विरजा परपार विभाति सदा विरजः वितमः स्वप्रकाश सुखारी।
सियनाथके धामकी वस्तु लखे रसहीन लगैं विधिकी विधि सारी॥४॥

जड सत्य औ नित्य प्रधान परार्थ रजस्तमसत्व गुणत्रय धारत।
पुनि मूल महान् अहंकृति आदिक चौविस भांति के भेद पसारत॥
शुभ भूत भविष्यत् आदिक कारण कालहिं वैदिक वृन्द प्रचारत।
त्रय लोकके नाथ सियावरका तनु जाड्य तथा विभुता नित धारत ॥५॥

विषयी करुणादिकरूप विभु मतिका विलसै स्वप्रकाशपना।
नहिं शास्त्रमें जन्म प्रसिद्ध कहूँ मतिका नहिं सिद्ध विनाशिपना॥
नहिं अन्य से सम्मत है जगमें मतिका स्वत एव प्रमाणपना।
विषयों के सुसत्यपना से कहैं मतिका मतिमान् यथार्थपना ॥६॥

ईश्वरतत्त्व

सबलोक के कारण सर्वपति जडचेतनयुक्त अजाड्य धरे।
सबदोषविरोधि अनन्त महार्णव मङ्गलकारी गुणाम्बुभरे॥
सियनाथ विराजत दिव्यशरीर साकेतमे ब्रह्म परे से परे।
शुचि सज्जन मोक्षको प्राप्त करैं सियसंग सियावर ध्यान धरे ॥७॥

सुखरूप औ सच्चिद्रूप सुखी जगपालन सृष्टि लयादि करैया।
प्रतिमा औ विभव अरु व्युहात्रतारी अचेतन चेतन मध्य बसैया॥
विभु भुक्ति औ मुक्तिके दानी प्रभु सर्वत्र के सर्व पदार्थ जनैया।
विषयों को हलाहलतुल्य तजौ औ भजौ सर्वेश्वर राम रमैया॥८॥

करुणाकर दीन जनों के सुबन्धु सियावर वेद्य है वेदन के।
सुविनाशक हैं सियनाथ सदा स्वपदाश्रित भक्तके विघ्नके॥
तिनकी शुभ भक्ति प्रपत्ति उभय भवसिन्धु परे अति दीननके।
तरनी द्वय तारक साधन छोडि न मुक्ति लहैं गण जीवनके॥९॥

मुनि गौतम नारि जडत्व हरे निज धूलि से अन्य उपाय बिना।
अज ईश सुरेश सुरादिक वन्दित कीर्त्तिलसे अपकीर्त्ति बिना॥
शुचि भागीरथी आदि तीर्थ समूह के कारण दुःखद दोष बिना।
गति और न मोक्ष प्रदायक है सुखदायक रामपदाब्ज बिना॥१०॥

श्रीमहान्त श्रीरामजीदास रचित आलोक।
श्रुतिमत तत्त्व प्रकाश करि हरै लोकका शोक॥



श्री सीतारामाभ्यां नम ।

आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम ।

श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति

श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीसहजरामदेवाचार्यजी महामुनीन्द्र विरचित

श्रीरामोपासनपञ्चकम् ।

(श्री वैष्णवभूषण महन्त पण्डित श्रीपुरुषोत्तमदासजी महाराज

कृतानुवाद सहितम् ।)



मंगलाचरणम् ।

भूतानामादिमध्यान्तभूमिं श्रीभूमिजापतिम् ।
रामानन्दार्यटीलार्यौ वन्देऽन्यान् देशिकानपि ॥

मै (श्री सहजरामदास) भूतमात्रकी आदि मध्य तथा अन्त अवस्थाको प्राप्त हुए अर्थात् नाम और रूपके विभागके अयोग्य चित् (चेतन–जीव) और अचित् (अचेतन) तत्त्वोसे विशिष्ट (युक्त) तथा नाम और रूपके विभागके योग्य चित् और अचित् तत्वोसे विशिष्ट अवस्थाको प्राप्त विशिष्टाद्वैत ब्रह्म श्रीजानकीनाथ भगवान् श्रीरामजी, श्री ११०८ आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीटीलाचार्यजी महाराज तथा अन्य निजाचार्योंका वन्दन करता हूँ ॥

भक्त्या समेत्य रघुनायकमन्दिरादे-
यत् क्षालनाङ्कनसुमार्जनमण्डनादि ।
श्रीशर्ङ्गिणोऽभिगमनाख्यमुपासनं तत्
सम्भाषितं हि निगमागममर्मविज्ञैः ॥

भक्तिसे जाकर श्रीरघुनाथजीके जो मन्दिरादिकोंके धोना चित्रित करना साफ करना तथा सजाना इत्यादि है- उन्हे निगमागमके रहस्य जाननेवालोने श्रीरामजीकी **अभिगमननामक** उपासना कही है ॥१॥

सद्गन्धसार तुलसीकुसुमस्रगम्बु-
स्वादिष्टभोज्यपटभूषणसाधनानाम् ।
सम्पादनं रघुवरस्य विभोरुपादा-
नाख्यं हि मुक्तिसुखदं समुपासनञ्च ॥२॥

उत्तम चन्दन तुलसी फूल माला जल स्वादिष्ट खाद्यपदार्थ तथा वस्त्रभूषण इत्यादि साधनोका सम्पादन (इकट्ठाकरना) ही मुक्तिसुख देनेवाली विभु भगवान् श्रीरामजीकी **उपादाननामक** उपासना है॥२॥

इज्या बुधैरभिहिता जनकात्मजायाः
पत्युः परिच्छदयुतस्य समर्चनं यत् ।
शीघ्रं यतो हृदयसंशयभेदनं वै
नित्यस्तथा भवति संसृतिपाशमोक्षः ॥३॥

छत्र चामरादि सामग्रीयुक्त भगवान् श्रीजानकीनाथजीके षोडश-विधि अर्चनको विद्वानोने **इज्यानामक** उपासना कही है । जिससे

शीघ्रही हृदयके सशयोका नाश होता है, और नित्य (अविनाशी) जन्म मरणरूपी ससार फाससे मोक्ष मिलता है ॥३॥

रामायणश्रुतिगणागमसूत्रगीता—
वेदान्तभाष्यपठनं रघुनन्दनस्य ।
सार्थः षडक्षरसुमन्त्रजप· स्तवश्च
स्वाध्यायनामकमुपासनमत्र बोध्यम् ॥४॥

श्रीमद्रामायण वेद आगम (पाञ्चरात्र) ब्रह्मसूत्र गीता और उपनिषद् अर्थात् प्रस्थानत्रयके आनन्दभाष्योंका पठन अर्थानुन्धानपूर्वक श्रीरामजीके षडक्षर श्रीतारकमन्त्रराजका जप तथा श्रीरामजीके स्तोत्रोका पाठ **स्वाध्यायनामक** उपासना जानना चाहिये ॥४॥

सर्वप्रपञ्चजनकोऽखिललोकनाथो
यः सर्वविच्च निखिलाधिकरूपशाली ।
सीतापतेः शुभगुणाम्बुनिधेर्हि तस्य
ध्यानञ्च पञ्चममुपासनमत्र योगः ॥५॥

जो सर्वजगत्के जनक (कारण) हैं, सर्वलोकोके स्वामी हैं, सर्वज्ञ हैं और सर्वसे अधिक सुन्दररूपवाले है, दिव्यगुणोके सागर उन श्रीसीतापति भगवान् श्रीरामजीका ध्यानही **योगनामक** पाचवी उपासना है ॥५॥

कृतं सहजरामेण रामोपासनपञ्चकम् ।
भूयान्मुक्तिकामानां मुक्तिमार्गप्रबोधकम् ॥

श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीसहजरामदेवाचार्यजी महाराज महामुनीन्द्र विरचित यह **श्रीरामोपासनपञ्चक** मुमुक्षु पुरुषोको मुक्तिमार्ग बतलानेवाला हो ।

श्री सीतारामाभ्या नम ।

आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामान्दाचार्याय नम ।

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।

श्रीरामानन्दमहापीठनामक श्रीटीलाद्वारपीठसंस्थापक

श्री ११०८ जगद्गुरु श्री टीलाचार्यजी व्रतिराज विरचित

प्रबोधकलानिधिः

वैष्णवभाष्यकारस्वामिश्री वैष्णवाचार्यवेदान्ततीर्थप्रणीतभाषानुवादसहित ।



जानकीनायकारब्धां नत्वाऽऽचार्यपरम्पराम् ।
कुर्वे सिद्धान्तबोधाय सत्प्रबोधकलानिधिम् ॥

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्यजी (श्रीसाकेतनिवासाचार्यजी) व्रतिराज (ब्रह्मचारियोके राजा) कहते हैं कि मै श्रीजानकीनायक भगवान् श्री रामजीसे आरब्ध (शुरू) हुई आचार्यपरम्पराको (श्रीरामजी श्री जानकीजी तथा श्रीहनुमान्जी ब्रह्मा, वशिष्ट, पराशर, व्यास शुकदेव, बोधायनवृत्तिकार महर्षि बोधायन (पुरुषोत्तमाचार्य) गङ्गाधराचार्य सदानन्दाचार्य रामेश्वरानन्द द्वारानन्द देवानन्द श्यामानन्द श्रुतानन्द चिदानन्द पूर्णानन्द श्रियानन्द हर्यानन्द राघवानन्द आनन्दभाष्यकार श्री११०८ जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य यतिसार्वभौम अनन्तानन्द तथा पयोहारी श्रीकृष्णदासजी इत्यादि आचार्यों की परम्पराको) नमस्कार करके साम्प्रदायिकसिद्धान्तोके जाननेकेलिये सुन्दर प्रबोधकलानिधिनामक

प्रबन्धको बनाता हू। प्रबोध शब्दका अर्थ है उपदेश (ज्ञान) और कलानिधिका अर्थ है चन्द्रमा। चन्द्रमामें १६ कलाये होती हैं। इस ग्रथमें भी १६ श्लोक हैं। दिनके तापसे सन्तप्त पुरुषोंको चन्द्रमा शान्ति देता है। यह ग्रन्थ भी ससारतापसतप्त पुरुषोंको शान्ति देता है। इसलिये आचार्यपादने इसका नाम "**प्रबोधकलानिधि**" रखा है।

रामो ब्रह्म परात्परं सकलकृद् रामं विना नो गती
रामेणैव विनाश्यते मृतिभयं रामाय नित्यं नमः।
रामादेव च विश्वमेतदुदितं रामस्य वश्यं तथा
रामे तिष्ठति लास्यते च वदत 'त्वं राम सरक्ष नः' ॥१॥

श्रीरामजी परात्पर ब्रह्म हैं और समस्त जगत्के कर्त्ता हैं। श्रीरामजीके विना कोइ गति नही है। मृत्युका भय श्रीरामजीसे नष्ट होता है। नित्य ही श्रीरामजीको नमस्कार है। यह सम्पूर्ण जगत् श्रीरामजीसे ही उत्पन्न हुआ है, श्रीरामजीके ही वशमें है, श्रीरामजीमे स्थित है और श्रीरामजीमें ही लीन होगा। बोलो "हे रामजी हम सबकी रक्षा करो" ॥१॥ आचार्यशिरोमणि श्रीटीलाचार्यजी महाराजने इस श्लोकमें सातो विभक्तियोसे युक्त राम शब्दका प्रयोग किया है ॥१॥

रामं कीर्त्तय कीर्त्तनीयरसने कर्णद्वयाकर्णय
श्रीमद्रामकथां करौ च कुरुतं रामार्चनं मुक्तिदम्।
राम पश्य विलोचनद्वय चिरं चेतः स्मर त्वं सदा
जिघ्र घ्राण च रामपादतुलसी रामं नम त्वं शिरः ॥२॥

हे कीर्त्तनीयरसना तू श्रीरामजीका कीर्त्तन कर। हे दोनो कान तुम श्रीरामजीकी कथाको सुनो। और हे दोनो हाथ तुम मुक्ति

देनेवाली श्रीरामजीकी पूजाको करो। हे दोनो नेत्र तुम श्रीरामजीको बहुत कालतक देखो (दर्शन करो) हे चित्त तू श्रीरामजीका सदा स्मरण कर। हे नासिका तू श्रीरामजीके चरणपर चढी हुई तुलसी को सूघ। और हे शिर तू श्रीरामजीको नमस्कार कर ॥ २ ॥

तत्त्वं नैव परेशदिव्यगुणकाच्छ्रीरामचन्द्रात् परं
मुक्त्यै नास्ति गतिस्तथा रघुपतेर्भक्तेः प्रपत्तेः परा।
निर्दोषश्च मतं परं न हि विशिष्टाद्वैततो वैदिकं
श्रीरामान्न हि कीर्त्तनीयमपरं मुक्तिप्रदं प्राणिनाम् ॥३॥

दिव्यगुणसम्पन्न परमेश्वर भगवान् श्रीरामजीसे पर कोई तत्त्व नही है। अर्थात् भगवान् श्रीरामजी ही परात्पर (सर्वसे पर) तत्त्व हैं। मुक्तिकेलिये भगवान् श्रीरामजीकी भक्ति और शरणागतिसे उत्कृष्ट (श्रेष्ठ) कोई उपाय नही है। विशिष्टाद्वैतसे श्रेष्ठ कोई निर्दोष और वैदिक मत नही है। श्रीरामनामको छोडकर प्राणियो को मुक्ति देनेवाला दूसरा कोई भी शब्द कीर्त्तन करनेलायक नही है। अर्थात् केवल श्रीरामनामके कीर्त्तनसे ही मुक्ति मिलती है ॥३॥

ब्रह्मेन्द्रस्त्रिपुरान्तकश्च दहनो ब्राह्मी गणेशोऽन्तकः
सूर्यो देवचमूपतिश्च वरुणो वाय्वादिदेवास्तथा।
रक्षोयक्षगणोऽथ सिद्धदनुजा नागा दिशां पन्नगा
श्रीमद्रामपदारविन्दविमुखत्राणे समर्था न हि ॥४॥

ब्रह्मा इन्द्र शङ्कर अग्नि ब्राह्मी गणेश यमराज सूर्य कार्त्तिकेय वरुण तथा वायु इत्यादि देव राक्षस यक्षगण सिद्ध दैत्य दिग्गज और सर्व नागगण इत्यादि कोई भी भगवान् श्रीरामजीके चरणकमलसे

विमुख जीवकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं हैं। अर्थात् श्रीरामविमुख की रक्षा कोई भी नही कर सकता है ॥४॥

सद्धर्मः श्रुतिधर्मशास्त्रविहितो ग्राह्यः शुचिर्वैष्णवः
सीताराघवविग्रहौ जनयुतौ पूज्यौ शुभैर्वैष्णवैः।
वेदान्तप्रतिपादितं सुखकरं सद्युक्तिभिर्भूषितं
रामानन्दयतीश्वरस्य रुचिरं मान्यं मतं सन्मतम् ॥५॥

वेदो और धर्मशास्त्रोसे विधान किये गये पवित्र और अच्छे वैष्णवधर्मका ग्रहण करना चाहिये। शुभ वैष्णव महानुभावोको पार्षदसहित भगवान् श्रीसीतारामजीके विग्रह (मूर्त्ति) पूजने चाहिये। वेदान्तसे प्रतिपादित सुखकर सद्युक्तियोंसे विभूषित और सन्तोसे माने हुए आचार्यचक्रचूडामणि श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज यतिराजके सुन्दर मतको मानना चाहिये ॥ ५ ॥

इष्वासेन तथेषुणा रघुपतेर्बाहू वरं चाङ्कितौ
गात्रं द्वादशभूर्ध्वपुण्ड्रलसितं वृन्दा गले शोभिता।
सीतारामपदाब्जदास्यपरकं यस्याभिधेयं तथा
श्रीमत्तारकदीक्षितः स पुरुषः पूज्यः सतां वैष्णवः ॥६॥

जिस पुरुषकी दोनो भुजा श्रीरामजीके धनुष् और बाणसे अच्छीप्रकार अङ्कित हो, जिसका शरीर द्वादश सुन्दर ऊर्ध्वपुण्ड्रो से सुशोभित हो, जिसके गलेमें तुलसी (तुलसीकी कण्ठी अथवा हीरा) शोभायमान हो, जिसका नाम श्रीसीतारामजीके चरणकमलकी दास-तापरक (सीतारामदास, रामदास, जानकीदास इत्यादि) हो और जो पुरुष तारक मन्त्रराज षडक्षर श्रीराममन्त्रसे दीक्षित हो वह पुरुष

वैष्णव है और सज्जनोके द्वारा पूजनीय है । श्रीटीलाचार्यजीने इस श्लोकद्वारा वैष्णवोके पञ्चसस्काररूप लक्षणोको कहा है ॥ ६ ॥

हृद्ये यद्हृदयाम्बुजे हि सदये सीतापती राजते
भूतानां हितचिन्तको गुरुरतो साध्वर्चको धर्मवान् ।
सन्निष्ठो हरिवासरादिनिरतः श्रीरामसङ्कीर्त्तको
रामाराधनतत्परः स पुरुषः पूज्यः सतां वैष्णवः ॥७॥

जिस पुरुषके मनोहर और दयायुक्त हृदयकमलमें भगवान् श्रीसीतानाथजी (श्रीरामजी) विराजते हो । जो प्राणियोंका हितचिन्तक हो । जो श्रीगुरुदेवमे अनुरागवाला हो । जो साधुओका पूजक हो और धर्मवान् हो । जो पुरुष सत्पदवाच्य भगवान् श्रीरामजीमें निष्ठा-वाला हो । अथवा जो सुन्दर निष्ठावाला हो या जो सन्तोमें निष्ठा-वाला हो । जो एकादशी श्रीरामनवमी आदि भगवज्जयन्ती श्रीजान-कीनवमी श्रीहनुमज्जयन्ती तथा श्रीरामनन्दजयन्ती आदि आचार्यज-यन्ती इत्यादि व्रतों और उत्सवोंका करनेवाला हो । जो श्रीरामनाम का सङ्कीर्त्तन करता हो । और जो श्रीरामजीके आराधनमे तत्पर हो वह पुरुष वैष्णव है और सज्जनोद्वारा पूजनीय हैं । आचार्यपादने इस श्लोकद्वारा वैष्णवोके आचाररूप लक्षणोंको कहा है ॥७॥

मुक्तामुक्तविभेदतो द्विविधतां याता विभिन्ना मिथो
बोद्धारः सुखबुद्धिरूपकृतभुङ्नित्या अचिन्त्याणवः ।
दासाकांक्षितवस्तुदक्षितिसुतानाथस्य दासास्तथा
प्रज्ञाप्राणशरीरतः करणतो भिन्नाः समे प्राणिनः ॥८॥

श्रीटीलाचार्यजी महाराज आठवे श्लोकद्वारा जीवोंके स्वरूपको कहते हैं—मुक्त और बद्ध भेदसे जीव दो प्रकारके हैं। सभी जीव परस्पर भिन्न हैं। अर्थात् जीव भिन्न भिन्न हैं। सर्व शरीरोमे एक ही आत्मा नहीं है। सभी जीव ज्ञाता (ज्ञानके आश्रय=ज्ञानवाले) हैं। सुखरूप ज्ञानरूप स्वकृतकर्मके भोक्ता अचिन्त्य (घटपटादिके समान चिन्तन करनेके अयोग्य) और अणुस्वरूप हैं। तथैव सभी जीव अपने दासोको अभिलषित वस्तु देनेवाले भगवान् श्रीजानकीनाथजी के दास है। बुद्धि पञ्चप्राण सूक्ष्मासूक्ष्मशरीर और एकादश इन्द्रियों से भिन्न हैं ॥८॥

सत्वाद्यायतनं विकारकरणी नित्या तथाऽचेतना
बद्धानां सुखबुद्धिहृद् रघुवराधीना जगत्सर्जने।
मायाख्या प्रकृतिः सती विकृतिभृद् यस्याः परेशेच्छया
मूलाद्या निगमान्तविन्निगदिता भेदाश्चतुर्विंशतिः ॥९॥

आचार्यपाद नवें श्लोकद्वारा प्रकृतितत्त्वका वर्णन करते हैं। विचित्र सृष्टिका हेतु होनेसे प्रकृतिको ही माया कहते हैं। यह प्रकृति सत्त्व रजस् और तमोगुणका आश्रय है। विकारोत्पादिका है। नित्य और अचेतन है। बद्ध जीवोंके (ससारचक्रपतित जीवोके) सुख और बुद्धिको हरण करनेवाली है। जगत्की सृष्टिकरनेमे श्रीरामजीके आधीन रहती है। अर्थात् केवल प्रकृति सृष्टि नही कर सकती किन्तु सर्वेश्वर भगवान् श्रीरामजीसे अधिष्ठित होकर ही प्रकृति जगत्सृष्टिमें कारण बनती है। क्योकि प्रकृति अचेतन (जड) पदार्थ है। चेतनकी सहायता बिना जडपदार्थ किसी भी कार्यको नहीं कर सकता है। इस लिये सांख्य-

मतवालोका सिद्धान्त ठीक नही है। परमेश्वर भगवान् श्रीरामजीकी इच्छासे प्रकृतिके मूलप्रकृति. महत्तत्त्व, अहङ्कार श्रोत्र त्वक् चक्षु रसना घ्राण मन वाक् पाणि पाद पायु और उपस्थ इत्यादि एकादशइन्द्रिया, आकाश वायु तेज जल और पृथिवी आदि पञ्चमहाभूत शव्द स्पर्श रूप रस और गन्ध आदि पञ्च तन्मात्रा इत्यादि चौवीस भेद वेदान्तके ज्ञानियो द्वारा कहे गये हैं ॥ ९ ॥

ध्येयो दिव्यतनुस्तथा शुभगुणाम्भोधिर्जगत्कारणं
चिद्रव्यादिविभासकः श्रुतिमतो भक्त्यैव मुक्तिप्रदः।
नित्यो ब्रह्मशिवार्चितश्च चिदचिच्छेषी परेशो विभुः
सर्वज्ञः प्रणतार्तिहृद् रघुवरः श्रीशोऽवतारी स्वराट् ॥१०॥

जगद्गुरु श्रीटीलाचार्यजी दशवे श्लोकद्वारा सर्वेश्वर भगवान् श्रीरामजीका वर्णन करते है—(मोक्ष चाहनेवालोको) दिव्य (प्राकृतविलक्षण) शरीरवाले, शुभ गुणोके समुद्र, जगत्के कारण, चित् अर्थात् चेतनस्वरूप, सूर्यचन्द्र इत्यादिकोके भी प्रकाशक, वेदोद्वारा स्वीकृत, केवल भक्तिसे ही मोक्ष देनेवाले, नित्य अर्थात् उत्पत्तिविनाशरहित, ब्रह्मा शिव इत्यादि से पूजित्त, समस्तचेतनाचेतनपदार्थोंके शेषी अर्थात् सर्व चेतनाचेतनपदार्थोंका चन्दनकुसुमादिकी तरह यथेष्ट उपयोग करनेवाले, परमेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, नमनकरनेवालोके दु.खोको हरणकरनेवाले, सर्वावतारी अर्थात् सर्व अवतारोके मूल, स्वराट् और श्रीपदवाच्य जगज्जननी श्रीजानकीजीके पति भगवान् श्रीरामजी का ही ध्यान करना चाहिये ॥ १० ॥

ईशित्री जगतोऽस्य विश्वजननी लावण्यवारांनिधि-
र्वात्सल्यादिगुणावधिः श्रितजनाभीष्टार्थदा सर्ववित् ।
ध्येया सज्जगदीशितू रघुपतेर्विभ्वी प्रिया जानकी
यत्कारुण्यदिदृक्षुणा भगवता सर्वं जगत् सृज्यते ॥११॥

एकादशवे (ग्यारहवे) श्लोकद्वारा श्रीटीलाचार्यजी जगज्जननी श्रीजानकीजीका ध्यान करनेके लिये कहते है कि—इस जगत्का नियमन करनेवाली, विश्वजननी, लावण्यसमुद्र, वात्सल्य इत्यादि शुभ गुणोकी अन्तिम मर्यादा अर्थात् जगज्जननी श्रीजानकीजीसे बढकर वात्सल्यादि गुण कही हैं ही नही, निराश्रितजनोंको इच्छित पदार्थ देनेवाली, सर्वज्ञ, विभु परिमाणवाली सत्य जगत्के नियन्ता भगवान् श्रीरामजीकी प्रिया (वल्लभा) भगवती श्रीजानकीजीका ध्यान करना चाहिये । जिनके कारुण्य (दया)को देखनेकी इच्छासे ही भगवान् श्रीरामजी सम्पूर्ण जगत्की सृष्टि करते हैं । क्योकि सृष्ट जगत्में जीव जब अत्यन्त दु.खी होते हैं तो जगज्जननी श्रीजानकीजीका उमडा हुआ कारुण्य भगवान् देखते हैं । उस समय जगन्माता श्रीजानकीजी अनेको प्रकारसे जीवोका उद्धार करती हैं ॥ ११ ॥

हृत्वा ज्ञानधनं विनाश्य समयं दत्त्वा गतिं नारकीं
दुःखानाञ्जनकास्त्यजन्ति विषयाः शब्दादयः प्राकृताः।
ये तांश्च स्वयमुत्सृजन्ति पुरुषास्ते प्राप्नुवन्ति ध्रुवं
पाथेयं खलु भक्तिधामगमने सीतापतेश्चिन्तनम् ॥१२॥

श्रीटीलाचार्यजी महाराज बारहवे श्लोकद्वारा वैराग्यका उपदेश करते हैं कि दु खोके उत्पादक प्राकृत शब्दस्पर्शरसादि विषय ज्ञानरूपी

धनका हरण करके, समयको नष्ट करके और नारकी (नरककी) गतिको देकर विषयी पुरुषको छोड देते है। किन्तु जो पुरुष स्वय ही उन शब्दस्पर्शरूपरसादि विषयोका त्याग कर देते हैं वे मुक्तिके धाम (परात्पर श्रीसाकेतधाम) के गमनमे पाथेयरूप श्रीसीतानाथ भगवान् श्रीरामजीके तैलधारावत् विच्छेदरहित चिन्तन अर्थात् पराभक्तिको पाते है। अर्थात् मोक्षके एकमात्र साधन भक्तिको वैराग्यवान् पुरुष ही पा सकते है विषयी पुरुष नही ॥ १२ ॥

जज्ञश्चाङ्गकृतिः श्रुतिप्रवचनं कान्तारगं रोदनं
पूर्त्त कर्म न शर्मणे भवति सत्तीर्थं न तीर्थायते।
सायुज्यप्रसवां शराङ्गरचितां यस्य प्रपत्तिं विना
स त्रैलोक्यनियामकः कमलदृक् सीतापतिः पातु नः ॥१३॥

तेरहवे श्लोकमे आचार्यपाद श्रीरामशरणागतिके माहात्म्यका उपदेश करते हैं कि सायुज्य मुक्ति देनेवाली आनुकूल्यसङ्कल्प, प्रातिकूल्यपरित्याग, रक्षणमे विश्वास, रक्षण करनेके लिये प्रार्थना और दैन्य आदि पञ्च अङ्गोवाली आत्मनिक्षेपरूप जिनकी प्रपत्ति (शरणागति) के विना यज्ञ अङ्गकृति और वेदप्रवचन अरण्यरुदन होते हैं, पूर्त्तकर्म अर्थात् तालाब कुआ इत्यादि खुदवाना आदिकर्म कल्याण देनेवाले नही होते तथा सत्तीर्थ तीर्थफल नही देते है। लोकत्रयनियन्ता कमलके समान नेत्रोवाले वे भगवान् श्रीसीतानाथजी हम सबकी रक्षा करे ॥१३॥

स्वाध्यायः समधीयतामुपकृतिः कार्याऽनृतं नोच्यतां
हिंसा नैव विधीयतामसुमतां शीतादिकं सह्यताम्।

सत्सङ्गः क्रियतां तथा सुकृतिभिःकाम्या कृतिस्त्यज्यतां
पापेभ्यश्च विरम्यतामसुखहृद् रामः समाश्रीयताम् ॥१४॥

वेद, उपनिषद गीता और ब्रह्मसूत्र आदि प्रस्थानत्रय और इनके स्वसाम्प्रदायिक भाष्य, नारदपञ्चरात्र, रामायण, महाभारत सात्विक पुराण तथा मन्वादि धर्मशास्त्र साम्प्रदायिक भगवत्स्तोत्र और श्री वैष्णव-मताब्जभास्करादि आचार्यप्रवन्ध तथा तारकमन्त्रराज षडक्षर श्रीराममन्त्रार्थ इत्यादिको स्वाध्याय कहते है । स्वाध्याय अध्ययन करना चाहिये । उपकार करना चाहिये । असत्य नही बोलना चाहिये । जीवोकी हिसा नही करनी चाहिये । शीतोष्णादि द्वन्द्वोको सहन करना चाहिये । सत्सङ्ग करना चाहिये । तथा पुण्यशाली पुरुषोको सकामकर्म त्याग देना चाहिये । पापोंको छोड देना चाहिये और दु.खोके हरण करनेवाले भगवान् श्रीरामजीका आश्रय लेना चाहिये । अर्थात् भगवान् श्रीरामजीकी शरणमें जाना चाहिये ॥ १४ ॥

आनन्दो विधितो जनैरधिगतः स्वानन्दवन्मन्यतां
दुःखानाञ्जनकं निजेन विहितं पापं समाबुध्यताम् ।
सम्पत्तौ तु कृपाम्बुधे रघुपतेर्हेतुः कृपाऽहेतुकी
सीतारामसमर्पितश्च सकलं लोके सदा भुज्यताम् ॥१५॥

दैवयोग से पायेहुए लोगोंके आनन्दको अपने ही आनन्दके समान समझना चाहिये । अर्थात् परसुखमें सुखी होना चाहिये । अपने कियेहुए पापको ही अपने दु खोंका उत्पादक समझना चाहिये । अर्थात् अमुक पुरुषने हमको दु.ख दिया है यह समझकर उसका शत्रु न बनना चाहिये । क्योकि दु खके कारण तो अपने पाप ही

होते हैं। सम्पत्तिमे हेतु तो कृपासिन्धु भगवान् श्रीरामजीकी अहेतुकी कृपाको समझना चाहिये। क्योकि भगवान् श्रीरामजीकी कृपासे ही सम्पूर्ण पुरुषार्थ सफल होते है। लोकमे सम्पूर्ण पदार्थ भगवान् श्रीसीता-रामजीको समर्पित करके ही भोगना चाहिये। अर्थात् भगवान् श्री सीतारामजीको अर्पित किये बिना किसी भी वस्तुका उपभोग न करना चाहिये ॥ १५ ॥

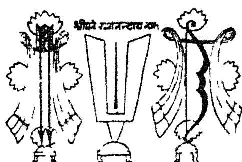
मुक्तिर्यद्भजनादृते भवति नो, यागादिना कर्मणा
यं ज्ञातुञ्च समाश्रयन्ति विबुधा आचार्यपादाम्बुजम् ।
विश्वस्याश्रयभूरचिन्त्यमहिमा स्वीये महिम्न स्थितः
पुर्णं ब्रह्म स पातु भक्तसुखदः सर्वेश्वरो राघवः ॥१६॥

जिनके भजनके बिना केवल योगादि कर्मों से ही मुक्ति नही होती है, और जिन्हे जाननेके लिये बुद्धिमान् लोग आचार्यचरणकम-लका समाश्रयण करते हैं, सम्पूर्ण विश्वके आश्रय अचिन्त्य महिमावाले केवल अपनी महिमामे ही स्थित और भक्तोको सुखदेनेवाले वे पूर्णब्रह्म सर्वेश्वर भगवान् श्रीरामजी हमारी रक्षा करे ॥ १६ ॥

टीलाचार्यकृतश्चायं सत्प्रबोधकलानिधिः ।
संसारतापहा भूयात् सीतारामप्रसादतः ॥

द्वारपीठाचार्य श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीटीलाचार्यजीका बनाया हुआ सुन्दर यह प्रबोधकलानिधिनामक प्रबन्ध श्रीसीतारामजीकी कृपासे संसारतापको नाश करनेवाला हो।

श्री सीतारामाभ्यां नम ।



आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम ।
जगद्गुरु श्रीटीलाचार्याय नम । जगद्गुरु श्रीमङ्गलाचार्याय नम ।
उपनिषद्भाष्यकार स्वामीश्रीवैष्णवाचार्य
वेदान्ततीर्थप्रणीत

श्रीवैष्णवशिक्षामृत

अथवा

शिक्षाषोडशी

(श्रीप्रबोधकलानिधिकी पद्यात्मक टीका)

राम आदि आचार्य, नमि वैष्णवजन बोधहित ।
स्वामि वैष्णवाचार्य, वैष्णवशिक्षामृत रचत ॥

राम परात्पर ब्रह्म रामही सब जगकारक ।
राम बिना गति नहीं रामही यमभय हारक ॥
नमस्कार शुभ करो रामहीको सब नित नित ।
विश्व रामसे उदित रामहीके वश संस्थित ॥
रामचन्द्रमें स्थित जगत् लीन होयगा राममें ।
कहिये "रक्षहु राम तुम पडे तुम्हारे पाँवमें" ॥१॥

रसने कीर्त्तन योग्य रामका कीर्त्तन करिये ।
हे मेरे दोउ श्रवण ! रामका चरितहि सुनिये ॥
हे दोनो कर ! मोक्षदानि रामार्चन करिये ।
प्रिय मेरे युग नयन ! रामको निरखत रहिये ॥
शुभचिन्तक मम चित्त नित रामचन्द्र चिन्तन करहु ।
घ्राण रामपदतुलसिका सूंघहु, शिर रामहिं नमहु ॥२॥
सर्वेश्वर गुणसिन्धु रामसे तत्त्व नहीं पर ।
राघवभक्ति प्रपत्ति छोडि गति नहीं मुक्तिकर ॥
युक्तियुक्त श्रुतिसिद्ध दोषबिन सब संशय हर ।
भव्य विशिष्टाद्वैत सदृश मत नहीं कोइ पर ॥
राम नामसे और नहिं कीर्त्तन करने योग्य पर ।
जन्म मरण चक्कर पडे जीव वृन्दका मोक्षकर ॥३॥
विधि ब्राह्मी शसि सूर्य वरुण यम औ सुरनायक ।
शिव शिव-तिय गणनायक औ सुरसेनानायक ॥
अनल अनिल इत्यादि विबुध पन्नग दिग्नागहु ।
सिद्ध यक्षगण दनुज महादुःखद मनुजादहु ॥
उन अपराधी जननके रक्षणमें न समर्थ हैं ।
रामचन्द्र पदपद्मके जो जन वैरहि अर्थ हैं ॥४॥
निगमागमगणअभिहित वैष्णव धर्महि गहिये ।
वैष्णव बनि जनसहित रामसिय पूजन करिये ॥
मानहु सुखकर भव्य सकल युक्तिनसे भूषित ।
वेदान्त प्रतिपादित औ नहिं दूषण दूषित ॥

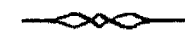
सुभग विशिष्टाद्वैत मत रामानन्दाचार्यका ।
समझे भावत मत नही और किसी आचार्यका ॥५॥
भुजामूल श्रीराम धनुपशर अंकित सोहत ।
उर्ध्वपुण्ड्र सितमध्य लालश्री मनको मोहत ॥
तनुमें द्वादश तिलक चमकते जनु नभ-तारक ।
ग्रीवा तुलसी लसित सुजन पूजित कुलतारक ॥
वैष्णवतारक मन्त्रले जगसे रहत उदास हैं ।
सियारामके दास वनि वनत न मायादास हैं ॥६॥
सदय हृदय अम्भोज मध्य सीतापति भ्राजैं ।
तथा जीव गुरु सन्त धर्म अनुराग विराजैं ॥
रघुवर निष्ठा राखि जीवहित चिन्तत रहते ।
शुचि हरिवासर आदि व्रतनका पालन करते ॥
रामचन्द्र पूजत तथा रामनाम-कीर्त्तन करत ।
सज्जनगण पूजित सदा वैष्णव जन जन-अघ हरत ॥७॥
ज्ञाता अणु चिद् रूप तथा सुखरूप जीवगण ।
कर्त्ता भोक्ता रूप नित्य रघुनायकके तन ॥
इन्द्रियगणसे भिन्न प्राण तन बुद्धिहुसे पर ।
बद्ध मुक्त दो भेद, एक नहिं, भिन्न परस्पर ॥
ब्रह्म नहीं, पर जीव सब सीतापति के दास है ।
सियपति सोई करत जो दास करत अभिलाष हैं ॥८॥
सत् है करति विकार विकारी नित्य अचेतन ।
मायानामक प्रकृति सूक्ष्म औ स्थूल ईश-तन ॥

हरति गुणत्रय शालि बद्ध जीवनकी सुखमति।
राम अधिष्ठित होति प्रकृति तब जगको सिरजति ॥
वेदान्ती जन कहत जब अभिलाषत जगदीश हैं।
होत मूल महदादि तब प्रकृति-भेद चौवीस हैं ॥९॥
दिव्य देह गुणसिन्धु ध्यान धरनेके लायक।
ब्रह्मशिवार्चित जगत्पिता श्रुतिमत रघुनायक ॥
अवतारी सुखरूप भक्तिसे मुक्तिप्रदाता।
नित्य अचित्चिद् व्याप्त सकलशेषी सुखदाता ॥
विभु स्वराट् चिद्रूप औ भास्करादि-अवभासकर।
सर्वेश्वर सर्वज्ञ नित सीतावर प्रणतार्तिहर ॥१०॥
मर्यादा वात्सल्य आदि शुभ गुण गणकी है।
जगदीश्वर विभु प्रिया जानकी जगजननी हैं ॥
ध्यान योग्य हैं आश्रित जन अभिलाषा पूरैं।
दुखी जननको दुखी देखि ह्वै दुखी विसूरैं ॥
लावण्यार्णव सर्ववित् सर्वजगत् नियमन करत।
जिनकी करुणा लखन जग करुणाकर रघुवर सृजत ॥११॥
शब्दरूप रस आदि जगत्में विषय प्रकाशत।
सब प्राकृत दुखजनक मनुजका सर्वस नाशत ॥
ज्ञानीका धन ज्ञान, विषय तस्कर तेहि हरते।
विषयीको दे नरक विषयगण आपहि तजते ॥
मुक्तिधामके गमनका सो पावत पाथेय जन।
चिन्तन सीतानाथका, स्वयं तजत जो विषयगण ॥१२॥

छोडे रघुवर शरण, करति जो मुक्ति सुहावन ।
तीर्थ तीर्थगुण छोडि न करते जनमन पावन ॥
यज्ञ अज्ञकृति होत पूर्त्त मंगल नहिं करते ।
वेद अर्थ के कथन विजन बन गेदन बनते ॥
नीलकमलतन कमलदृग् दया कमलहियमें धरैं ।
सर्वनियामक सर्वपति सीतापति रक्षा करैं ॥१३॥
स्वाध्याय नित करहु सुजन ! मिथ्यासे बचिये ।
मधुर सत्य हित कहहु जीव-हिंसा नहिं करिये ॥
करिये पर उपकार पापसे बचते रहिये ।
शीत उष्ण इत्यादि द्वन्द्वको जगमें सहिये ॥
काम्य कर्मका त्याग करि सन्तनकी सगति करहु ।
दुःख हरन औ सुखकरन सीतापति-आश्रित बनहु ॥१४॥
राम कृपासे मिला हुआ यदि पर सुख देखहु ।
मनमें करहु न डाह उसे निज सुखसम लेखहु ॥
पूर्व जन्मके पापवृन्दका फल है निज-दुख ।
दैव छोडिके और न कोई करता जन-दुख ॥
कृपा जलधि सम्पति करैं राम कृपा बिनहेतु करि ।
योग्यहि भोगहु भोग सब सीतापतिको भोग धरि ॥१५॥
भजन विना नहिं मुक्ति, याग आदिक कर्मनसे ।
मुक्ति होति यदि कर्म नष्ट हों राम भजनसे ॥
सर्वाश्रय हैं राम नित्य निज महिमा संस्थित ।
बुध जेहि जानन हेत होत गुरु पदपद्माश्रित ॥

पर ब्रह्म परिपूर्ण हैं सर्वेश्वर सब मन हरैं।
सुखदायक निज भक्तके, रघुनायक रक्षा करैं ॥१६॥

स्वामि वैष्णवाचार्यकृत शिक्षामृत लहि लोग।
मृत्यु जीति भोगै रुचिर रामधाम सुखभोग ॥



श्रीजानकीवल्लभो विजयतेतराम्।
आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नम।
श्री ११०८ जगद्गुरु श्रीअनन्तानन्दाचार्य विरचित

अनन्तशिक्षामृत

अथवा

शिक्षाद्वादशी

रामानन्दहिं नमि रचत शिक्षामृतहि अनन्त।
पढि सुनि तथा सुनाइके सुख पैहै सब सन्त ॥

सिय सियवर वर चरणकमलयुत थल निज जानै।
शुभ स्वदेश साकेत परात्पर दिव्य बखानै ॥
अवधपुरी निजपुरी गुनै सुखजननीवर्या।
परम रम्य निजवृत्ति सिया रघुवर परिचर्या ॥१॥
जनक जानकीनाथ जानकी जननी सुन्दर।
भक्ति निरत भागवत बन्धु निज जानै हितकर ॥
सब तजि नित नित करै राम—कैंकर्य सुहावन।
पावन कीर्त्तन करै रामसिय मुनि मन भावन ॥२॥

मिय सियवर गुरु सन्त चरण भवजलनिधि तारक।
चारु चारि कैंकर्य कुमति ममता मद हारक॥
गुरु निष्ठा गुरु गहै तुच्छ जग–आस तजै सब।
सिय सियपति कैंकर्य हेत उद्योग करै सब॥३॥

करि वैष्णवअभिमान सतत परिचर्या मागै।
उत्तम चरम उपाय ताहि महं नित चित पागै॥
सब मति जात हेराय लगत जब यमके कोडे।
अतः अधमपथ त्यागि धर्म–पथ महं चित जोडै॥४॥

राम परकसे अन्य शास्त्रकी चिन्ता छोडै।
श्रीरामायण पुनि पुनि चिन्तै वेद निचोडै॥
राममंत्र जपि भाष्ययुक्त प्रस्थान विचारै।
तथा अन्य स्वाचार्य ग्रन्थ नित उर महं धारै॥५॥

राज भवन–सुख अजा–चरावन हार न जानत।
भक्ति शून्य नर भक्ति सुखहिं तिमि सुने न मानत॥
रामरसिकही रामरसिककी दशा लख सब।
शाक वणिक् मणि माणिक गण पहिचानि सकैं कब? ॥६॥

साधु साधना–भंग करत नहिं निरखि यमहुको।
धर्म देश हित तजत देह धन प्राण जनहुको॥
सन्तत पर-उपकारनिरत उपरत विषयनसों।
कांचन कामिनि मान अधर्महि लखत भुजगसों॥७॥

लखि परसुख हों सुखी दुखी परदुखहिं निरखि अति ।
करत धर्म-उपदेश स्वयं आचरत विमलमति ॥
तजत बडाई मान भजत सिय रघुवर सुखकर ।
रसद रसालसमान बनत अहितहुके हितकर ॥८॥

सन्त तथा स्वाचार्य उभय महं भेद न मानै ।
उभयवचन पीयूष सदा निज हितकर जानै ॥
करै उभयकैंकर्य प्रेमयुत तन मन धनसे ।
करै वैष्णवाचरण जगत् महं उभय वचनसे ॥९॥

मधुर वाद्य संग मधुर मधुर सुर नर मुनि भावन ।
सियाराम युत करै उभय कीर्त्तन जग पावन ॥
उभय-रचनसे जागि विषय विष पुनः न पीवै ।
सिय रघुवर गुरु भक्त चरित नित सुनि सुनि जीवै ॥१०॥

प्राण पखेरू उडन हेत कर ते नित फर फर ।
दशहु द्वार पुनि खुले अबल तनु पिंजरा जर्जर ॥
लिये काल करवाल शिखा धरि करत आतुरी ।
तुरत भजहु सियराम सकल तजि कला चातुरी ॥११॥

राम नाम पीयूष पियहु यम-भय मिटि जावै ।
चौरासी-दुख जाय पुनः संसृति नहिं आवै ॥
श्रीअनन्तचित चेत भजनकी बीतत बेला ।
छोडि जगत्-जंजाल अन्त जिय जात अकेला ॥१२॥



आचार्यशिरोमणि श्री १९०८ गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी

महाराज विरचित श्रीरामचरितमानसमें

श्रीरामतत्त्व

(श्रीकागभुशुंडिजीका वचन श्रीगरुडजीके प्रति)

निज अनुभव अब कहउँ खगेशा। बिन हरि भजन न जाहिं कलेशा ॥
रामकृपा बिन सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई ॥
जाने बिन न होइ परतीती। बिन परतीति होइ नहिं प्रीती ॥
प्रीति बिना नहिं भगति दृढाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई ॥

सो०—बिनगुरु होइ कि ज्ञान ज्ञान कि होइ बिराग बिन।
गावहिं वेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भक्ति बिन ॥८९(क)॥
कोउ विश्राम कि पाव तात सहज सतोष बिन।
चलै कि जल बिन नाव कोटि यतन पचि पचि मरिअ ॥८९(ख)॥

बिन सतोष न काम नशाही। काम अछत सुख सपनेहु नाही ॥
रामभजन बिन मिटहिं कि कामा। थल विहीन तरु कबहुँ कि जामा ॥
बिन विज्ञान कि समता आवै। कोउ अवकाश कि नभ बिन पावै ॥
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई। बिन महि गध कि पावइ कोई ॥
बिन तप तेज कि कर विस्तारा। जल बिन रस कि होइ ससारा ॥
शील कि मिल बिन बुध सेवकाई। जिमि बिन तेज न रूप गोसाई ॥

निज सुख बिन मन होइ कि थीरा। परस कि होइ विहीन समीरा ॥
कवनिउ सिद्धि कि बिन विश्वासा। बिन हरिभजन न भव भय नाशा ॥

दो०—बिन विश्वास भगति नहि तेहि बिन द्रवहि न राम ।
रामकृपा बिन सपनेहु जीव न लह विश्राम ॥९०(क)॥

सो०—अस बिचारि मतिधीर तजि कुतर्क सशय सकल ।
भजहु राम रघुवीर करुणाकर सुदर सुखद ॥९०(ख)॥

निज मति सरिस नाथ मै गाई । प्रभुप्रताप महिमा खगराई ॥
कहेउँ न कछु करि युक्ति विशेषी। यह सब मै निज नयनन देखी ॥
महिमा नाम रूप गुण गाथा । सकल अमित अनत रघुनाथा ॥
निज निज मति मुनि हरि गुणगावहि । निगम शेष शिव पार न पावहि ॥
तुमहि आदि खग मशक प्रयन्ता । नभ उडाहि नहि पावहि अन्ता ॥
तिमि रघुपति महिमा अवगाहा । तात कबहुँ कोउ पाव कि थाहा ॥
राम काम शत कोटि सुभग तन । दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन ॥
शक्र कोटि शत सरिस विलासा। नभ शत कोटि अमित अवकाशा ॥

दो०—मरुत कोटि शत विपुल वल रवि शत कोटि प्रकाश ।
शसि शत कोटि सुशीतल शमन सकल भव त्रास ॥९१(क)॥
काल कोटि शत सरिस अति दुस्तर दुर्ग दुरन्त ।
धूमकेतु शत कोटि सम दुराधर्ष भगवन्त ॥९१(ख)॥

प्रभु अगाध शत कोटि पताला । समन कोटि शत सरिस कराला ॥
तीरथ अमित कोटि सम पावन । नाम अखिल अघ पूग नसावन ॥

हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा । सिधु कोटि शत सम गम्भीरा ॥
कामधेनु शत कोटि समाना । सकल काम दायक भगवाना ॥
शारद कोटि अमित चतुराई । विधि शत कोटि सृष्टि निपुणाई ॥
विष्णु कोटि शम पालन कर्ता । रुद्र कोटि शत सम संहर्ता ॥
धनद कोटि शतसम धनवाना । माया कोटि प्रपच निधाना ॥
भार धरन शत कोटि अहीशा । निरवधि निरुपम प्रभु जगदीशा ॥

छ०—निरुपम न उपमा आन राम समान राम निगम कहै ।
जिमि कोटि शत खद्योत सम रवि कहत अति लघुता लहै॥
एहि भाँति निज निज मतिविलास मुनीश हरिहि बखानही।
प्रभु भाव गाहक अति कृपाल सप्रेम सुनि सुख मानही ॥

दो०—राम अमित गुणसागर थाह कि पावइ कोइ ।
सतन सन जस कुछ सुनेउँ तुमहि सुनायउँ सोइ ॥९२(क)॥

सो०—भाववश्य भगवान सुखनिधान करुणाभवन ।
तजि ममता मद मान भजिय सदा सीतारमण ॥९२(ख)॥



श्रीबोधायनपञ्चकम्

सीताराघवपादपद्मनिरतः पद्मासनेनास्थित-
स्तत्त्वज्ञाननिधिस्त्रिदण्डलसितो विज्ञानमुद्राधरः ।
गौरो ध्यानपरायणोऽर्धविकसन्नीलाब्जतुल्येक्षणः
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्द्विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥१॥

योगत्यक्तकषायशुद्धहृदयः काषायवर्णाम्बरो
न्यग्रोधस्य तले वशिष्ठतनयामूले कुरङ्गत्वचि ।
आसीनः सुशिखोर्ध्वपुण्ड्रलसितो यज्ञोपवीती शमी
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्द्विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥२॥

पार्श्वे भाति शुभं कमण्डलु तथा दूर्वान्विता भूमिका
मीमांसार्थविकासिनी सुमहती वृत्तिः पुरो यस्य सः ।
सद्वायुव्यजनैस्तथा च तरुभिः पुष्पैः समासेवितः
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्द्विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥३॥

रामो ब्रह्म परात्परं श्रुतिमतं भक्त्यैव निःश्रेयसं
शेषा येन च शेषिणो रघुपतेर्जीवा इति स्वीकृतम् ।
श्रौत युक्तियुतं मतं खलु विशिष्टाद्वैतकं यस्य स
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्द्विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥४॥

मन्त्रो रामषडक्षरः शुकमुनेर्वैयासिकेर्योऽलभद्
ग्रीवायां तुलसीस्रजौ च परितो भास्वत्प्रभामण्डलम् ।
आचार्यः पुरुषोत्तमः सदपरं यस्याभिधेयं हि स
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्द्विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥५॥

बोधायनप्रशिष्यश्रीसदानन्दार्यनिर्मितम् ।
पठतां पञ्चकञ्चैतद् भूयाच्छ्रेयोविधायकम् ॥६॥

आनन्दभाष्यकार श्री १००८ जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्य प्रणीतः

श्रीरामानन्दवेदान्तसारः

(वेदान्तचतुःश्लोकी)

मुख्यानामेकमाद्यं त्रिकमपि शृणु तद्भेदतो नामभेदै-
र्नित्याऽज्ञाऽचेतना सा प्रकृतिरविकृतिर्विश्वयोनिः शुभैका ।
नाना वर्णात्मकाऽजा त्रिगुणसुनिलयाऽव्यक्तशब्दाभिधेया
नित्यापारा परार्था महदहमितिसृज्यते तत्त्वविद्भिः ॥१॥

नित्योऽज्ञश्चेतनोऽजः सततपरवशः सूक्ष्मतोऽत्यन्तसूक्ष्मो,
भिन्नो बद्धादिभेदैः प्रतिकुणपसमो नैकधा सृष्टिरूपः ।
श्रीशाकान्तालयस्थो निजकृतिफलभुक् तन्महायोऽभिमानी
जीवः संप्रोच्यते श्रीहरिपदसुमते तत्त्वजिज्ञासुवेद्यः ॥२॥

विश्वं जातं यतोऽद्धा यदवितमखिलं लीनमप्यस्ति यस्मिन्
सूर्यो यत्तेजसेन्दुः सकलमविरतं भासयन्त्येतदेषः ।
यद्भीत्या वाति वातोऽग्निरपि सुतलं याति नैवेश्वरो ज्ञः
साक्षी कूटस्थ एको बहुशुभगुणवानव्ययो विश्वभर्ता ॥३॥

श्रीमानर्च्यः शरण्यो बहुविधविबुधैर्योगिगम्यांह्रिपद्मोऽ
स्तुत्यः कृशादिभिः सत्समुदितसुयशाः सूरिमान्यो वदान्यः ।
शश्वच्छ्रीरामचन्द्रः सुमहितमहिमा साधुवेदैरशेषै-
र्निर्मृत्युः सर्वशक्तिर्विकलुषविजरोगीर्मनोभ्यामगम्यः ॥४॥